वर्ष : 3, अंक : 9-10 (संयुक्तांक)

जनवरी-जून 2019

हिन्दुस्तानी भाषा भारती

(भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार और संवर्धन को समर्पित त्रैमासिक पत्रिका)

"हिंदी हैं हम"

हिन्दी भाषा का महाकुम्भ

मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान

जड़ों को सींचने से बढ़ेगी हिन्दी

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी

निजभाषोन्नतौ राष्ट्रोन्नतिः

विशेष :

पूर्वोत्तर भारत का भाषिक परिदृश्य और हिन्दी

मैथिली भाषा साहित्य, लोक कला तथा हिन्दी की स्थिति

वर्ष : 3, अंक : 9-10 (संयुक्तांक)

हिन्दुस्तानी भाषा भारती

मूल्य : 30 रुपये

(भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार और संवर्धन को समर्पित त्रैमासिक पत्रिका)

सम्पादक
सुधाकर बाबू पाठक

कार्यकारी सम्पादक : **डॉ. रमेश तिवारी**
प्रबन्ध सम्पादक : **सविता चड्ढा**
सह सम्पादक : **विजय कुमार शर्मा**
: **सागर समीप**
उप सम्पादक : **राजकुमार श्रेष्ठ**
: **डॉ. बीना राघव**
प्रवक्ता : **बृजेश द्विवेदी**
कानूनी सलाहकार : **अमरनाथ गिरि**
वित्तीय सलाहकार : **राम सिंह मेहता**

सम्पादकीय सहयोग
सुरेखा शर्मा, सरोज शर्मा, सीमा सिंह, डॉ. विदुषी शर्मा

पत्रिका प्रसार एवं प्रबंधन
हामिद खान, भूपिंद्र सेठी

कार्यालय :
हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी
3675, राजा पार्क, रानी बाग, दिल्ली-110034
ई-मेल : info@hindustanibhashaakadami.com
hindustanibhashabharati@gmail.com
वेबसाइट : www.hindustanibhashaakadami.com
सम्पर्क सूत्र : 09873556781, 09968097816

- पत्रिका में प्रकाशित लेखों में लेखकों के अपने विचार हैं । प्रकाशक का इनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है ।
- सभी विवादों का निपटारा दिल्ली/नई दिल्ली की सीमा में आने वाली सक्षम अदालतों और फोरमों में ही किया जाएगा ।
- सम्पादन एवं संचालन पूर्णत: अवैतनिक और अव्यावसायिक है ।

प्रकाशक, सम्पादक व मुद्रक सुधाकर बाबू पाठक द्वारा स्वामी हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी ट्रस्ट, 3675, राजा पार्क, शकूर बस्ती, दिल्ली-110034 के लिए प्रकाशित और सन्नी प्रिन्टर्स, बी-234, नारायणा इन्डस्ट्रियल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110028 से मुद्रित ।

विषय सूची

सम्पादकीय : जड़ों को सींचने से बढ़ेगी हिन्दी- सुधाकर पाठक 04
विशेष रिपोर्ट : 'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह' 06
साक्षात्कार : महामहिम श्री योगेश पुंजा, राजदूत, फिजी गणराज्य 10
शिष्टाचार भेंट : महामहिम श्री नीलांबर आचार्य, राजदूत, नेपाल 13
साक्षात्कार : श्री सुरेन्द्र शर्मा, उपाध्यक्ष, हिन्दी अकादमी, दिल्ली 14
शुभकामनाएँ : माननीय श्री प्रहलाद पटेल, केन्द्रीय संस्कृति एवं पर्यटन मंत्री 18
साक्षात्कार : डॉ. रामशरण गौड़, अध्यक्ष, दिल्ली लाइब्रेरी बोर्ड 19
हिन्दी अकादमियों से सम्मानित सभी लोग नहीं हैं हिन्दी सेवी ! - आर.के. सिन्हा 22
हिन्दी भाषा की स्थिति और साहित्य की घटती पठनीयता- राजकुमार श्रेष्ठ 24
पूर्वोत्तर भारत की लोकभाषाएँ और हिन्दी- डॉ. वीरेन्द्र परमार 26
पूर्वोत्तर भारत का भाषिक परिदृश्य और हिन्दी- डॉ. कृष्ण कुमार गोस्वामी 30
प्रतिनिधि कॉकबरक उपन्यास: परिचयात्मक विश्लेषण-डॉ. मिलनरानी जमातिया 32
एशिया का सर्वोच्च भाषाई वैविध्यवाला क्षेत्र-अरुणाचल प्रदेश- मुनीन्द्र मिश्र 39
प्रारम्भिक शिक्षा में मातृभाषा बनाम अँग्रेजी- अजीत मोहन्ती 44
हिन्दी : राजभाषा व राष्ट्रभाषा के रूप में- प्रो. शरद नारायण खरे 47
वैद्यनाथ मिश्र : मैथिली साहित्य के 'यात्री' और 'हिन्दी'....- डॉ. श्वेता दीप्ति 49
मैथिली साहित्य और संस्कृति- श्रीमती पूनम झा 51
मिथिला संस्कृति के दो महत्वपूर्ण पर्व वट सावित्री, मधुश्रावणी-श्रीमती अंशु झा 54
वैश्विक धरातल पर हिन्दी का प्रसार तथा उपादेयता- शंकर लाल माहेश्वरी 56
हिन्दी भाषा राष्ट्र की आशा- डॉ. कान्ति लाल यादव 58
मिथिला चित्रकला- डॉ. ध्रुव मिश्रा 60
हिन्दी का अन्य भाषाओं के साथ सम्बन्ध और सरोकार.. -डॉ. कैलाश कुमार मिश्र 61
विश्वव्यापी राष्ट्रभाषा हिन्दी की दशा व दिशा- सुरेन्द्र माहेश्वरी 64
साक्षरता के बदलते परिवेश- विजय कनौजिया 66

आगामी आयोजन
'बुंदेली लोक-कला-राग महोत्सव' 67
'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान' 68

रिपोर्ट
हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी से प्रकाशित पुस्तकों का लोकार्पण समारोह 69
विचार गोष्ठी : शिक्षा का माध्यम और संस्कृति 70
संगोष्ठी : हिन्दी समाचार माध्यमों में भाषा की स्थिति 71

संस्मरण
मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह- तरुणा पुण्डीर 72
मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह- सरिता गुप्ता 73
मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह- सोनिया अरोड़ा 74

सम्पादकीय

जड़ों को सींचने से बढ़ेगी हिन्दी

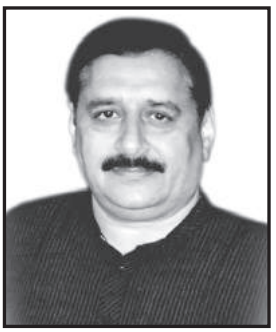

सुधाकर पाठक
सम्पादक एवं अध्यक्ष,
हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी

6 मई, 2019 का दिन मेरे लिए बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि इस दिन केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, दिल्ली की 10वीं कक्षा का परिणाम घोषित हुआ है । यह परिणाम मेरे लिए बहुत खास है क्योंकि यह मेरे लिए अपार खुशियाँ लेकर आया है । उस दिन सुबह से ही मेरे पास उन बच्चों के, उनके अभिभावकों के और शिक्षकों के लगातार फोन आ रहे हैं जिन्होने इस परीक्षा में हिन्दी विषय में 90% से अधिक अंक प्राप्त किए हैं । सभी जानना चाहते थे कि इस वर्ष हिन्दी भाषा के 'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान' योजना के फार्म कब से मिलने शुरू होंगे ? इनमें कुछ ऐसे शिक्षक भी थे जिनके विद्यालय की ओर से पिछले वर्ष इस योजना में प्रविष्टियाँ नहीं भेजी गईं थीं या उन्हें इस योजना की जानकारी नहीं मिली थी या सूचना तिथि निकलने के बाद मिली थी। कुछ विद्यालयों ने इस योजना में सहभागिता हेतु कोई रुचि नहीं ली थी । कई विद्यालयों में हमने व्यक्तिगत स्तर पर संपर्क करने की कोशिश की लेकिन हमें इसके लिए अनुमति तक नहीं मिल पाई थी। अलग-अलग स्तर पर इसके लिए हमें सहयोग मिलना तो दूर, हमारे मनोबल को गिराने वाली कई घटनाएँ हुईं । एक स्ववित्तपोषित निजी संस्था के रूप में कार्य करते हुए कई तरह के कटु अनुभव हुए जिंनका यहाँ उल्लेख करना उचित नहीं होगा ।

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी ने पिछले कुछ वर्षों से एक योजना घोषित की हुई है जिसके अंतर्गत प्रत्येक वर्ष हिन्दी विषय में उत्कृष्ट अंक लाने वाले विद्यार्थियों के साथ उनके हिन्दी विषय के शिक्षकों को भी सम्मानित किया जाता है । पहले यह योजना केवल दिल्ली प्रदेश के बच्चों के लिए थी लेकिन पिछले वर्ष इसे गुरुग्राम (हरियाणा) और गाजियाबाद (उत्तर प्रदेश) में भी घोषित किया गया था । पिछले वर्ष दिल्ली प्रदेश के लिए हुए इस आयोजन में इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, नई दिल्ली के सहयोग से कला केंद्र के विशाल प्रांगण में कुल 1725 विद्यार्थियों और लगभग 300 शिक्षकों को देश के वरिष्ठ साहित्यकारों और गणमान्य अतिथियों द्वारा सम्मानित किया गया था । 2500 से अधिक के जनसमूह, जिसमें विद्यार्थी, शिक्षक, अभिभावक और हिन्दी प्रेमी सम्मलित थे । इस आयोजन के मुख्य अतिथि फिजी गणराज्य के राजदूत महामहिम श्री योगेश पुंजा जी, डॉ. वेद प्रताप वैदिक, डॉ. कमल किशोर गोयनका, प्रो. अवनीश कुमार, डॉ. अशोक चक्रधर और अन्य अतिथियों ने इस समारोह को 'हिन्दी कुम्भ' कहा था । इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के सदस्य सचिव डॉ. सच्चिदानंद जोशी के विशेष सहयोग से हम इस कार्यक्रम को इतना भव्य स्वरूप से कर पाये । इसी तरह के आयोजन गुरुग्राम और गाजियाबाद में भी किए गए थे । 10वीं कक्षा के परिणाम के बाद जो लगातार फोन आ रहे हैं वह इसी योजना और भव्य आयोजन का सुखद परिणाम है ।

यह विचारणीय और अनुकरणीय विषय है कि अगर उद्देश्य पवित्र है तो कोई कार्य कठिन नहीं होता, एक निजी संस्था द्वारा अपने सीमित संसाधनों से इस तरह के आयोजन के इतने सुखद परिणाम भी आ सकते हैं । बच्चों को अपनी भाषा से जोड़ने और उनमें हिन्दी के प्रति सम्मान पैदा करने के लिए इस तरह की योजनाओं को युद्ध स्तर पर चलाया जाना चाहिए और सरकारों को इसमें सहयोग करना चाहिए । इसमें मुख्य बात यह है कि परिणाम घोषित होने के बाद से जो फोन आ रहे हैं वह उन बच्चों के हैं जो पिछले वर्ष 9वीं कक्षा में थे और जिन्होने शायद अपने से वरिष्ठ साथियों को सम्मानित होते हुए देखा होगा । विभिन्न विद्यालयों के शिक्षकों ने हमें बताया है कि अकादमी के इस आयोजन के बाद उनके विद्यालयों में भी अलग-अलग समारोह आयोजित किए गए और इस उपलब्धि पर उन सम्मानित हुए विद्यार्थियों और शिक्षकों को पूरे स्कूल के समक्ष पुनः विद्यालय स्तर पर सम्मानित किया गया और बधाई दी गई । इसका सकारात्मक प्रभाव यह रहा कि अन्य बच्चों में हिन्दी भाषा के प्रति सम्मान बढ़ा और उन्हें लगा कि हिन्दी विषय में अच्छे अंक लाने से इस तरह से सम्मान भी मिलता है । निश्चित रूप से इस भावना ने उन्हें हिन्दी विषय चुनने और उसमें अच्छे अंक लाने के लिए प्रेरित किया होगा ।

यह एक कटु सत्य है जो हम सभी भलीभाँति जानते हैं कि निजी विद्यालयों में हिन्दी के प्रति बच्चों और अभिभावकों में कोई विशेष लगाव नहीं है । स्कूल प्रशासन भी हिन्दी विषय को गंभीरता से नहीं लेता है । निजी विद्यालयों में 8वीं कक्षा के बाद अँग्रेजी को अनिवार्य और हिन्दी को विदेशी भाषाओं के समकक्ष वैकल्पिक विषय बना दिया गया है । अज्ञानतावश या भेड़ चाल के चलते, यह जाने-समझे बिना कि इस स्तर पर विदेशी भाषा पढ़ने का कोई लाभ नहीं है, विदेशी भाषाओं फ्रेंच, जर्मन, स्पेनिश की चकाचौंध में बच्चे हिन्दी को छोड़ कर इन्हीं विदेशी भाषाओं को चुन रहे हैं । अकादमी के शिक्षक प्रकोष्ठ, जिसमें बड़ी संख्या में निजी विद्यालयों के हिन्दी भाषा के शिक्षक जुड़े हुए हैं, उन्होंने हमें बताया कि विद्यालय स्तर पर हिन्दी पर गंभीर संकट है । हिन्दी विषय पढ़ने वाले विद्यार्थियों की कमी के कारण हिन्दी के विभाग (सेक्शन) बंद हो रहे हैं और यही स्थिति रही तो न केवल छोटी कक्षाओं से ही बच्चे हिन्दी के

ज्ञान से वंचित रह जाएंगे बल्कि हिन्दी शिक्षकों की नौकरियों पर भी गंभीर संकट आ जाएगा । हमने कुछ विद्यालयों में स्कूल प्रशासन को विश्वास में लेकर कार्यशालाएं की, शिक्षक प्रकोष्ठ के सदस्यों के माध्यम से छात्रों को यह समझाने की कोशिश की कि आपके लिए एक विषय के रूप में हिन्दी पढ़ना हितकर है, किसी भी विदेशी भाषा को 6 महीने में सीखा जा सकता है और जब आवश्यक हो उस समय आप उस विदेशी भाषा को सीख लें । हमें इस बात की खुशी है कि धीरे-धीरे ही सही अब हमारे इस बाल प्रयास के सुखद परिणाम आने लगे हैं । एक बात और ध्यान देने योग्य है कि पिछले वर्ष सम्मानित होने वाले विद्यार्थियों में बड़ी संख्या निजी विद्यालयों के बच्चों और शिक्षकों की थी, ऐसे विद्यालय जिनमें से कुछ विद्यालयों में आम बोलचाल में हिन्दी बोलने पर लगभग रोक है, जिनमें हिन्दी शिक्षकों को अन्य विषय के शिक्षकों से कमतर समझा जाता है, उस विद्यालय के प्रांगण में हिन्दी विषय के लिए विद्यार्थियों और उनके शिक्षकों का सम्मान होना हमारे लिए बहुत राहत पहुंचाने वाली और गौरवान्वित करने वाली खबर है । यह भी सुखद था कि सर्वाधिक प्रविष्टियों (कुल 109 प्रविष्टियाँ) के लिए दिल्ली के एक प्रतिष्ठित निजी स्कूल को पिछले वर्ष का 'भाषा रत्न' पुरस्कार दिया गया था । एक और महत्वपूर्ण और राहत देने वाली सूचना मुझे श्री सुरेन्द्र शर्मा, उपाध्यक्ष, हिन्दी अकादमी दिल्ली के द्वारा प्राप्त हुई कि इस वर्ष हिन्दी अकादमी, दिल्ली, 12वीं कक्षा में हिन्दी विषय में अच्छे अंक लाने वाले विद्यार्थियों को सम्मानित करने की योजना पर कार्य कर रही है । इस आयोजन के लिए हिन्दी अकादमी, दिल्ली को साधुवाद । निसंदेह अगर सरकारी स्तर पर इस तरह के प्रयास होंगे तो इसके बहुत सुखद परिणाम आएंगे ।

आज हम हिन्दी को लेकर दिन प्रतिदिन इस तरह के प्रश्नों से जूझते हैं कि हमारी शिक्षा नीति, भाषा नीति ठीक नहीं है, हिन्दी के पक्ष में वातावरण नहीं है, आजकल हिन्दी के प्रति सरकारें उदासीन हैं, हिन्दी रोजगार से जुड़ी हुई भाषा नहीं है, बच्चे हिन्दी पढ़ना ही नहीं चाहते और सबसे मुख्य प्रश्न है कि हम हिन्दी क्यों पढ़ें ? हमें इन प्रश्नों के उत्तर ढूँढने होंगे । अगर सरकार हमारी बात नहीं सुन रही है या शिक्षा नीति हिन्दी के अनुकूल नहीं है तो क्या हिन्दी प्रेमियों को हाथ पर हाथ रख कर बैठ जाना चाहिए और सरकारी नीतियों को कोस कर अपने कर्तव्य को पूरा हुआ समझ लेना चाहिए या फिर अपने-अपने स्तर पर छोटे-छोटे प्रयास शुरू करने चाहिए । आज बड़े-बड़े राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर हिन्दी का गुणगान किया जा रहा है कि हिन्दी विश्व भाषा बन गई है, बोलने वालों की संख्या लगातार बढ़ रही है, हिन्दी का भविष्य बहुत उज्ज्वल है आदि कई तरह की बातें की जा रही है, लेकिन सच्चाई हम सभी भली भांति जानते-समझते हैं । जिस भाषा को प्राथमिक स्तर पर संकट का सामना करना पड़ रहा हो, जिसके पाठकों की संख्या दिन-प्रतिदिन सिमटती जा रही हो, जिसकी लिपि पर गंभीर संकट हो, जिसकी जड़ें सूख रहीं हों, उस भाषा का भविष्य क्या हो सकता हैं, हम भलिभांति समझ सकते हैं । भाषा का यह संकट केवल हिन्दी पर ही नहीं है बल्कि यह स्थिति सभी भारतीय भाषाओं की है । जब तक प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा नहीं दी जाएगी तब तक इन भाषाओं को बचाने का कोई भी प्रयास सफल नहीं हो पाएगा ।

आज आवश्यकता है कि हिन्दी भाषा को बचाने के लिए अपने-अपने सामर्थ्यानुसार जमीनी स्तर पर कार्य करने की, सरकार पर इसके पक्ष में नीतियाँ बनाने का दबाव बनाने की, शिक्षा नीति में सुधार करने की । हिन्दी न हिन्दी दिवसों-पखवाड़ों से बचेगी और न ही संगोष्ठियों और सम्मेलनों से, हिन्दी को बचाना है तो प्राथमिक कक्षाओं से ही इसको बचाने की इसकी शुरुआत करनी होगी । हिन्दी को तकनीकी शिक्षा और रोजगार से जोड़ना होगा । आइये....हम सब हिन्दी प्रेमी मिलकर आज से ही हिन्दी के प्रचार-प्रसार और संरक्षण का प्रण लें और इस पावन अभियान को एक जनांदोलन बना दें ।

विशेष रिपोर्ट

भाषा रत्न, भाषा दूत, भाषा प्रहरी सम्मान
'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह'

किसी भी भाषा के विकास के लिए उस भाषा विशेष के विद्यार्थियों-अध्यापकों को महत्व देना अनिवार्य होता है जो विद्यार्थी-अध्यापक किसी भाषा को पढ़-पढ़ा रहे हैं, वास्तव में वही सच्चे भाषादूत और भाषा प्रहरी हैं। किसी भाषा के विकास की बुनियाद इन भाषा दूतों और भाषा प्रहरियों द्वारा ही रखी जा सकती है। यह सर्वविदित है कि हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी भारतीय भाषाओं के संरक्षण-संवर्धन के लिए पूरी तरह से प्रतिबद्ध है। इसी क्रम में हिन्दी भाषा के संवर्धन हेतु अकादमी ने प्रत्येक वर्ष हिन्दी विषय में विद्यालय स्तर पर दसवीं कक्षा में बेहतर प्रदर्शन करने वाले छात्र-छात्राओं के साथ-साथ उनके अध्यापकों को भी सम्मानित-प्रोत्साहित करने का अनुष्ठान जारी रखा है। दिल्ली, गुरुग्राम तथा गाजियाबाद के सरकारी, निजी विद्यालयों तक अकादमी ने अपनी पहुँच बनाई है और ऐसे मेधावी छात्र-छात्राओं का चयन कर प्रत्येक वर्ष स्थानीय स्तर पर एक गरिमामय आयोजन कर सम्मानित करने का कार्य किया जा रहा है।

इस वर्ष फिजी गणराज्य के राजदूत महामहिम श्री योगेश पुंजा जी एवं अन्य गणमान्य अतिथियों ने अकादमी द्वारा आयोजित 'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह' में उपस्थित होकर विद्यार्थियों-अध्यापकों को सम्मानित कर उन्हें प्रोत्साहन देने का कार्य किया । दिल्ली एनसीआर की बात करें तो गुरुग्राम और गाजियाबाद क्षेत्रों के विद्यार्थियों-अध्यापकों के लिए भी इस प्रकार के आयोजन किए गए और उन्हें प्रोत्साहित किया गया । यहाँ प्रस्तुत है अब तक सम्पन्न ऐसे आयोजनों की रिपोर्ट: डॉ. रमेश तिवारी

'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह' : 10वीं कक्षा में हिन्दी भाषा में 90% से अधिक अंक प्राप्त करने वाले दिल्ली के लगभग 150 विद्यालयों के 1725 छात्र और 300 शिक्षक हुए सम्मानित। इनमें 100% अंक प्राप्त करने वाले 32 छात्र भी सम्मिलित। सर्वाधिक प्रविष्टियों के लिए बाल भारती पब्लिक स्कूल, पीतमपुरा, दिल्ली को मिला 'भाषा रत्न-2018' सम्मान।

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी द्वारा हिन्दी भाषा के 'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह' का आयोजन 3 फरवरी , 2019 को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के प्रांगण में सम्पन्न हुआ।

इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केंद्र के सहयोग से इस अद्भुत और अद्वितीय आयोजन में दिल्ली प्रदेश के लगभग 150 विद्यालयों के 1725 छात्रों सहित उनके हिन्दी शिक्षकों को भी सम्मानित किया गया। 10 वीं कक्षा के बोर्ड परीक्षा में हिन्दी विषय में शत-प्रतिशत अंक प्राप्त करने वाले 32 मेधावी छात्रों को 'भाषा प्रहरी सम्मान-2018' से अलंकृत किया गया। जिन बच्चों ने 90 प्रतिशत या उससे भी अधिक अंक प्राप्त किये हैं उन्हें 'भाषा दूत सम्मान-2018' से नवाजा गया साथ ही उनके हिन्दी शिक्षकों को 'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान' से सम्मानित किया गया।

10 वीं कक्षा की बोर्ड परीक्षा में किसी एक विद्यालय के सर्वाधिक (109) विद्यार्थियों द्वारा हिन्दी भाषा में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने पर 'बाल भारती पब्लिक स्कूल', पीतमपुरा, दिल्ली को 'भाषा रत्न सम्मान-2018' से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'राष्ट्र निर्माण में हिन्दी की भूमिका' का लोकार्पण भी हुआ ।

दीप प्रज्ज्वलन और सामूहिक राष्ट्रगान से शुभारंभ हुए इस कार्यक्रम में बच्चों ने हिन्दी भाषा के सामूहिक गान की प्रस्तुति भी दी। पृष्ठभूमि पर बज रहे हिन्दी भाषा के गीतों ने समारोह को और भी शोभायमान बनाये रखा।

इस भव्य सम्मान समारोह के मुख्य अतिथि फिजी गणराज्य के राजदूत महामहिम श्री योगेश पुंजा जी थे। वहीं विशिष्ट अतिथियों में इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केंद्र के सदस्य सचिव, डॉ. सच्चिदानंद जोशी, वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग के निदेशक, श्री अवनीश कुमार, श्री शरत चंद्र अग्रवाल, सदस्य केंद्रीय समिति, भारतीय योग संस्थान, हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा के उपाध्यक्ष, डॉ. कमल किशोर गोयनका, विख्यात साहित्यकार डॉ. वेद प्रताप वैदिक, विख्यात कवि डॉ. अशोक चक्रधर, वरिष्ठ साहित्यकार एवं पत्रकार बी. एल. गौड़, डॉ. धनेश द्विवेदी, डॉ मुक्ता, पूर्व निदेशक, हरियाणा साहित्य अकादमी, हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के कार्यकारी संपादक, डॉ. रमेश तिवारी, इंदिरा गांधी कला केंद्र के निदेशक (प्रकाशन) श्री अनिल कुमार सिन्हा, सलाहकार श्री आर. के. द्विवेदी, सुश्री यति शर्मा मंचासीन थे।

फिजी गणराज्य के राजदूत महामहिम श्री योगेश पुंजा जी
बाल भारती पब्लिक स्कूल, पीतमपुरा को 'भाषा रत्न' की ट्रॉफी प्रदान करते हुए ।
साथ में हैं डॉ. अशोक चक्रधर, डॉ. सच्चिदानन्द जोशी एवं अन्य गणमान्य अतिथि ।

अपने-अपने विद्यालयों की वर्दी में उपस्थित छात्रों, उनके हिन्दी शिक्षकों, अभिभावकों, प्रबुद्ध साहित्यकारों, गणमान्य अतिथियों एवं अकादमी के पदाधिकारियों सर्वश्री विजय कुमार राय, विजय शर्मा, हामिद खान, भूपेंद्र सेठी, राजकुमार श्रेष्ठ, सुश्री सुरेखा शर्मा, सुश्री सरोज शर्मा, सुश्री सरिता गुप्ता, सुश्री सीमा सिंह, सुषमा भंडारी, सोनिया अरोड़ा, शकुंतला मित्तल, नीतू सिंह पांचाल, नीरू मोहन, डॉ. विदुषी शर्मा की गरिमामयी उपस्थिति से सुसज्जित सभागार वास्तव में हिन्दी भाषा का कुम्भ ही था।

किसी सरकारी/गैर सरकारी संस्था द्वारा हिन्दी भाषा और उसमें भी विद्यार्थियों के लिए इतना बड़ा आयोजन शायद ही कभी हुआ हो। मंचासीन अतिथियों ने इस अभूतपूर्व आयोजन की मुक्त कंठ से प्रशंसा की। बच्चों, अभिभावकों एवं शिक्षकों ने इसे खूब सराहा। इस अवसर पर सम्मानित होकर सभी छात्र एवं उनके शिक्षक स्वयं को गौरवान्वित महसूस कर रहे थे। श्री सतेंद्र दहिया, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा कार्यक्रम के कुशल और प्रभावशाली संचालन को सभी ने खूब सराहा।

'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह-शारजाह'

शारजाह (यू ए ई) में डी पी एस, शारजाह में हिन्दी विषय में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाले विद्यार्थी हुए सम्मानित। अकादमी की ओर से उनकी हिन्दी की शिक्षिका डॉ. आरती गोयल को स्मृति चिन्ह, अंगवस्त्र आदि से सम्मानित किया गया और उनकी कक्षा के 23 छात्रों के भाषा दूत सम्मान पत्र और पदक भेंट किए गए । अकादमी के वरिष्ठ पदाधिकारी श्री विजय कुमार शर्मा ने शारजाह में एक समारोह में यह सम्मान दिया।

उसके बाद स्कूल में एक सम्मान समारोह आयोजित किया गया जिसमें प्रधानाचार्या और मैनेजमेंट की ओर से भी छात्रों और शिक्षकों को इस उपलब्धि के लिए सम्मानित किया गया ।

'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह-गाजियाबाद'

गाजियाबाद के लगभग 350 हिन्दी भाषा के मेधावी छात्र और उनके शिक्षक हुए सम्मानित । हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के वार्षिक आयोजनों की श्रंखला के अंतर्गत गाजियाबाद के 315 मेधावी छात्रों एवं उनके हिन्दी शिक्षकों का सम्मान दिनांक 28 अक्टूबर, 2018 को गाजियाबाद में स्थित हिन्दी भवन सभागार में हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी एवं हिन्दी भवन समिति, गाजियाबाद के संयुक्त तत्वावधान में किया गया । कुल 315 विद्यार्थियों में से 4 विद्यार्थियों को 'भाषा प्रहरी सम्मान' दिया गया जिन्होंने दसवीं की बोर्ड परीक्षा में हिन्दी विषय में शत प्रतिशत अंक प्राप्त किये थे । शेष विद्यार्थियों को 'भाषा दूत सम्मान' दिया गया जिन्होंने 90 और उससे अधिक अंक प्राप्त किये थे । भाषा प्रहरी सम्मानस्वरुप विद्यार्थियों को मंचासीन अतिथियों द्वारा सम्मान-पत्र, पदक और नकद सम्मान राशि देकर सम्मानित किया गया । इसी तरह भाषा दूत सम्मानस्वरुप

विद्यार्थियों को सम्मान पत्र और पदक दिए गए तथा उनके हिन्दी शिक्षकों को स्मृति चिन्ह और अंगवस्त्र देकर सम्मानित किया गया ।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि, उत्तर प्रदेश सरकार के खाद्य एवं रसद मंत्री, माननीय श्री अतुल गर्ग, हिन्दी भवन समिति, गाजियाबाद के महासचिव श्री योगेश गर्ग, विशिष्ट अतिथि देश की जानी-मानी कवियत्री सीता सागर एवं जाने-माने पत्रकार, साहित्यकार और उद्योगपति बी. एल. गौड़ थे । कार्यक्रम की अध्यक्षता मॉरिशस सरकार के कला एवं संस्कृति मंत्रालय के हिन्दी संगठन के अध्यक्ष माननीय श्री सुरेश रामबरन जी ने की ।

'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह-गुरुग्राम'

30 सितंबर 2018 को गुरुग्राम के राजकीय महिला महाविद्यालय के सभागार में हिन्दी के मेधावी छात्र-छात्राओं और उनके शिक्षकों का सम्मान समारोह आयोजित किया। कार्यक्रम का शुभारंभ सरस्वती वंदन, दीप-प्रज्वलन और राष्ट्रगान से हुआ। मुख्य अतिथि सांसद, प्रसिद्ध समाज सेवक एवं लेखक जो संसदीय

राजभाषा समिति के संयोजक भी हैं, डॉ. (प्रो.) प्रसन्न कुमार 'पाटसाणी' थे। विशिष्ट अतिथि के तौर पर स्टारैक्स यूनिवर्सिटी के उपकुलपति डॉ. अशोक दिवाकर, दैनिक जागरण समूह के वरिष्ठ उपाध्यक्ष श्री बसंत राठौड़ जी , राजभाषा विभाग के अधिकारी श्री धनेश द्विवेदी जी, हरियाणा साहित्य अकादमी की पूर्व निदेशिका डॉ. मुक्ता जी और हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक जी थे।

इस समारोह में हरियाणा के गुरुग्राम और उसके आस-पास के 27 विद्यालयों के सी.बी.एस.ई. बोर्ड के 450 विद्यार्थियों और उनको हिन्दी विषय पढ़ाने वाले 50 शिक्षकों को सम्मानित किया गया। इन बच्चों ने अपनी दसवीं की बोर्ड परीक्षा में हिन्दी विषय में 90% से अधिक अंक प्राप्त किए थे जिन्हें अकादमी ने 'भाषा-दूत' सम्मान से नवाजा। 'भाषा प्रहरी' का विशेष सम्मान तीन विद्यालय के उन मेधावी छात्रों का मिला जिन्होंने हिन्दी में 100 में 100 अंक प्राप्त किए थे।

प्रथम 'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह-दिल्ली'

3 दिसंबर, 2017 को अणुव्रत भवन, नई दिल्ली में अकादमी की ओर से 'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह' का आयोजन किया गया । समारोह में मुख्य अतिथि श्री मनीष सिसोदिया, उप मुख्यमंत्री एवं शिक्षा मंत्री, दिल्ली सरकार एवं विशिष्ट अतिथि के रूप में सुश्री पूनम जुनेजा, पूर्व संयुक्त सचिव, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार थीं । इस समारोह में दिल्ली के सरकारी, सरकारी सहायता प्राप्त और निजी विद्यालयों के 10वीं कक्षा में हिन्दी विषय में उत्कृष्ट अंकों से उत्तीर्ण होने वाले लगभग 250 विद्यार्थियों को 'भाषा दूत सम्मान' से सम्मानित किया गया । सम्मान समारोह में उन्हें अकादमी की ओर से सम्मान पत्र और स्मृति चिन्ह भेंट किया गया । समारोह में आंध्रा एजूकेशन सोसाइटी सीनियर सेकेंडरी स्कूल, दीनदायल उपाध्याय मार्ग, दिल्ली की छात्रा कुमारी डी. कृष्णा श्री को 'भाषा प्रहरी सम्मान' दिया गया जिसमें सम्मान पत्र, अंगवस्त्रम, स्मृतिचिन्ह के साथ 3100/- रुपये सम्मान राशि भी प्रदान की गई । इस अवसर पर सम्मानित होने वाले विद्यार्थियों के हिन्दी विषय के शिक्षकों को भी सम्मानित किया गया। समारोह में सम्मानित होने वाले विद्यार्थियों के अभिभावकों सहित लगभग 450 से ज्यादा लोग उपस्थित थे ।

भाषा मात्र परिधान नहीं,
राष्ट्र का समग्र व्यक्तित्व हुआ करती है ।
- महादेवी वर्मा

साक्षात्कार : महामहिम श्री योगेश पुंजा, राजदूत, फिजी गणराज्य

हम न केवल अपनी भाषा बल्कि अपनी संस्कृति को भी संरक्षित कर रहे हैं...

फिजी प्रशांत महासागर में 332 द्वीपों का समूह है, केवल 110 द्वीप ऐसे हैं जिनमें लोग रहते हैं । 1874 से यह ब्रिटिश उपनिवेश था और 1970 में विजय दशमीं के दिन यह आजाद हो गया । हिन्दी फिजी की दूसरी आधिकारिक भाषा है। यह अधिकांशत: भारतीय मूल के फिजी लोगों द्वारा बोली जाती है। भारत और फिजी गणराज्य ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संबंधों से जुड़े हुए हैं। 14 मई, 1879 को भारत से पहली बार गिरमिटिया श्रमिकों को जहाज से फिजी के समुद्रतट पर पहुँचाया गया । बाद में भारत से अधिक जहाजों के आगमन के साथ उनकी संख्या में वृद्धि हुई। इन श्रमिकों की सन्तान जो अब पाँचवी पीढ़ी है, जनसंख्या का लगभग 38% है और देश के आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक ताने-बाने का हिस्सा हैं। उन्होने अपने पारंपरिक भारतीय सांस्कृतिक संबंध बनाए रखे है। विदेशों में बसे भारतीयों की उपस्थिति से दोनों देशों के बीच द्विपक्षीय संबंधों में बहुत योगदान मिला है। वर्तमान में महामहिम श्री योगेश पुंजा जी भारत में फिजी के राजदूत के पद पर आसीन हैं । महामहिम श्री पुंजा जी धार्मिक विचारों और भारतीय संस्कृति के प्रबल अनुयायी हैं । आपके पूर्वज गुजरात प्रदेश के निवासी थे और लगभग 100 वर्ष पूर्व फिजी में बस गए थे । आप फिजी के प्रतिष्ठित व्यापारिक परिवार से हैं। आपका मानना है कि किसी देश की भाषा-संस्कृति के संरक्षण और संवर्धन से ही सही मायने में उन्नति की जा सकती है, जो पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होती रहनी चाहिए । हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के प्रतिनिधिमंडल सर्वश्री सुधाकर पाठक, विजय शर्मा, राजकुमार श्रेष्ठ एवं पुलकित खन्ना ने आपके फिजी दूतावास, नई दिल्ली स्थिति कार्यालय में भेंट की और अकादमी की त्रैमासिक पत्रिका 'हिन्दुस्तानी भाषा भारती' के लिए एक साक्षात्कार रिकॉर्ड किया । प्रस्तुत हैं उनसे बातचीत के मुख्य अंश : पुलकित खन्ना

श्री योगेश पुंजा

प्रश्न : हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी की ओर से आपका हार्दिक स्वागत है । आप फिजी गणराज्य के राजदूत जैसे गरिमामयी और प्रतिष्ठित पद पर शोभायमान हैं । अपने इस कार्यकाल में आपको कैसा लग रहा है ?

उत्तर: आपका बहुत-बहुत धन्यवाद। भारत में आने से पहले मैं तीन वर्ष ऑस्ट्रेलिया में राजदूत के पद पर कार्यरत रहा । इसके बाद फिजी सरकार ने दस माह पूर्व मुझे भारत का राजदूत नियुक्त किया । फिजी सरकार के इस महत्वपूर्ण पद की जिम्मेदारी को संभालते हुए सबसे पहले मैंने यहाँ आकर भारत और फिजी के बीच में हुए आपसी समझौते, शर्तों और पारस्परिक संबंधों को जाना और समझा । यह एक सुखद अनुभूति है कि भाषा और संस्कृति के रूप में दोनों देशों में मैत्रीपूर्ण संबंध हैं । अपने इस कार्यकाल में मुझे मित्र राष्ट्र भारत में आकर बहुत अच्छा लग रहा है।

प्रश्न : भाषा और संस्कृति की दृष्टि से भारत और फिजी के बीच बहुत घनिष्ठ संबंध है । वर्तमान में हिन्दी को लेकर वहाँ कैसी स्थिति है ?

उत्तर: फिजी में हिन्दी भाषा के विकास का इतिहास सौ वर्ष से भी अधिक पुराना है । ब्रिटिश साम्राज्यवादियों द्वारा सन् 1879 में जब पहली बार शर्तबंधी प्रथा के तहत भारतीय मजदूरों को फिजी में लाया गया था तो उनके साथ-साथ उनकी भाषा, संस्कृति, लोकगीत और लोक कला भी साथ आयीं । उन प्रवासी भारतियों के द्वारा ही हिन्दी भाषा और संस्कृति वहाँ विस्तार हुई । हिन्दी फिजी के संविधान की दूसरी आधिकारिक भाषा है । फिजी की हिन्दी में भोजपुरी, अँग्रेजी, पंजाबी, अवधी, गुजराती और राजस्थानी भाषाओं का समिश्रण है इसलिए यहाँ की हिन्दी और भारत की हिन्दी में थोड़ा सा अंतर है । हिन्दी की वर्तमान स्थिति पर बात करें तो फिजी में शिक्षा, संचार, यातायात और सामान्य दिनचर्या की भाषा हिन्दी ही है । यहाँ माध्यमिक स्तर तक हिन्दी में शिक्षा दी जाती है और उसके बाद वैकल्पिक भाषा के रूप में हिन्दी पढ़ाई जाती है । कुल आबादी के 43% भाग हिन्दी बोलते-समझते हैं । जिन बच्चों को हिन्दी में एमफिल और पीएचडी करनी होती है उन्हें हम इसके लिए भारत बुलाते हैं । रेडियो फिजी में 24 सौ घंटे हिन्दी भाषा के कार्यक्रम प्रसारित होते रहते हैं । विभिन्न संचार माध्यमों और पत्रकारिता की भाषा भी हिन्दी है ।

हिन्दी गाने और सिनेमा यहाँ खूब प्रचलित है । अहिन्दी भाषी लोग भी अपने-अपने घरों में हिन्दी फिल्में देखते हैं और हिन्दी में ही वार्तालाप करते हैं । यहाँ बाजार और यातायात के साधनों के नाम भी हिन्दी में लिखे जाते हैं । इसलिए फिजी को विश्व में दूसरा देश माना जाता है जहां हिन्दी भाषिओं की बहुलता है ।

प्रश्न : जब से आप यहाँ राजदूत बनकर आए हैं तब से फिजी दूतावास साहित्यिक और सांस्कृतिक रूप में काफी सक्रिय हुआ है । आप बहुत विनम्रता, आदर और सम्मान के साथ लोगों से मिलते हैं और उन्हें समय देते हैं इसके लिए आपको धन्यवाद और बधाई देता हूँ । फिजी में हिन्दी साहित्य की स्थिति कैसी है और वहाँ किस तरह का साहित्यिक वातावरण है ?

उत्तर: फिजी में हिन्दी साहित्य बहुत लोकप्रिय है । रामायण, महाभारत, सिंहासन बत्तीसी, विक्रम वेताल, हातिम ताई जैसी किताबें भारत से मंगाई जाती थी । बच्चों को हिन्दी साहित्य से परिचित कराने के लिए विभिन्न बाल साहित्यिक पुस्तकें और पत्रिकाएँ पढ़ने दी जाती थी । फिजी में कई स्थानीय लेखक वर्ग है जो हिन्दी में साहित्य सृजन करते हैं । हिन्दी प्रेमी साहित्यकारों ने यहाँ कई समिति, संगठन एवं हिन्दी केन्द्रों का गठन किया है जो समय-समय पर वहाँ स्थापित साहित्यकारों के निर्देशन और मार्ग दर्शन में विभिन्न गोष्ठियाँ एवं प्रतियोगिताओं का आयोजन करते है । हिन्दी के प्रचार-प्रसार में प्रवासी हिन्दी साहित्यकारों का भी बहुत बड़ा योगदान है । हमारी नजर केवल भाषा पर ही नहीं, संस्कृति पर भी है। हम लोग अपनी संस्कृति को भी संरक्षित कर रहे हैं । हमारे पास एक हजार से भी ज्यादा रामायण मंडलियाँ हैं । हमारे मंदिरों में रामायण सिखाई और पढ़ाई जाती है ।

प्रश्न : गत वर्ष ग्यारवां विश्व हिन्दी सम्मेलन मॉरीशस में भव्यता के साथ सम्पन्न हुआ था, जहाँ तत्कालीन भारतीय विदेश मंत्री श्रीमति सुषमा स्वराज ने यह घोषणा की थी कि आगामी विश्व हिन्दी सम्मेलन फिजी में आयोजित किया जाएगा । इस घोषणा का फिजी के प्रतिनिधि मंडल ने जोरदार स्वागत किया था । हम जानना चाहेंगे कि इस सम्मलेन की वहाँ किस तरह तैयारी चल रही है?

उत्तर : अभी भारत में लोकसभा चुनावों के कारण हमने कोई बड़ी तैयारी तो नहीं की है लेकिन हमने एक बड़ा फैसला यह लिया है कि आयोजन नाड़ी में होगा । नाड़ी फिजी का आर्थिक एवं व्यवसायिक केंद्र है और वहां अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा भी है । अभी फिजी में कुछ दिनों पहले ही एशियन डेवलपमेंट बैंक का एक सम्मेलन हुआ था जिसमें 3000 से भी ज्यादा लोग सम्मिलित थे । इस आयोजन के द्वारा विश्व हिन्दी सम्मेलन का पूर्वाभ्यास भी हो गया । हम लोग बारहवें विश्व हिन्दी सम्मेलन के लिए काफी तैयारियां कर रहे हैं, जिससे इस प्रतिष्ठित आयोजन को भव्य रूप में आयोजित कर सकें ।

प्रश्न : वर्तमान में फिजी की नयी पीढ़ी, जिनमें नयी सोच है, तकनीकी रूप से भी सक्षम हैं और हर क्षेत्र में अपनी कार्य कुशलता और क्षमता रखती हैं, उनमें हिन्दी को लेकर किस तरह की अभिरुचि है ?

उत्तर : एक बात हम लोगों को समझनी होगी कि समय के साथ सब कुछ परिवर्तन होता है तो आने वाली पीढ़ियों में भी थोड़ा बहुत अंतर तो होगा ही लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि वह अपनी भाषा और संस्कृति को ही भूल जाएं । हम लोग युवाओं को अपनी भाषा और संस्कृति के बारे में लगातार जागरूक कर रहे हैं । हम लोग वहां हिन्दी और संस्कृत पढ़ा रहे हैं; लोग ज्यादातर संस्कृति पर ध्यान दे रहे हैं और साथ ही भाषा पर भी । विश्वविद्यालय स्तर पर भी हिन्दी को लागू करने जा रहें हैं और साथ ही साथ डॉक्टरेट के लिए बच्चों को भारत में भेज रहे हैं । हम लोगों की पहली प्राथमिकता अपनी संस्कृति का संरक्षण है और दूसरी भाषा का । हम समझते हैं कि नई तकनीक के माध्यम से भी अपनी संस्कृति का विस्तार किया जा सकता है । हम लोग चाहतें हैं कि हमारी धार्मिक जिंदगी प्रबल हो जिसमें हमारी संस्कृति और भाषा दोनों ही आ जाएंगी । हमें अपने जीवन के मूल्य और कर्तव्य को भली-भांति समझना होगा, तभी हम अपनी भाषा और संस्कृति को प्रबल बना पाएंगे और उसे विस्तृत कर सकेंगे । अब आप मुझे ही देख लीजिए मेरा पहला कार्यकाल ऑस्ट्रेलिया में था और अब भारत में हूँ लेकिन मैंने अपने जीवन मूल्यों और संस्कृति को कभी खत्म नहीं होने दिया। हमें नयी-नयी तकनीकों का सहारा लेना होगा और उसके माध्यम से हमें अपनी संस्कृति का विस्तार करना होगा । हमें अपनी आने वाली पीढ़ी को भी बताना पड़ेगा कि हमारी संस्कृति और भाषा हमारे लिए कितनी आवश्यक है ।

प्रश्न : विश्व परिदृश्य में आप हिन्दी को किस तरह से देखते हैं? आप हिन्दी की वर्तमान स्थिति और भविष्य में इसके बारे में क्या राय रखते हैं ?

उत्तर : पहले तो हमें यह समझना होगा कि भारतीयों ने अपनी संस्कृति और भाषा का विस्तार अपने सिनेमा और अपने व्यवहार के माध्यम से किया था । पूर्व में रूस में भारतीय सिनेमा और गानों की काफी लोकप्रियता थी जिसके कारण वहाँ भारतीय संस्कृति और भाषा का विस्तार हुआ, लेकिन अब सिनेमा और हमारे व्यवहार का स्तर गिरता जा रहा है जिससे हमारी भाषा और संस्कृति का विस्तार नहीं हो पा रहा है । आज के सिनेमा में दुनिया भर की बुरी चीजें आ गई हैं । श्रीमदभागवत गीता में कहा गया है कि परिवर्तन ही संसार का नियम है परंतु इसका मतलब यह नहीं कि आप परिवर्तन के चक्कर में पड़कर अपने आपको, अपनी भाषा को, अपनी संस्कृति को खत्म ही कर लें । पहले भारतीय सिनेमा भारतीय संस्कृति और परंपरा को दूसरे देशों में पहुँचाती थी परंतु अब ऐसा नहीं है । हमने अपनी संस्कृति विस्तार के माध्यम को बंद कर दिया है । लेकिन अभी भी कुछ ज्यादा नहीं बिगड़ा है । हमें नए तरीके से सोचने की जरूरत है । हमें नई तकनीकों का, नए माध्यमों का इस्तेमाल करना चाहिए । आज के समय में सोशल मीडिया इसका सबसे उत्तम और कारगार माध्यम है । विश्व परिदृश्य की बात करें तो हिन्दी आज कई देशों में बोली, समझी और पढ़ाई जाती है । हिन्दी एक ऐसी मृदु भाषा है जिसे केवल सुनकर भी सीखा जा सकता है । विश्व के कई विख्यात विश्वविद्यालयों में हिन्दी विभाग है जहां विदेशी छात्रों और प्रोफेसरों को हिन्दी सिखाई जाती है । हम लोगों को अपनी संस्कृति, धर्म और भाषा को सोशल मीडिया पर लाना होगा और साथ ही साथ यह ध्यान देना होगा कि हम अपनी संस्कृति और भाषा को नई पीढ़ी पर थोपे नहीं बल्कि उन्हें अपनी भाषा, सभ्यता और संस्कृति से अवगत कराएं, उन्हें समझाएं कि हमारी भाषा और संस्कृति क्या है ? हमारी मौलिक पहचान क्या है ? यदि हम अपनी मौलिकता से कट गए तो इसका समाज पर बहुत दुष्प्रभाव होगा ।

प्रश्न : भारत और फिजी के बीच भाषा, शिक्षा, धर्म और संस्कृति के संबंध में तो बहुत कार्य हुए हैं लेकिन साहित्यिक क्षेत्र में आज तक कोई विशेष काम नहीं हो पाया है । भविष्य में भारत और फिजी के साहित्यकारों के बीच साहित्यिक विषय-वस्तु के आदान-प्रदान करने के संबंध में फिजी सरकार की कोई योजना है ?

उत्तर : मुझे याद है जब हम छोटे थे तब हमारे पिताजी और दादा जी के पास भारत से विभिन्न पुस्तकें और पत्रिकाएँ आती थी । यह केवल पुस्तकों और पत्रिकाओं का स्वरूप नहीं होता था बल्कि इनके साथ एक आत्मीय संबंध होता था । मेरा मानना है कि साहित्य ही एक ऐसा माध्यम है जिससे दोनों देशों के आपसी संबंधों में प्रगाढ़ता स्थापित की जा सकती है । साहित्य ही भाषा और संस्कृति की संवाहक है । विगत में हम लोग अपने साहित्य और संस्कृति से कटने लगे लेकिन अब साहित्य और संस्कृति पर नए सिरे से काम शुरू हुआ है और मैं आशा करता हूँ कि जल्दी ही दोनों देशों के बीच में साहित्य और संस्कृतियों के आदान-प्रदान में सक्रियता आयेगी ।

प्रश्न : भाषा और संस्कृति को लेकर सरकारें अपना कार्य कर रही हैं, उनकी कई अकादमियां और विभाग इसमें कार्य कर रहे हैं लेकिन भाषा और संस्कृति के संरक्षण और प्रचार-प्रसार के लिए काम करने वाली निजी संस्थाओं के बारे में आपकी क्या राय है ? उनकी क्या भूमिका होनी चाहिए?

उत्तर : अक्सर यह देखा गया है कि सरकार द्वारा संचालित अकादमी और विभाग अपनी समझ और स्रोतों के माध्यम से कार्य तो करते है परंतु कुछ कार्य जमीनी स्तर पर नहीं हो पाता है जिससे एक बहुत बड़ा समुदाय इसका लाभ नहीं ले पाता । ऐसी स्थिति में निजी संस्थाएं जो भाषा, संस्कृति और साहित्य को लेकर कार्य कर रही हैं वह अपनी अहम भूमिका निभाती हैं । जहां पर सरकारी संस्थाएं, विभाग नहीं पहुँच पाते वहाँ पर निजी संस्थाएँ पहुंच जाती हैं और अपना कार्य करती हैं । कई बार देखा जाता है कि ऐसी संस्थाएं सरकार और जनसमूह के बीच सेतु का कार्य करती है । भाषा और संस्कृति को बचाने में इन संस्थाओं का भी काफी बड़ा योगदान है ।

प्रश्न : हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी हिन्दी सहित सभी भारतीय भाषाओं के संरक्षण, संवर्द्धन और प्रचार-प्रसार हेतु विगत कुछ वर्षों से भाषा और संस्कृति के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य कर रही है । अकादमी द्वारा आयोजित आयोजनों में आप मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित हुए हैं । अकादमी के कार्यस्तर और कार्य कुशलता को आप किस तरह से मूल्यांकन करते हैं ? आपके मूल्यांकन से हमें आगे की रणनीति के लिए ऊर्जा मिलेगी ।

उत्तर: मुझे यह देखकर और जानकर सुखद अनुभव हो रहा है कि हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी जैसी एक निजी स्ववित्तपोषित संस्था अपने सीमित संसाधनों द्वारा हिन्दी भाषा के लिए इतना बड़ा कार्य कर रही है । इस संस्था को किसी सरकारी या निजी संस्थान से कोई अनुदान या सहायता नहीं मिलती हैं । जो काम सरकार और सरकारी विभागों को करना चाहिए था वो काम अकादमी पूर्ण निष्ठा से जमीनी स्तर पर कर रही है । मुझे 3 फरवरी 2019 के दिन इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केंद्र के विशाल प्रांगण में आयोजित 'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह' आज भी याद आता है जिसमें लगभग

शेष पृष्ठ संख्या 46 पर

शिष्टाचार भेंट

दो राष्ट्रों के संबन्धों को सुदृढ़ करने के लिए साहित्य सर्वोत्तम माध्यम है : महामहिम श्री नीलांबर आचार्य जी

नेपाल के नव नियुक्त राजदूत महोदय से अकादमी के प्रतिनिधि मंडल की शिष्टाचार भेंट :

नेपाल सरकार द्वारा भारत के लिए नव नियुक्त राजदूत महामहिम श्री नीलांबर आचार्य जी से हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के प्रतिनिधि मंडल ने 10 मई, 2019 को नेपाल दूतावास में एक शिष्टाचार भेंट की । इस प्रतिनिधि मंडल में हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक के साथ अकादमी के पदाधिकारी श्री विजय शर्मा, श्री राजकुमार श्रेष्ठ और सुश्री सोनिया अरोड़ा विशेष रूप से उपस्थित थे । अकादमी के प्रतिनिधि मंडल ने महामहिम श्री नीलांबर आचार्य जी को पुष्प गुच्छ देकर स्वागत किया

तथा अकादमी द्वारा प्रकाशित कुछ महत्वपूर्ण पुस्तकें भेंट की । बहुत ही आत्मीय वातावरण में हुई इस भेंट में महामहिम महोदय ने नेपाल की भाषा, संस्कृति, साहित्य, कला, इतिहास और राजनीति से संबंधित बहुत ही महत्वपूर्ण जानकारियां साझा की । नेपाल और भारत के परापूर्व काल के संबंधों से लेकर अब तक की दोनों देशों की सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक महत्त्व की भी विशेष रूप से चर्चा की । महामहिम ने कहा कि नेपाल और भारत बहुत ही निकटम पड़ोसी देश हैं इसलिए कभी-कभी कुछ परस्पर विषयों को लेकर मतभेद हो सकते हैं, लेकिन इन्हें समय पर ही आपसी समझदारी से सुलझा लेना चाहिए नहीं तो छोटी-छोटी बातें भी गहरा जख्म बन जाया करती है । हमारे संबंधों में राजनैतिक मसलों से संबंधित कोई भी असमंजस हो तो इससे हमारे सामाजिक रिश्तों को चोट नहीं पहुँचनी चाहिए । समय बदलता रहता है और समय के साथ-साथ हमारे विचार, व्यवहार और सोचने-समझने का ढंग भी बदलता रहता है । इसी तरह राजनीति और राजनीतिज्ञ भी बदलते रहते हैं लेकिन इन राजनीतिक अवरोधों एवं बदलावों के चलते हमारे आपसी व्यवहार, संस्कार, सौहार्द तथा सामाजिक चिंतन में रूकावट नहीं आनी चाहिए । नदी की तरह परस्पर संबंधों में प्रवाह होते रहना चाहिए, प्रवाह होते रहने से सभी कूड़े-कचरे और समस्याएँ भी बहते चले जाते हैं । इसीलिए हमें किसी भी तरह से रुकना या जमना नहीं चाहिए । दो निकट पड़ोसी देश होने के नाते हमें हमेशा एक-दूसरे का सहयोग करना चाहिए तथा विभिन्न मसलों पर बातचीत करनी चाहिए । घर के बुजुर्ग जिस तरह से घर के सभी समस्याओं को सुनते हैं और सुलझाते हैं ठीक उसी तरह हमें भी अपने संबंधों का ठीक तरह से रख-रखाव करना चाहिए । उन्होंने कहा कि नेपाल और भारत की संस्कृति में कोई भारी अंतर नहीं है । दोनों देशों की सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनितिक संरचना आपस में बहुत मिलती-जुलती है तथा दोनों देशों में रोटी-बेटी का संबंध है । संबंधों को मजबूती देने के लिए साहित्य सर्वोत्तम माध्यम है । भाषा, साहित्य और कला किसी भी देश के महत्वपूर्ण अंग होते हैं यही हमें दुनिया में औरों से पृथक पहचान दिलाते हैं, अतः इनका संरक्षण, संवर्धन और प्रचार-प्रसार होना चाहिए । इसी संबंध में अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक जी ने कहा कि हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी विगत कुछ सालों से भाषा को लेकर गंभीर कार्य कर रही है । अकादमी का मुख्य ध्येय ही हिन्दी सहित सभी भारतीय भाषाओं का संरक्षण, संवर्धन और प्रचार-प्रसार करना ही रहा है । अकादमी अनुवाद के क्षेत्र में भी महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही है तथा गुणस्तरीय साहित्यों का प्रकाशन कर साहित्य को बढ़ावा भी दे रही है ।

अनुवाद साहित्य ही एक ऐसा माध्यम है जो दो भिन्न भाषा, साहित्य और संस्कृति वाले व्यक्ति, समुदाय तथा देश को आपस में जोड़ती है । इससे एक तो अनुदित साहित्य को एक नयी भाषा, संस्कृति और नया पाठक वर्ग मिल जाता है तो वहीं दूसरी भाषा और साहित्य को एक नयी कृति, बौद्धिक चेतना के साथ-साथ परिष्कृत

साहित्य मिल जाता है । साहित्य ही समाज का आईना होता है । साहित्य ही समाज को प्रतिबिंबित करता है तथा विश्व में समाज का प्रतिनिधित्व भी करता है । अनुवाद साहित्य के माध्यम से ही एक-दूसरे के सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक तथा वैचारिक

शेष पृष्ठ संख्या 43 पर

साक्षात्कार : श्री सुरेन्द्र शर्मा, उपाध्यक्ष, हिन्दी अकादमी, दिल्ली

मातृभाषा हमें संस्कारों से जोड़ने का काम करती है...

हिन्दी भाषा, कला, साहित्य एवं संस्कृति के संरक्षण, संवर्द्धन, प्रचार-प्रसार और विकास करने हेतु सन् 1981 में हिन्दी अकादमी की स्थापना की गयी थी। दिल्ली सरकार के भाषा, कला, संस्कृति विभाग के अधीन अकादमी भाषा और साहित्य के विकास के लिए प्रत्येक वर्ष कार्यक्रम आयोजित करती है। सुविख्यात हास्य कवि श्री सुरेन्द्र शर्मा वर्तमान में हिन्दी अकादमी के उपाध्यक्ष हैं। 29 जुलाई, 1945 में हरियाणा के नांगल चौधरी में आपका जन्म हुआ तथा आपने स्नातक (वाणिज्य) तक शिक्षा हासिल की। आप व्यंग्य के विख्यात साहित्यकार हैं तथा आपके कई व्यंग्य लेख संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। हरियाणा तथा राजस्थान की क्षेत्रीय भाषाओं के सौन्दर्य को सम्मिश्रण कर आप अपनी कला को मंच पर प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करते हैं। लगभग सभी राष्ट्रीय स्तर के कवि सम्मेलनों में आपकी उपस्थिति अनिवार्य रूप में रहती हैं साथ ही कई टी.वी. चौनलों पर आपके कार्यक्रम प्रसारित होते रहते हैं। साहित्य में योगदान के लिए भारत सरकार ने आपको भारतीय नागरिकों को दिया जाने वाला चौथा सबसे बड़ा सम्मान, पद्मश्री से विभूषित किया है। हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के संपादक मंडल श्री विजय शर्मा, श्री राजकुमार श्रेष्ठ एवं सुश्री सोनिया अरोड़ा ने, अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक की उपस्थिति में हिन्दी भाषा की वर्तमान स्थिति सहित कई महत्वपूर्व विषयों पर विस्तृत चर्चा की। प्रस्तुत है हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के लिए उनके साक्षात्कार के कुछ प्रमुख अंश -राजकुमार श्रेष्ठ

श्री सुरेन्द्र शर्मा

प्रश्न : हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी की ओर से आपका हार्दिक स्वागत है। भारतीय हास्य रस विधा और सुरेन्द्र शर्मा का नाम आज पूरे विश्व में पर्याय बन चुका है। आप विप्र फाउंडेशन के संरक्षक हैं तथा कई शैक्षिक और सामाजिक संस्थाओं से जुड़े हुए हैं। आप विभिन्न सरकारी अकादमियों की समितियों के सदस्य रहें हैं। वर्तमान में अन्य संस्थाओं के महत्वपूर्ण पदों के साथ आप हिन्दी अकादमी के उपाध्यक्ष जैसे गरिमामय और जिम्मेदार पद पर कार्यरत हैं। यहाँ तक की अपनी विकास यात्रा के संबंध में हमारे पाठकों को कुछ बताएं।

उत्तर : सर्व प्रथम हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के सम्पादक मंडल और पत्रिका के पाठकों को धन्यवाद देता हूँ। हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के सभी कार्यों को मैं बहुत नजदीक से देखता आ रहा हूँ और यह महसूस कर रहा हूँ कि हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी अन्य अकादमियों से इसलिए पृथक एवं महत्वपूर्ण है क्योंकि यह मात्र घोषणाओं तक सीमित नहीं है बल्कि अपने उद्देश्यों के मुताबिक विगत कुछ वर्षों से भाषा के लिए जमीनी स्तर पर गंभीर कार्य कर रही है। अकादमी के कई आयोजनों में मैं अतिथि के रूप में आमंत्रित हुआ हूँ और कार्यक्रम की भव्यता एवं स्तरीयता का साक्षी भी रहा हूँ। मैं अकादमी की कार्यशैली से प्रभावित हूँ। जहाँ तक मेरे सफर की बात है तो मंचीय कवि के रूप में मैं विगत 50 वर्षों से सक्रिय रहा हूँ। इन 50 वर्षों में मैंने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा। इसका मतलब यह नहीं कि मैंने कोई बहुत बड़ी छलांग लगाई है। अन्य आम लोगों की तरह मैंने भी एक साधारण जीवन ही जिया है। इस दौरान मैंने कई उतार-चढ़ाव देखे। मैंने भी दुखों को झेला है और उसका सामना किया है। यहाँ तक पहुँचने में कई मुश्किल घड़ियों को आत्मसात किया है। मैंने कई महत्वपूर्ण पदों की जिम्मेदारिओं को पूरी गंभीरता से निभाया है और हिन्दी अकादमी के उपाध्यक्ष के रूप में भी मैं अपना सर्वश्रेष्ठ योगदान देने का प्रयास कर रहा हूँ।

प्रश्न : जिस तरह से भाषा, खासकर हिन्दी को लेकर आज के युवाओं में जो उदासीनता एवं हीनता का बोध देखा जाता है उसके पीछे कौन-कौन से कारण हैं? हिन्दी के ऊपर जो संकट का दौर है उसका मुख्य कारण आप क्या मानते हैं?

उत्तर : वर्तमान समय में मुझे लगता है कि हिन्दी के संबंध में जो सबसे बड़ा संकट है वो हिन्दी लिपि को लेकर है । आज मोबाइल का दौर है तो हर कोई रोमन लिपि में या हिंगलिश में हिन्दी लिख रहा है। देवनागरी हिन्दी से लोग दूर होते जा रहे हैं । तकनीक और तकनीकीय उपकरणों के विकास के साथ भाषा के लिए यह सबसे बड़ी चुनौती है कि वह अपनी विशुद्ध लिपि को बचाए रखें । पहले शादी के कार्ड, डाक, बहीखाते, होर्डिंग बोर्ड सब कुछ हिन्दी में लिखे जाते थे । अब हिन्दी का स्थान अँग्रेजी ने ले लिया है ।आज किसी हिन्दी भाषी क्षेत्र के बच्चे से पूछे कि अड़सठ रुपये या उनहत्तर रुपये कितने होते हैं तो वो तब तक नहीं समझ पाएगा जब तक उसे अँग्रेजी में ना कहें । पहले आई.ए.एस./ आई.पी.एस. अधिकारियों को संस्कृत और हिन्दी दोनों भाषाओं का ज्ञान होता था । संस्कृत भाषा को तो बहुत पहले ही खत्म कर दिया गया जो आज महज क्रिया-कर्म, शादी-ब्याह और पूजा-पाठ में मंत्रोच्चारण तक ही सीमित रह गयी है । आज हिन्दी भाषी इलाकों के अध्यापक जो बी. ए / एम. ए. हिन्दी में पढ़े हों उन्हें भी सौ तक की गिनती नहीं आती तो राज्य और केन्द्र सरकार की हिन्दी के प्रति इससे बढ़ी उदासीनता क्या हो सकती है ? जहाँ तक युवा पीढ़ी की बात है तो उनमें हिन्दी को लेकर उदासीन और हीनता की भावना इसलिए पनप रही है क्योंकि हिन्दी पेट की भाषा नहीं बनी। हिन्दी ज्ञान की भाषा तो बन गयी लेकिन विज्ञान की भाषा नहीं बनी । अगर आज हिन्दी में वैज्ञानिक आविष्कार हुए होते तो विदेशी लोग हिन्दी सीख रहे होते । तकनीकी विकास और वैज्ञानिक आविष्कार की बात करें तो एक-दो को छोड़कर हमारे पास और कुछ नहीं है । हमारे पास ज्ञान का विशाल भंडार है । उदाहरण के लिए जंतर-मंतर को देख लें, हम सूरज की किरणों और छाया के द्वारा समय को माप सकते हैं । हमारे यहाँ गहन साधना रही है कि एक हजार वर्ष का पंचांग देख सकते हैं । आयुर्वेद और योग के द्वारा कई रोगों का उपचार करते हैं । लेकिन हमारे यहाँ जो विख्यात वैद्य, ऋषि-मुनि हुए उन्होने अपने ज्ञान को न ही आगे फैलाया ना इसे बढ़ाने में कोई मदद की । जो पुराने जानकार थे वह चाहते थे कि यह ज्ञान उनके पास तक ही सीमित रहे और उनके बाद खत्म हो जाए । इसलिए भी हमारे यहाँ यह समस्याएँ उत्पन्न हुई है । जब तक हिन्दी को रोजगार की भाषा से नहीं जोड़ा जाएगा तब तक यह संकट यथावत ही रहेगा ।

प्रश्न : आज हमारे सामने इजरायल का उदाहरण है, जापान का उदाहरण है, चीन और कोरिया का उदाहरण है ।ये वे देश हैं जो भारत से बहुत सालों बाद आजाद हुए लेकिन आजादी के बाद इन देशों ने अपने लिए एक भाषा का चयन किया और उसे राष्ट्रभाषा घोषित कर दिया और यही देश अँग्रेजी के बगैर अपनी राष्ट्रभाषा के बलबूते पर विकास के चरम स्तर पर पहुँच चुके हैं । क्या हम हिन्दी को राष्ट्रभाषा नहीं बना पाये इसलिए इस तरह की समस्याएँ विकसित हो रही हैं?

उत्तर : देखिये, भारत एक बहुभाषी और बहु-सांस्कृतिक विविधता वाला देश है । हर बीस मील के बाद यहाँ पानी और वाणी बदल जाती है । हर भाषा की अपनी बोली, उप-बोली और लिपि है । सभी भारतीय भाषाओं के प्रति मेरा सम्मान है । मैं केवल हिन्दी की बात नहीं करूंगा, सभी भारतीय भाषाओं में स्तरीय साहित्य लिखा गया है । कभी एक समय ऐसा भी था कि लोग चंद्रकांता, विक्रम बेताल आदि पढ़ने के लिए भी हिन्दी सीखा करते थे । पिछले पाँच सालों से स्थिति और भी नाजुक हो गयी है । हिन्दी पहले दैनदिनी की भाषा होती थी अब इसे दयनीय भाषा बना दिया गया है । लेकिन हिन्दी एक बहुत अच्छा काम कर रही है कि यह नेताओं के लिए वोट मांगने का जरिया बन गई । हिन्दी के प्रति जो हीन भावना बढ़ रही है वो ऐसे कभी थी नहीं । भाषा के प्रति हमारा लगाव कम हो रहा है । मैं विश्व हिन्दी सम्मेलन में यू. एन. में गया था । वहाँ एक सत्र रखा गया था, तबके मंत्री ने कहा था कि यह हमारा सौभाग्य है कि यू. एन. के इस सभागार में हिन्दी बोली जाएगी । मैंने तब सवाल किया था कि भारतीय संसद में हिन्दी कब बोली जाएगी ? वहाँ तो आप हिन्दी बोलना बंद कर देते है और सबसे बड़ी बात तो यह है कि वहाँ तीन-चार किस्म के होटल थे जो हिन्दी को बढ़ाने का काम करते थे वो थ्री स्टार होटल थे, जो हिन्दी को भुनाने का काम करते थे वो फोर स्टार होटल और जो हिन्दी को भूनकर खाने का काम करते थे वो फाइव स्टार होटल थे । जब हमारी मानसिकता ही ऐसी होगी तो कैसे भाषा का विकास होगा ? विद्यालय का नाम है भारतीय संस्कृति विद्यालय और ठीक नीचे बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा होता है कि यहाँ पर केवल अँग्रेजी माध्यम में पढ़ाई होती है । अगर वहाँ लिख दें कि यहाँ हिन्दी माध्यम में पढ़ाई होती है तो वहाँ कोई भी अभिभावक अपने बच्चों को नहीं भेजेगा । सरकारी विद्यालयों में लोग अपने बच्चों को मजबूती से नहीं बल्कि मजबूरी से भेजते हैं क्योंकि वह अच्छी फीस नहीं दे सकते । उनकी गरीबी सरकारी विद्यालयों में भेजने को मजबूर करती है और वहाँ जो अध्यापक हिन्दी पढ़ाते हैं उनकी हिन्दी इतनी लचर होती है कि आप कल्पना भी नहीं कर सकते । लेकिन हिन्दी चल रही है वो इसलिए कि हिन्दी बोलने में आसान है पर लिखने में कठिन है और अँग्रेजी बोलने में मुश्किल है लेकिन लिखने में आसान है ।

प्रश्न : सभी भाषाविदों का यह मानना हैं कि अगर बच्चे की शिक्षा-दीक्षा उसकी मातृभाषा में हों तो वो हर चीज को बड़ी आसानी से और बहुत तेजी से सीखता और समझता है । वैज्ञानिक स्तर पर भी यह तथ्य सिद्ध हो चुका है कि बच्चे का सर्वांगीण विकास उसकी मातृभाषा से ही संभव है किसी विदेशी भाषा से नहीं । यह जानते हुए भी सरकार अँग्रेजी माध्यम में शिक्षा व्यवस्था लागू कर रही है। आप इसका क्या कारण मानते हैं ?

उत्तर : यह केवल प्राथमिक स्तर तक की समस्या नहीं है । नौवीं-दशवीं के बाद तो हिन्दी को बंद कर दिया गया है । माध्यमिक स्तर पर हिन्दी को फ्रेंच, जर्मन और स्पैनिश की तरह वैकल्पिक भाषा के तौर पर रख दिया गया है, यह होना ही नहीं चाहिए था । मैं तो यह कहता हूँ कि बी.ए.-एम. ए. तक हिन्दी को अनिवार्य विषय के रूप में लागू करना चाहिए । मैं भाषा का विरोध तो नहीं करता लेकिन जब तक मुझे अँग्रेजी नहीं आएगी तो मै शेक्सपीयर को कैसे जानूँगा ? इलियट और वड्र्सवर्थ को कैसे समझ पाऊँगा ? हिन्दी हमारी भारतीय संस्कृति की भाषा है । अँग्रेजी हमें काटने का काम करती है लेकिन हमारी भारतीय भाषाएँ हमें संस्कारों से जोड़ने का काम करती है । भाषा का विरोध नहीं है, विरोध इस बात का है कि वो हमारी भाषाओं को खत्म कर रही है । वो हमारी मानसिकता से इस तरह जुड़ गई है कि हमें लगता है कि अँग्रेजी में बोलने से समाज में प्रतिष्ठा बढ़ती है । अँग्रेजी सभ्य और शिक्षित वर्ग की निशानी है ।

प्रश्न : इस समय आठवीं अनुसूची को लेकर एक बहुत बड़ा मुद्दा चल रहा है । संविधान में पहले 14 भाषाओं को सम्मलित किया गया था, फिर यह 18 भाषाएँ हुई फिर 2003 में बोड़ो,डोगरी, संथाली और मैथिली को भी शामिल कर लिया गया । अब संविधान में 22 भाषाएँ आठवीं अनुसूची में हैं और इसी तरह 50 अन्य भाषाएँ अनुसूची में शामिल होने की प्रक्रिया में हैं । इससे हिन्दी की वर्तमान स्थिति पर कैसा असर पड़ेगा?

उत्तर : आप ही बताइये, आठवीं अनुसूची में आने से किस भाषा का विकास हुआ है ? जो भाषाएँ पहले से ही अनुसूची में हैं उनका कुछ हुआ ? वो भाषाएँ वहीं की वहीं हैं न ? चलो मान लें कि इन सभी भाषाओं को सम्मिलित कर लिया गया, अब बताओ क्या करोगे ? राजस्थानी में कौन सी भाषा लोगे ? शेखावती लोगे तो जोधपुर में भाषा का अंतर हो जाता है । 20 मील के बाद तो हमारी भाषा बदल जाती है तो कहाँ जाकर भाषा का प्रचार करोगे ?

प्रश्न : देखिये, जो हिन्दी भाषी राज्य है उनमें भोजपुरी वाले अलग से आंदोलन कर रहें हैं कि भोजपुरी को आठवीं अनुसूची में शामिल करो, इसी तरह राजस्थानी भाषा के लोग लगे हुए हैं । बुंदेली है और ब्रज यह सभी हिन्दी भाषी क्षेत्र हैं । इनकी मांगों को आप किस दृष्टि से देखते हैं ?

उत्तर : इसके लिए यहाँ दो बातों का जिक्र करूंगा । एक तो यह कि हम अपनी बोली में अथवा अपने क्षेत्र की भाषा में सहजता महसूस करते हैं । अपने मनोभाव और अभिव्यक्ति को आपस में व्यक्त करने के लिए सुलभ समझते हैं । अब जैसे हरियाणा का कोई आदमी किसी हरियाणी से रास्ते में मिलता है तो अपने आप ही उसके मुँह पर हरियाणी भाषा ही आएगी । ना वो हिन्दी में बात करेगा ना अँग्रेजी में बल्कि ठेठ हरियाणी लहजे में ही बात करना पसंद करेगा । पंजाबी आदमी किसी दूसरे पंजाबी से मिलेगा तो स्वत : पंजाबी में ही पूछेगा तोहाडा कि हाल-चाल है ? सामने वाला भी पंजाबी ही बोलेगा मैं चंगा हाँ । लेकिन जब हम कार्यलय में आते हैं तो हिन्दी ही बोलते हैं, कोई तीसरा आदमी होगा तो उससे भी हिन्दी में ही बात करेंगे ।

प्रश्न : आजकल समाचार पत्रों की भाषा को लेकर बहुत निराशा होती है । आप नवभारत टाइम्स या अन्य हिन्दी के समाचार पत्रों को उठाकर देख लीजिये, उसमें अँग्रेजी के शब्दों की भरमार होती है, और शब्द भी वे जिनके हिन्दी शब्द बहुत आसानी से उपलब्ध और प्रचलित हैं । इसके बारे में आप क्या कहना चाहेंगे ?

उत्तर : इस बात के लिए मुझे भी बहुत निराशा होती है । हमारे पास हिन्दी के जो सहज शब्द हैं उनकी जगह अँग्रेजी के शब्दों को क्यों बेवजह डाला जा रहा है ? एक बार भास्कर में लिखा था कि इम्पाउंड वेहिकल से माल चोरी हुआ; मैंने फोन करके पूछा कि जब्त वाहन नहीं लिख सकते ? आम बोलचाल के शब्द होते हुए भी जबर्दस्ती क्यों अँग्रेजी को बीच में डाल रहे हो ? और आपके जो पत्रकार हैं उन्हें हिन्दी की समझ ही नहीं है । उनसे हिन्दी की पत्रकारिता क्यों करवा रहे हो ? पहले आप शब्द लिखते थे फिर वाक्यांश लिखने लगे अब तो पूरा का पूरा वाक्य ही अँग्रेजी में लिखने लग गए । दैनिक हिंदुस्तान में हेडलाइन छपी- 'सीता हरण का मनोहारी मंचन' इतना बड़ा समाचार-पत्र है और नीचे लिखा था 'इस रामलीला में सीता हरण का दृश्य दर्शकों को बड़ा रोचक लगा' अब बताओ कैसे पनपेगी हिन्दी ? ना उसके पत्रकार को समझ है ना उसके संपादक को ही समझ है । पहले तो एक संपादक हुआ करता था जो उसकी राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पड़ताल करता था । मुझे लगता है राजेन्द्र माथुर के बाद कोई ऐसा संपादक नहीं हुआ है जिसे राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय समस्याओं की समझ हो । थोड़ा-बहुत जो समझ रखते थे उसमें प्रभात जोशी आए । आज भी हिन्दी में राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जो चर्चा कर सकता है तो वो वेद प्रताप वैदिक ही है । वह लगातार और सक्रिय रूप से लिख रहे हैं । उनके लेखों को पढ़कर हर कोई समझ सकता है ।

प्रश्न : आप कार्यक्रमों के सिलसिले में दक्षिण प्रांत की कई जगहों पर भी जा चुके हैं । हिन्दी को लेकर वहाँ किस तरह का विरोध है ? भारत की सभी भाषाएँ फलें-फूलें, इसके लिए सरकार ने शिक्षा प्रणाली में त्रिभाषा सूत्र को लागू किया था । आपके अनुसार त्रिभाषा सूत्र विफल क्यों हुआ है ?

उत्तर : मैं जब भी कार्यक्रमों के सिलसिले से दक्षिण प्रांतों में गया हूँ तो मुझे वहाँ हिन्दी को लेकर कभी कोई असहजता महसूस ही नहीं हुई । अधिकतर लोग आसानी से हिन्दी बोलते और समझते हैं । हिन्दी को लेकर जो वैमनष्यता दिखाई जाती है वो केवल राजनैतिक विरोध है ।

कुछ लोग अपने राजनैतिक लाभ के लिए वहाँ के जनसमुदाय को गुमराह करने में लगे हुए हैं, लेकिन त्रिभाषा सूत्र इसलिए नहीं लागू हो पाया क्योंकि हिन्दी भाषी क्षेत्रों ने दक्षिण की किसी भी भाषा को खुले मन से स्वीकार ही नहीं किया और दक्षिण प्रांतों के लोगों को ऐसा लगा कि हिन्दी को वहाँ जबरदस्ती थोपा जा रहा है ।

प्रश्न : जिस तरह से आज हास्य-व्यंग्य के नाम पर फूहड़ता परोसी जा रही है, अश्लीलता परोसी जा रही है, आज गंभीर साहित्य मंचों से गायब है । इसके बारे में आप क्या कहना चाहेंगे ?

उत्तर : मैं देश के हर क्षेत्र के राष्ट्रीय स्तर के कवि सम्मेलनों में सम्मिलित हुआ हूँ । कई टी.वी. चैनलों द्वारा आयोजित कवि सम्मेलनों में भी उपस्थित हुआ हूँ । मंचीय कवि के रूप में मेरा अनुभव है कि वहाँ जो दिखाया जाता है उसमें चुटकी भर भी कविता नहीं होती । क्योंकि वहाँ बौद्धिक कविता होती है जो बुद्धि से लिखी जाती है । ए. सी. रूम में बैठकर, सूट-बूट पहनकर आप सिर्फ बुद्धि से लिख सकते हो, हृदय से कदाचित नहीं । हृदय से लिखने के लिए जमीन से जुड़ना होगा और यह आज के लोगों से नहीं हो पाएगा । इसलिए भी आज साहित्य का स्तर गिरता जा रहा है । आप आँसू को लेकर एक हजार कविता लिख दो उससे क्या होगा ? लेकिन किसी एक गरीब के आँसू पोंछ दो उससे बड़ी कविता हो ही नहीं सकती । मेरा मानना है कि जब तक साहित्य हृदय से नहीं जुड़ता वो हमारी संवेदनाओं को झंकृत नहीं कर सकता, हमारे दिलों को स्पर्श नहीं कर सकता । साहित्य ही समाज का प्रतिनिधित्व करता है । जिस साहित्य में केवल बुद्धि और विनोद भरा होगा वो साहित्य समाज को क्या शिक्षा देगा ? व्यंग्य का मतलब किसी को आलोचित करना नहीं है और इसी तरह हास्य रस विधा केवल मनोविनोद का माध्यम नहीं है । आज हास्य के नाम पर द्विअर्थी शब्दों का भरपूर प्रयोग किया जा रहा है, गाली-गलौज की भाषा पर व्यंग्य और कविताएं लिखी जा रही है । इससे साहित्य का स्तर दोयम दर्जे का नहीं होगा तो और क्या होगा ? साहित्य तो समाज को जोड़ने के लिए है उसे तोड़ने के लिए नहीं । आज सबसे निराशा और पीड़ा इस बात से होती है कि हम कुछ नया सोच ही नहीं रहे । आज के साहित्य की बारीकियाँ देखें तो ना उसमें भाव प्रधान है ना ही विचार प्रधान है केवल बौद्धिकता का प्रकोप है । हमारी भावना, चेतना और संवेदना उत्तर आधुनिकता के पिंजड़े में कैद हो चुकी है । जड़बुद्धि ने हमारी सोच को निगल लिया है । लोगों में अकेलापन हावी होता जा रहा है । कविता तो प्रेम की भाषा है । जब प्रेम ही नहीं रहेगा तो साहित्य में जीवंतता कैसे बनी रहेगी ?

प्रश्न : अकादमी की अब तक की उपलब्धियों की कुछ चर्चा कीजिए । क्या इस तरह के संस्थान अपने उद्देश्यों में सफल हो पा रहें है ? हिन्दी अकादमी की आगामी कार्य योजना क्या-क्या हैं? कुछ संक्षिप्त जानकारी साझा करें।

उत्तर : दिल्ली प्रदेश के विद्यालयों में जिन बच्चों ने बारहवीं की बोर्ड परीक्षा में हिन्दी विषय पर नब्बे प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त किए हों उन्हें सम्मान देने की योजना पर कार्य चल रहा है । इसी तरह विद्यालय स्तर पर और कॉलेज स्तर पर काव्य लेखन, निबंध लेखन और पत्र लेखन प्रतियोगिता आयोजन करने की योजना पर भी कार्य चल रहा है। आजकल विद्यार्थियों में लेखन प्रतिभा खत्म हो गई है वो इसलिए कि विद्यार्थियों को ऑब्जेक्टिव प्रश्न पत्रों पर केवल टिक लगाना होता है । इससे उनकी काबिलियत का पता कैसे चलेगा ? पहले हमें एक प्रश्न का उत्तर देने में तीन पन्ने लिखने होते थे अब केवल टिक लगाने से काम चल जाता है । आज बी. ए. / एम. ए. (हिन्दी) करने वालों से, पीएचडी (हिन्दी) करने वालों से हिन्दी का कोई ड्राफ्ट बनाने को दो, वो बना ही नहीं पाएंगे क्योंकि उन्होंने पहले कभी अभ्यास ही नहीं किया । यह समस्या केवल हिन्दी के साथ नहीं है बल्कि अँग्रेजी के साथ भी है । इससे उनकी बौद्धिकता का स्तर कैसे मापा जाएगा ? आज शिक्षा का स्तर तो बढ़ रहा है लेकिन ज्ञान का स्तर गिरता जा रहा है । पहले लोग अनपढ़ थे लेकिन ज्ञानी थे आज लोग शिक्षित तो है लेकिन उनका व्यवहार अज्ञानता का है । यदि सबसे महत्वपूर्ण योजना की बात करें तो हम दिल्ली में हिन्दी अकादमी के लिए एक कला भवन का निर्माण कार्य पर लगे हुए हैं । बहुत लंबे समय से इसकी माँग थी कि दिल्ली में हिन्दी अकादमी का भी अपना कोई सभागार होना चाहिए और यह जरूरी भी था । अभी इसकी प्रक्रिया पर लगे हुए हैं और जगह भी देख आए हैं । इसके पुस्तकालय में सभी भाषाओं के साहित्य को सहेजा जाएगा । जो लोग शोध कार्य करना चाहते हैं उनके लिए भी यहाँ अलग से विभाग होगा और उनके लिए स्तरीय पुस्तकों को उपलब्ध कराया जाएगा ।

प्रश्न : हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के पाठकों तथा आज की युवा पीढ़ी को आप क्या संदेश देना चाहेंगे?

उत्तर : वैसे तो मैं एक ही संदेश देता हूँ कि जितने भी संदेश देने वाले हैं उनसे बचना चाहिए । किसी के बताए हुए रास्ते पर चलने से बेहतर है कि आप अपना एक रास्ता खुद चुने । आप सफल व्यक्ति तब होते हैं जब आपको अँग्रेजी आ जाती है लेकिन आप पूर्ण व्यक्ति तब होते हैं जब आप भारतीय भाषाओं को सीखते हैं । भारतीय भाषा हमें संस्कार और परंपरा से जोड़ती है । हमें संस्कृति, समाज और संवेदना से जोड़ती है, इसलिए अपनी भाषा पर गर्व करना सीखें ।

हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के लिए आपने अपना बहुमूल्य समय दिया, इसके लिए आपका बहुत-बहुत आभार।

''अंग्रेजी ने हमारी परम्पराएँ छिन्न-भिन्न करके, हमें जंगली बना देने का भरसक प्रयत्न किया''
- अमृतलाल नागर

मा. श्री प्रहलाद पटेल को केंद्रीय संस्कृति एवं पर्यटन मंत्री (स्वतंत्र प्रभार) बनने पर हार्दिक बधाई !

केंद्रीय संस्कृति एवं पर्यटन मंत्री (स्वतंत्र प्रभार) माननीय श्री प्रहलाद पटेल जी से उनके निवास पर हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के प्रतिनिधि मंडल ने भेंट की और मंत्री पद संभालने पर बधाई दी :

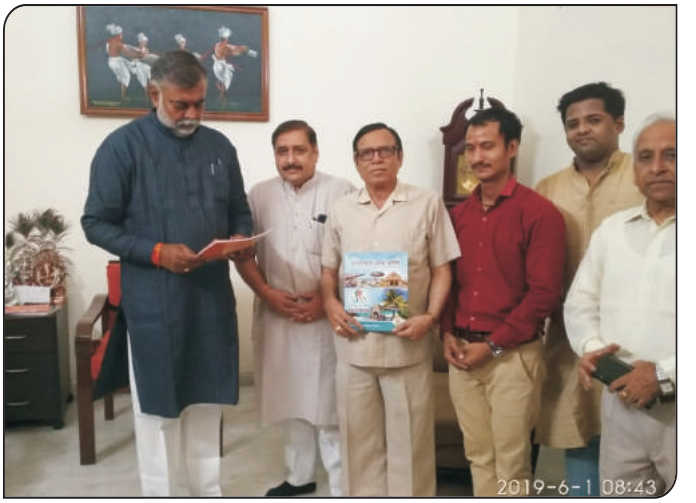

वर्तमान सरकार में मध्य प्रदेश के दमोह से माननीय सांसद श्री प्रहलाद पटेल जी देश के नए संस्कृति एवं पर्यटन मंत्री बनाये गए हैं। दर्शन शास्त्र और कानून के छात्र रहे श्री पटेल की छवि एक जमीनी, जुझारू और जोशीले नेता की है। युवा संगठन से अपनी राजनीति शुरू करने वाले श्री पटेल का लम्बा राजनीतिक अनुभव है। कई बार सांसद, विभिन्न समितियों और पार्टी में कई महत्वपूर्ण पदों पर रहे श्री प्रहलाद पटेल अटल जी की सरकार में मंत्री का पद सुशोभित कर चुके हैं। हमें विश्वास है कि भारतीय संस्कृति और भाषा के संरक्षण, ग्रामीण क्षेत्रों, किसानों और खेलों के विकास के प्रति पूर्णत: समर्पित नए संस्कृति एवं पर्यटन मंत्री देश की आशाओं पर पूर्णत: खरे उतरेंगे।

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी से आपका पुराना जुड़ाव है और आप अकादमी की कार्यशैली से भली-भांति परिचित हैं। आपने अकादमी के कार्यक्रम में विशिष्ठ अतिथि के रूप में पधारकर समारोह की शोभा भी बढ़ाई है और हमें समय-समय पर अपने बहुमूल्य मार्गदर्शन से लाभान्वित भी किया है। अकादमी के प्रतिनिधिमंडल सर्वश्री सुधाकर पाठक, अध्यक्ष, हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी, विजय कुमार शर्मा, भूपेन्द्र सेठी, राजकुमार श्रेष्ठ, पुलकित खन्ना ने इस महत्वपूर्ण अवसर पर माननीय मंत्री जी से दिल्ली स्थिति उनके निवास पर भेंट की और पुष्पगुच्छ भेंट किये। हम आशान्वित हैं कि माननीय श्री प्रहलाद पटेल जी के मंत्री बनने से अकादमी के भाषा और संस्कृति के क्षेत्र में किये जा रहे कार्यों को नई दिशा मिलेगी।

साक्षात्कार : डॉ. रामशरण गौड़, अध्यक्ष, दिल्ली लाइब्रेरी बोर्ड

विदेशी भाषाएँ रोजगार तो दे सकतीं हैं पर संस्कार नहीं...

दिल्ली लाइब्रेरी बोर्ड, संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार के अध्यक्ष डॉ. राम शरण गौड़ लेखक, प्रशासक व समाजसेवी हैं। आपने दिल्ली सरकार के समाज कल्याण विभाग सहित कई अन्य विभागों में महत्वपूर्ण पदों पर रहते हुए अपना लेखन कार्य जारी रखा। हिन्दी अकादमी, दिल्ली में 9 वर्ष तक सचिव रहे डॉ. रामशरण गौड़ की विभिन्न विषयों पर अब तक दर्जनों पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। हिन्दी अकादमी के उनके कार्यकाल में कई महत्वपूर्ण कार्य हुए जिन्हें अब तक याद किया जाता है। आपको हिन्दी भाषा और साहित्य की सेवा के लिये तमिलनाडु हिन्दी अकादमी, केरल हिन्दी अकादमी सहित कई संस्थाओं द्वारा सम्मानित किया गया। वर्तमान में आप वर्ष 2015 से दिल्ली लाइब्रेरी बोर्ड के अध्यक्ष जैसे महत्वपूर्ण पद को सुशोभित कर रहे हैं। दिल्ली स्थित उनके कार्यालय में हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी की ओर से अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक, डॉ रवि शर्मा, हिन्दी विभागध्यक्ष, श्री राम कॉलेज ऑफ कॉमर्स, दिल्ली विश्विद्यालय, अकादमी के पदाधिकारी श्री विजय शर्मा एवं युवा पत्रकार श्री पुलकित खन्ना ने भाषा और साहित्य के कई महत्वपूर्ण मुद्दों पर आपसे बातचीत की। प्रस्तुत है इस बातचीत के मुख्य अंश : पुलकित खन्ना

डॉ. रामशरण गौड़

प्रश्न : जैसा कि हम जानते हैं भारतीय संविधान में अनुच्छेद 343 में हिन्दी को संघ की राजभाषा होने की स्वीकृति मिली है और संविधान लागू हुए भी लगभग 7 दशक हो गए हैं। आप काफी समय से अनेक प्रशासनिक पदों पर रहे हैं। आपके मतानुसार हिन्दी भाषा की जैसी कल्पना की गई थी क्या आज हिन्दी उस रूप में है?

उत्तर : मैं पिछले 40 वर्षों से हिन्दी भाषा साहित्य से जुड़ा हुआ हूँ और इसी क्षेत्र में कार्य कर रहा हूँ । मैंने यह अनुभव किया है कि राजभाषा के लिए जितना कार्य होना चाहिए था उतना नहीं हो पाया है। उसका कारण है राजभाषा के लिए नियुक्त किए गए हिन्दी अधिकारी, हिन्दी अनुवादक। पिछले दिनों आईएएस की परीक्षा में जो अनुवाद आया था उसमें केवल शब्दकोश से अंग्रेजी के शब्द उठाकर रख दिए गए थे, भावार्थ पर बिल्कुल भी ध्यान नहीं दिया गया था। हम जो राजभाषा अधिकारी और राजभाषा प्रबंधक नियुक्त कर रहे हैं उनकी जगह हमें अनुसंधान अधिकारी नियुक्त करने चाहिए, जिससे हिन्दी का प्रचार-प्रसार हो। उसके पास स्नातक और स्नातकोत्तर की उपाधि होनी चाहिए और इसके साथ-साथ जिस विभाग में वह कार्य कर रहा है उस विभाग में प्रयोग होने वाली भाषा और प्रयोग होने वाले शब्दों का उसे ज्ञान होना चाहिए, जिसके लिए कम से कम 6 महीने का प्रशिक्षण उसे दिया जाए। जो दूसरा कारण मैं मानता हूँ वह है निष्ठा और समर्पण का ना होना। दक्षिण कोरिया की अपनी भाषा है वहाँ कोई भी साहित्य या नए तकनीकी विषय आते हैं तो वह सप्ताह भर के अंदर उनकी भाषा में समस्त लोगों के पास पहुँच जाते हैं परंतु यहां ऐसा कुछ भी नहीं है। यहां हिन्दी के संबंध में लोगों की रुचि ही नहीं है। आप दफ्तरों में जाए तो अंग्रेजी में बात होती है, यदि कोई बाहर से आए और वह हिन्दी में बात करें तो भी हम लोग उससे अंग्रेजी में बात करते हैं। सबसे बड़ी विडंबना है मानसिक हीनता की जो कि हिन्दी भाषा के क्षेत्र में आ गई है। आजकल के हिन्दी समाचार पत्रों और पत्रिकाओं में हिन्दी के बजाए अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग होने लगा हैं, ये हिन्दी भाषा की जगह अंग्रेजी का प्रचार-प्रसार कर रहे हैं ।

प्रश्न : ऐसा क्या कारण है कि कल तक जो समाचार पत्र, पत्रिकाएँ हिन्दी भाषा के आदर्श हुआ करते थे जिनसे लोग हिन्दी भाषा का ज्ञान लेते थे वह आज अंग्रेजी का प्रचार-प्रसार कर रहे हैं?

उत्तर : इसका एक ही कारण है हीन भावना । आजकल लोगों पर अंग्रेजी का प्रभाव होता जा रहा है और वे हिन्दी को अंग्रेजी के

मुकाबले कमतर आँकने लगे हैं। आज का शिक्षित वर्ग हिन्दी का प्रयोग ना के बराबर करता है । लोग घरों में भी अंग्रेजी शब्दों, अंग्रेजी भाषा बोलने लगे हैं। 1947 के बाद से ही यह रवैया शुरू हुआ है यदि उस समय निर्णय हो जाता तो हिन्दी ही हमारी राष्ट्रभाषा होती, लेकिन हम लोगों ने इसे राजनीति का मुद्दा बनाकर इस पर राजनीति शुरू कर दी जो । लोग पहले हिन्दी के पक्ष में थे बाद में वह हिन्दी के खिलाफ हो गए लेकिन हमें यह बात समझनी होगी कि हिन्दी एक वैज्ञानिक भाषा है इस का उद्‌भव संस्कृत भाषा से हुआ है। हम लोगों के पास तमाम हिन्दी के शब्द हैं, मानक वर्तनियां हैं लेकिन इसके बावजूद भी हम लोग हिन्दी का प्रयोग नहीं करते हैं। हमारे सरकारी विभाग हिन्दी में काम नहीं करते हैं, हां वे हिन्दी में कार्य करने के नाम पर पुरस्कार जरूर ले लेते हैं।

प्रश्न : क्या आपको यह नहीं लगता कि बहुत समय हो गया पुरस्कार देते हुए, अब जो लोग पुरस्कार और प्रशिक्षण लेने के बाद भी हिन्दी का प्रयोग नहीं करते उनके लिए दंड की व्यवस्था होनी चाहिए?

उत्तर : यह जो पुरस्कार देने की परंपरा है इसे अब रोका जाना चाहिए। वर्ष 1949 से यह प्रक्रिया जारी है, परंतु उसके बावजूद कोई खास बदलाव नहीं हुए हैं। अब यह बाध्यता होनी चाहिए कि जो लोग हिन्दी में काम नहीं कर रहे हैं, जिन्हें प्रशिक्षण प्राप्त है वे सारे के सारे हिन्दी में काम करें, हिन्दी शब्दावली का प्रयोग करें, अन्यथा वे सब दंड के भागी हों ।

प्रश्न : डॉ. साहब भविष्य में आप हिन्दी की प्रगति के बारे में क्या सोचते हैं?

उत्तर : हिन्दी की प्रगति के लिए सबसे पहले हिन्दी सेवी संस्थाओं, अकादमियों को लोगों के मन में हिन्दी के प्रति जो हीन मानसिकता जागृत हुई है उसे बदलना होगा। हिन्दी के लिए मानसिकता बहुत बड़ी परेशानी है, उसी के कारण घरों, परिवारों और कार्यालयों में हिन्दी का प्रयोग कम होता जा रहा है। आजकल लोग सोचते हैं कि यदि हम हिन्दी बोलेंगे और लिखेंगे तो हमें अयोग्य समझा जाएगा। इस हीनता का विरोध और खंडन करना होगा। हम लोगों को बुनियादी स्तर से ही हिन्दी का महत्व समझाना होगा और लोगों को हिन्दी के प्रति जागरूक करना होगा। हमें यह समझाना होगा कि शिक्षित तो आपको अंग्रेजी भाषा कर देगी परंतु संस्कार तो आपको मातृभाषा से ही मिलेंगे।

प्रश्न : हिन्दी की जो वर्तमान स्थिति है आप इसके लिए किसको दोषी मानते हैं?

उत्तर : इसके लिए दोषी केवल राजनीति है क्योंकि 'यथा राजा तथा प्रजा' यदि ऊपर से दबाव होता, ऊपर के लोग हिन्दी के लिए कार्य करते तो निश्चित ही नीचे भी इसका पालन होता, श्रीमद भागवत गीता में भी कहा गया है की श्रेष्ठ जन जिस प्रकार का कार्य करते हैं बाकी भी उसी का अनुकरण करते हैं, तो निश्चित ही यदि ऊपर के वर्ग समुदाय ने हिन्दी के लिए सही कार्य किया होता तो आज हिन्दी की यह हालत ना होती। साथ ही साथ हमारी शिक्षा प्रणाली में भी कई कमियाँ हैं जिस कारण आज हिन्दी का यह हाल है। आज विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में मातृभाषा के बजाए अंग्रेजी पर ही जोर दिया जाता है और मातृभाषाओं को नजरंदाज किया जाता है।

प्रश्न : हिन्दी भाषी राज्यों पर आरोप लगता है कि वे गैर-हिन्दी राज्यों पर हिन्दी को थोप रहे हैं जबकि हिन्दी पट्टी के लोग उनकी भाषाओं को नहीं पढ़ना चाहते। इस आरोप को आप किस तरह से देखते हैं ?

उत्तर : इसका हल यही है कि हिन्दी के साथ-साथ दूसरी भारतीय भाषाओं को भी महत्व दिया जाए व उनका भी संरक्षण किया जाए। पहले दिल्ली विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों में हिन्दी के साथ-साथ एक अन्य भाषा भी पढ़नी होती थी परंतु इस तरीके के पाठ्यक्रम अब विश्वविद्यालयों में ना के बराबर है। जिससे भारतीय भाषाएं खत्म होती जा रही हैं। हम लोगों को जरूरत है कि हम हिन्दी व अन्य भारतीय भाषाओं की तरफ रुख करें और इनके गौरव को समझे व इन भाषाओं के प्रति प्रतिबद्ध हों ।

प्रश्न : आज हर राज्य में हिन्दी अकादमी, संस्थाएं, समितियां हैं। उसके बावजूद भी हिन्दी का यह हाल है तो आप इन सभी की कार्यप्रणाली पर क्या कहेंगे ?

उत्तर : इसके दो पहलू हैं पहला तो इन संस्थाओं का मुखिया कौन है? क्योंकि जिस प्रकार का मुखिया होगा उसी तरीके की संस्थाएं होंगी। यदि मुखिया ही भाषा के प्रति जागरुक नहीं होगा तो वह संस्था भी जागरुक नहीं होगी और दूसरा पहलू है इन संस्थाओं की कार्य योजना। अक्सर हम लोग देखते हैं कि भाषा के नाम पर केवल गोष्ठियों या कवि सम्मेलन कराकर हम संतुष्ट हो जाते हैं, जबकि इससे भाषा के प्रचार-प्रसार में कोई खास उन्नति नहीं होती। इन संस्थाओं को जरूरत है कि वे बुनियादी तौर से लोगों को भाषा के प्रति जागरूक करें, बुनियादी तौर से ही लोगों की रुचि हिन्दी के प्रति बढ़ाएं क्योंकि जब तक लोगों को बुनियादी चीजें ही पता नहीं होंगी तो वह बड़े-बड़े साहित्यकारों से मिलकर या कविताएं सुनकर क्या करेंगे। आज हालत यह है कि ना तो हम अपने पुराने साहित्यकारों को जानते हैं और ना ही नए साहित्यकारों को सामने ला पाए हैं। ऐसे में इन समितियों और संस्थाओं के ऊपर एक अहम जिम्मेदारी है कि वे लोगों को बुनियादी रूप से हिन्दी से अवगत कराएं और पुराने साहित्यकारों और कवियों के बारे में बताएं और साथ ही साथ नए साहित्यकारों को भी बढ़ावा दे।

प्रश्न : हम हिन्दी की इतनी बातें कर रहे हैं तो आपको क्या लगता है कि हिन्दी के राष्ट्रभाषा बनने का जो प्रश्न है अभी तक जीवित है?

उत्तर : देखिए राष्ट्र है तो राष्ट्रभाषा को भी लाना ही पड़ेगा क्योंकि आप विदेशी भाषाओं से केवल रोजगार दे सकते हैं, विदेश जा सकते हैं लेकिन अपनी आने वाली पीढ़ी को संस्कार नहीं दे सकते। उन्हें जीवन मूल्य और संस्कार देने के लिए आपको अपनी भाषा, अपनी प्राचीन धरोहरों को उनके साथ बांटना होगा। यदि हमें अपने संस्कारों और संस्कृति को आगे बढ़ाना है तो हमें अपनी ही भाषा की जरूरत होगी और यह तभी मुमकिन है जब हमारे पास अपनी राष्ट्रभाषा हो और मैं पूरी तरह आशान्वित हूँ कि हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा बनेगी परंतु इसके लिए हमारे सभी हिन्दी जनों को एक दृढ़ संकल्प के साथ हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के हेतु आगे आना होगा।

प्रश्न : आठवीं अनुसूची के बारे में आप क्या सोचते हैं या क्या राय रखते हैं?

उत्तर : कुछ लोग अपने स्वार्थ में हिन्दी से कुछ भाषाओं को तोड़ने में लगे हुए हैं, ये अपने स्वार्थ के लिए और कुछ पुरस्कारों के लिए इस तरीके का कार्य कर रहे हैं। मेरे हिसाब से इस प्रकार के सभी पुरस्कारों को समाप्त कर देना चाहिए । हिन्दी और अन्य भाषाओं से भी आप भाषा के लिए नहीं बल्कि विषयों के लिए पुरस्कार दीजिए जो भूगोल पर लिख रहे हैं, समाज शास्त्र पर लिख रहे हैं। उन्हें पुरस्कृत करना चाहिए। हिन्दी के पीछे हटने का एक कारण यह भी है कि हमने केवल हिन्दी साहित्य पर ही ध्यान दिया है, भारतीय वांगमय की तरफ हमने कोई ध्यान नहीं दिया है। हमें सभी भारतीय भाषाओं में तमाम विषय लाने चाहिए जो अभी तक नहीं आए हैं और सभी भारतीय भाषाओं के साथ हिन्दी को जोड़े रखने का पूर्ण प्रयास करना चाहिए।

प्रश्न : आप के कार्यकाल में दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी द्वारा कौन-कौन सी अहम योजनाएं चलाई जा रहीं हैं?

उत्तर : हमने शिक्षा और पुस्तकों को बढ़ावा देने के लिए कई महत्वपूर्ण कार्य किए हैं। हमारे पुस्तकालयों में कई भाषाओं की और तमाम विषयों की पुस्तकें मौजूद हैं। हमने पुस्तकालयों में छोटे बच्चों के लिए एक अलग से बाल विभाग बनवाया है जिसमें कहानियों-कविताओं की किताबें और कॉमिक्स रखे जाते हैं और उनके लिए कई तरीके की प्रतियोगिता है, साथ ही उनकी देखभाल के लिए एक से दो आदमी हर समय नियुक्त रहते हैं। पुस्तकालयों में सभी पुरानी पुस्तकों और समाचार पत्रों का संरक्षण किया गया है । चांदनी चौक स्थित पुस्तकालय में तमाम तरीके की पुरानी पुस्तकों, समाचार-पत्रों, फिल्मी गानों की कैसेटो को संजोकर रखा गया है, साथ ही साथ इस पुस्तकालय में विभिन्न भाषाओं के 32 समाचार पत्र आते हैं, और तमाम तरीके की पत्रिकाएँ आती है। इसी के साथ हमने एक योजना भी चलाई है 'घर-घर दस्तक घर-घर पुस्तक' इसके अंतर्गत सदस्य अपनी जरूरत की किताबें मंगा सकता है । वह हमें मेल, मैसेज या टेलीफोन के जरिए बताएं कि उन्हें कौन सी पुस्तक चाहिए ? हम पूरी कोशिश करते हैं कि हम जल्दी से जल्दी उन तक पुस्तक पहुंचाएं। साथ ही हमने तमाम पुस्तकालय प्रमुखों को एक विशेष फंड मुहैया कराया है जिसके अंतर्गत वह मांग की गई पुस्तकों को बिना किसी स्वीकृति के मंगाकर सदस्यों को मुहैया करा सकते हैं। समय-समय पर हम भाषा, साहित्य और सामाजिक विषयों से जुड़े आयोजन भी करते हैं जिसमें बड़े-बड़े साहित्यकार और शिक्षक शामिल होते हैं।

प्रश्न : आप हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के पाठक और सदस्यों को क्या संदेश देना चाहेंगे?

उत्तर : मैं कहना चाहूँगा कि सभी भारतवासी हिन्दी के प्रति पूरी निष्ठा और समर्पण से कार्य करें और हिन्दी में काम करने के लिए, हिन्दी बोलने के लिए ज्यादा से ज्यादा लोगों को प्रेरित करें, जहां आवश्यकता है अंग्रेजी की वहां अंग्रेजी का इस्तेमाल करें लेकिन बाकी जगहों पर हिन्दी का प्रयोग करें। समाज के बीच में भाषा को लेकर कार्यक्रम करें ना की बड़े बड़े सभागारों और संगोष्ठी कक्षों में। समाज से सीधा संपर्क और वार्तालाप करें, उन्हें समझाएं कि हिन्दी का क्या स्थान और गौरव है । उन्हें हिन्दी के प्रति जागरूक करें, उन्हें समझाएं कि हमारी भाषा से ही हममें संस्कार आएंगे और तभी हम पूर्ण रूप से अपना विकास कर पाएंगे।

अन्त में अकादमी के अध्यक्ष महोदय ने कहा कि आपने हमसे बातचीत करने के लिए इतना समय निकाला, हम आपके आभारी हैं, धन्यवाद !

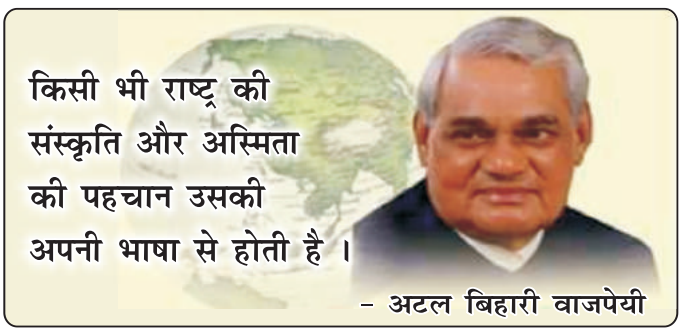

हिन्दी अकादमियों से सम्मानित सभी लोग नहीं हैं हिन्दी सेवी !

प्रेम, संस्कृति और मानवीय संवेदना की भाषा हिन्दी सारे संसार में अपने पैर जमा चुकी है और इसके लिए हिन्दी के गैर-हिन्दी भाषी मित्रों और प्रेमियों के योगदान को कम करके नहीं आंका जा सकता ।

क्या उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश या बिहार की हिन्दी पट्टी में जन्में और किसी अन्य जगह में रचे-बसे हिन्दी अध्यापक, लेखक या कवि को हिन्दी सेवी माना जाए? कतई नहीं । वह निश्चित रूप से एक लेखक, कवि या कहानीकार हो सकता है । उसका उस रूप में तो अवश्य ही सम्मान किया जा सकता है । लेकिन उसे हिन्दी सेवी की श्रेणी में रखना सही नहीं होगा । हिन्दी अकादमियां और हिन्दी के प्रसार-प्रचार से जुड़ी संस्थाएं जिन हिन्दी सेवियों को सम्मानित करती हैं, उनमें से अधिकतर ने दूर-दूर तक किसी भी माइने में हिन्दी की सेवा नहीं की होती है । हिन्दी सेवी तो वो व्यक्ति या संस्था है, जो गैर-हिन्दी भाषी क्षेत्र में हिन्दी के प्रसार-प्रचार के लिए नि:स्वार्थ भाव से प्रतिबद्धता से दशकों से जुटा हुआ है । इसमें देश-विदेश के अनेक जगहों के हजारों हिन्दी सेवक शामिल हैं ।

दक्षिण भारत का 'हिन्दी प्रचार आंदोलन'

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की बात करते हैं. लगभग 100 वर्ष पूर्व 1918 में मद्रास में 'हिन्दी प्रचार आंदोलन' की नींव रखी गई थी. उसी वर्ष हिन्दी साहित्य सम्मेलन मद्रास कार्यालय की स्थापना हुई थी, जो आगे चलकर दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के रूप में स्थापित हो गई. बाद में तमिल और अन्य दक्षिणी राज्यों की जनता की भावनाओं का आदर करते हुए, इस संस्था को 'राष्ट्रीय महत्व की संस्था' के रूप में घोषित कर दिया गया । वर्तमान में इस संस्थान के चारों दक्षिणी राज्यों में प्रतिष्ठित शोध संस्थान हैं और बड़ी संख्या में दक्षिण भारतीय मूल के साहित्य प्रेमी इस संस्थान से हिन्दी में दक्षता प्राप्त कर ज्यादातर दक्षिण राज्यों में ही हिन्दी की सेवा कर रहे हैं. हिन्दी के प्रसार और प्रतिष्ठा में संलिप्त हजारों दक्षिण भारतीय बंधु न मात्र हिन्दी से अपने रोजगार के अवसरों को स्वर्णिम बना रहें हैं, अपितु दक्षिण में हिन्दी प्रचार के क्रम में ऐसी कई प्रतिष्ठित हिन्दी संस्थाओं को भी स्थापित करते रहे हैं. जो लोग कहते हैं कि तमिलनाडू में हिन्दी में संवाद संभव नहीं है, उन्हें यह कौन बताए कि हर साल हिन्दी प्रचार सभा, चेन्नई हजारों हिन्दी प्रेमियों को हिन्दी लिखना-पढ़ना सिखाती है । इससे जुड़े तमिल मूल के अध्यापक सच्चे हिन्दी सेवी हैं ।

दक्षिण भारत में हिन्दी की सेवा करने के लिए केरल में 1934 में 'केरल हिन्दी प्रचार सभा', आंध्र में 1935 में 'हिन्दी प्रचार सभा', हैदराबाद और कर्नाटक में 1939 में 'कर्नाटक हिन्दी प्रचार समिति', 1943 में 'मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद' तथा 1953 में 'कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति' की स्थापना हुई । ये मात्र कुछ ही उदाहरण हैं ।लगभग हर वर्ष गैर-हिन्दी प्रदेशों में कोई न कोई हिन्दी साहित्य के शिक्षण से सम्बंधित संस्था खड़ी होती ही रहती है। इन संस्थानों में लाखों छात्र हिन्दी की परीक्षाओं में सम्मिलित व उत्तीर्ण होते हैं । हाल के दिनों में कर्नाटक में चंद लफंगों और नासमझ हिन्दी विरोधियों को खाद-पानी देने वाले कर्नाटक के मुख्यमंत्री सिद्दरमैया जी को काश यह पता होता कि उनके राज्य में हिन्दी की जड़ें कितनी गहरी हैं । वहां पर हिन्दी किसी भी तरह से कन्नड़ को चुनौती नहीं देती । वो कन्नड़ की मित्र बनकर ही रहती है । हिन्दी तो सही माने में प्रेम, मैत्री और सौहार्द की भाषा है. हिन्दी का तो मूल स्वभाव ही मेल-जोल का है ।

आर.के. सिन्हा

गांधी, हिन्दी और दक्षिण

महात्मा गांधी के हिन्दी प्रचार आंदोलन के परिणामस्वरूप 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' की स्थापना मद्रास नगर के गोखले हॉल में डॉ.सी.पी. रामास्वामी अय्यर की अध्यक्षता में एनी बेसेन्ट ने की थी । इसके गांधीजी आजीवन सभापति रहे । उन्होंने देश की अखंडता और एकता के लिए हिन्दी के महत्व एवं उसके प्रचार-प्रसार पर बल दिया । गांधीजी का विचार था कि दक्षिण भारत में हिन्दी के प्रचार का कार्य वहां के स्थानीय लोग ही करें. महात्मा गांधी और उनके बाद हिन्दी के महान उपासक डॉ. राजेन्द्र प्रसाद इस संस्था के अध्यक्ष बने । यह संस्था 'हिन्दी समाचार' नाम की एक मासिक पत्रिका भी निकालती है । 'दक्षिण भारत' नामक त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका में दक्षिण भारतीय भाषाओं की रचनाओं के हिन्दी-अनुवाद और उच्चस्तर के मौलिक साहित्यिक लेख छपते हैं । हिन्दी अध्यापकों और प्रचारकों को तैयार करने के लिए सभा के शिक्षा विभाग के मार्गदर्शन में 'हिन्दी प्रचार विद्यालय' नामक प्रशिक्षण विद्यालय तथा प्रवीण विद्यालय संचालित किया जा रहा हैं ।

केरल में हिन्दी फिल्मों की धूम

केरल तो हिन्दी फिल्मों का दीवाना है । मलयाली बहुत चाव से हिन्दी फिल्में देखते हैं । ऋतिक रोशन और कैटरीना कैफ की फिल्म 'बैंग-बैंग' ने केरल में एक सप्ताह के अंदर चार करोड़ रुपये की कमाई कर राज्य में सबसे ज्यादा सफल हिन्दी फिल्म बन गई थी । तब फिल्म की सफलता से खुश ऋतिक ने 'यूट्यूब' पर साझा किए वीडियो में कहा था, "केरल में अपनी फिल्म को मिली प्रतिक्रिया देखकर मैं भावविभोर हूँ।" 'बैंग-बैंग' केरल के कुल 105 सिनेमाघरों में एक साथ प्रदर्शित की गई थी और सिर्फ कोच्चि में ही इसके 40 शो हुए थे । इसी से आप केरल में हिन्दी की स्थिति को समझ सकते हैं । इसके अलावा केरल में हिन्दी का प्रचार-प्रसार करने के लिए हिन्दी की छोटी-बड़ी सभी परीक्षाओं को संचालित करना, हिन्दी की पुस्तकें एवं पत्र-पत्रिकाएं प्रकाशित करना तथा

हिन्दी नाटकों को अभिनीत करना केरल हिन्दी प्रचार सभा के मुख्य उदेश्य रहे हैं । सभा की ओर से हिन्दी, मलयालम और तमिल भाषाओं में सामंजस्य स्थापन करने के प्रयोजन से 'राष्ट्रवाणी' नाम की एक त्रिभाषा साप्ताहिक पत्रिका का भी प्रकाशन किया जाता है । इसके अतिरिक्त 'केरल ज्योति' नामक एक मासिक पत्रिका का प्रकाशन भी हो रहा है । आंध्र प्रदेश और तेलगांना में भी स्थानीय भाषाओं के साथ हिन्दी भी आगे बढ़ती जा रही है । केरल में हिन्दी फिल्में भी जमकर देखी जाती हैं।

पूर्वोत्तर में हिन्दी की बिन्दी

पूर्वोत्तर भारत में हिन्दी के प्रति प्रेम में अप्रत्याशित रूप से वृद्धि हुई है। इन राज्यों में सेना, सुरक्षा से जुड़े हुए जवान, व्यापार के लिए हिन्दी क्षेत्रों से जाकर इन राज्यों में बस जाने वाले व्यापारी, पूर्वी उत्तर-प्रदेश और बिहार से काम के सिलसिले में इन राज्यों में आए मजदूरों के कारण यहां हिन्दी भाषा का प्रचार प्रसार हुआ और देश के पूर्वोत्तर भागों में हिन्दी को स्थापित करने में गांधी जी ने भी पहल की थी । गांधी जी ने असमिया समाज को हिन्दी से परिचित कराने के लिए बाबा राघवदास को हिन्दी प्रचारक के रूप में नियुक्त करके असम भेजा था । पूर्वोत्तर में हिन्दी इसलिए भी आराम से स्थापित हो गई, क्योंकि माना जाता है कि जिन भाषाओं की लिपि देवनागरी है, वह भाषा हिन्दी न होते हुए भी उस भाषा के जरिए हिन्दी का प्रचार हो जाता है । जैसे कि अरूणाचल में मोनपा, मिशि और अका, असम में मिरि, मिसमि और बोड़ो, नगालैंड में अडागी, सेमा, लोथा, रेग्मा, चाखे, तांग, फोम तथा नेपाली, सिक्किम में नेपाली, लेपचा, भड़पाली, लिम्बू आदि भाषाओं के लिए देवनागरी लिपि है. देवनागरी लिपि अधिकांश भारतीय लिपियों की मां रही है । अतः इसके प्रचार-प्रसार से पूर्वोत्तर में हिन्दी शिक्षा और प्रसार का मार्ग सुगम हो गया ।

पूर्वोत्तर भारत में हिन्दी समझने एवं जानने वाले तथा बोलने वाले लोगों की संख्या पर्याप्त है. एक बात और पूर्वोत्तर राज्यों में हिन्दी के प्रचार एवं प्रसार में केंद्रीय हिन्दी संस्थान का योगदान भी उल्लेखनीय रहा है । संस्थान के तीन केन्द्र गुवाहाटी, शिलांग तथा दीमापुर में सक्रिय हैं । ये तीनों केन्द्र अपने-अपने राज्यों में हिन्दी के प्रचार एवं प्रसार के विशेष कार्यक्रम चलाते हैं वहीं मणिपुर में हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने सन् 1928 से ही हिन्दी का प्रचार-कार्य शुरू कर दिया था । कुछ वर्षों बाद राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा ने अपनी शाखा मणिपुर में खोली । यहां इम्फाल के हिन्दी प्रेमियों ने मिलकर 7 जून, सन् 1953 को 'मणिपुर हिन्दी परिषद' की स्थापना की । मणिपुर की दूसरी प्रमुख हिन्दी संस्था का नाम 'मणिपुर राष्ट्रभाषा प्रचार समिति' है । 'नगालैण्ड राष्ट्रभाषा प्रचार समिति' भी अपने प्रदेश में हिन्दी को स्थापित कर रही है ।

केन्द्रीय हिन्दी संस्थान नगालैंड के हिन्दी अध्यापकों के लिए विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करता रहा है जिसमें प्रति वर्ष नगालैंड से बीस से तीस हिन्दी अध्यापक आगरा हिन्दी संस्थान आते हैं तथा प्रशिक्षण के बाद आगरा से अपने यहां 'हिन्दी के राजदूत' बनकर लौटते हैं । धीरे धीरे नगालैंड के अंगामी, रेंगमा, लोथा, चाखेसाङ, फोमा आदि जनभाषाओं के बोलने वाले देवनागरी लिपि को अपना रहे हैं । नगालैंड के पड़ोसी मिजोरम में हिन्दी के प्रचार की संस्था का नाम 'मिजोरम हिन्दी प्रचार सभा' है । इसी तरह मेघालय तथा त्रिपुरा में भी हिन्दी सेवी सक्रिय हैं ।

विदेशों में हिन्दी की स्थिति

अगर हम देश की सीमाओं को लांघकर भी देखें तो अब हिन्दी सारे संसार में बोली और पढ़ी जा रही है । भारत की पुरातन संस्कृति, इतिहास और बौद्ध धर्म से संबंध एक अरसे से भाषाविदों को बारास्ता हिन्दी भारत से जोड़ते हैं । टोक्यो यूनिर्विसिटी में 1908 में हिन्दी के उच्च अध्ययन का श्रीगणेश हो गया था. जापान में भारत को लेकर जिज्ञासा के बहुत से कारण रहे । बौद्ध धर्म भी एशियाई देशों से भारत के संबंध की एक बड़ी वजह रही है । अब तो जापानी मूल के लोग ही वहां पर मुख्य रूप से हिन्दी पढ़ा रहे हैं । वहां पर हर वर्ष करीब 20 विद्यार्थी हिन्दी के अध्ययन के लिए दाखिला लेते हैं । पूर्व सोवियत संघ और उसके सहयोगी देशों जैसे पोलैंड, हंगरी, बुल्गारिया, चेकोस्लोवाकिया वगैरह में भी हिन्दी के अध्ययन की लंबी परम्परा रही है । एक दौर में सोवियत संघ और पूर्वी यूरोप के बहुत से देशों और भारत की नैतिकताएं लगभग समान थीं । वहाँ पर कम्युनिस्ट व्यवस्था थी, वहीं भारत में लगभग तीन दशकों तक नेहरुवियन सोशलिज्म का प्रभाव रहा है । दुनिया के बहुत से नामवर विश्वविद्यालयों में हिन्दी चेयर इंडियन काउंसिल आफ कल्चरल रिलेशंस (आईसीसीआर) के प्रयासों से ही स्थापित हुई । इनमें साउथ कोरिया के बुसान और सियोल विश्वविद्यालयों के अलावा पेइचिंग, त्रिनिडाड, इटली, बेल्जियम, स्पेन, तुर्की, रूस के विश्वविद्यालय शामिल हैं । साउथ कोरिया में हिन्दी को सीखने की वजह तो विशुद्ध बिजनेस के सरोकार है । वहां की अनेक मल्टीनेशनल कम्पनियों जैसे हुंदुई, सैमसंग, एलजी का भारत में भारी निवेश हो चुका है । कंपनी अपने उन्हीं पेशेवर मैनेजरों को यहां पर भेजती हैं, जिन्हें हिन्दी का गुजारे लायक ज्ञान तो हो ही. अमेरिका के भी येले, न्यूयार्क, विनकांसन वगैरह विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जा रही है । छात्रों की तादाद भी बढ़ती ही चली जा रही है । अमेरिका में भी अमेरिकी या भारतीय मूल के अमेरिकी नागरिक ही हिन्दी अध्यापन कर रहे हैं ।

प्रेम, संस्कृति और मानवीय संवेदना की भाषा हिन्दी सारे संसार में अपने पैर जमा चुकी है और इसके लिए हिन्दी के गैर-हिन्दी भाषी मित्रों और प्रेमियों के योगदान को कम करके नहीं आंका जा सकता ।

लेखक राज्यसभा सांसद हैं ।

साभार : iChowk.in

हिन्दी भाषा की स्थिति और साहित्य की घटती पठनीयता

राजकुमार श्रेष्ठ

जब भी हम भाषा की बात करते हैं तो सामान्यत: आम लोग इस पर रुचि ही नहीं लेते । शिक्षित, बौद्धिक और सक्षम वर्ग जिन्हें भाषा को लेकर चिंता करनी चाहिए वे भी भाषा के लिए कोई काम नहीं कर रहे हैं; कोई सार्थक प्रयास तक नहीं करना चाहता । जबकि भाषा एक गंभीर चिंतन का विषय है । भाषा किसी भी राष्ट्र का एक संवेदनशील अंग है । भाषा किसी भी राष्ट्र के साहित्य, संस्कृति, सभ्यता, इतिहास, कला और लोक जीवन के विकास के लिए अपरिहार्य तत्व है जिसके बिना राष्ट्रीय सुरक्षा एवं राष्ट्रीय एकता की कल्पना तक नहीं की जा सकती । किसी भी सार्वभौम सम्पन्न राष्ट्र की पहली शर्त होती है कि उसकी अपनी एक राष्ट्रीय भाषा हो । राष्ट्रीय भाषा देश की सम्पर्क भाषा होती है जिसमें शान्ति, सुरक्षा, भाईचारा और राष्ट्रीय एकता की भावना को बनाए रखने की पूर्ण शक्ति होती है । सन् 1917 में गुजरात के एक अधिवेशन में राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने सर्वप्रथम हिन्दी को राष्ट्रभाषा की मान्यता प्रदान की थी । लेकिन स्वतन्त्रता के 72 वर्षों के बाद भी गाँधी जी ने जिस राष्ट्रभाषा का सपना देखा था वह दर्जा आज तक हिन्दी को प्राप्त नहीं हो पाया है । कुछ राजनीतिज्ञों ने अपने राजनैतिक लाभ के कारण हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनने ही नहीं दिया । संविधान सभा ने 14 सितम्बर 1949 को एकमत से हिन्दी को राजभाषा बनाने का निर्णय लिया । तत्पश्चात 1950 में संविधान के अनुच्छेद 343 (1) के द्वारा हिन्दी को देवनागरी लिपि में राजभाषा का दर्जा दिया गया । बड़े आश्चर्य की बात है कि जिस देश ने अपना स्वतन्त्रता संग्राम हिन्दी भाषा के भरोसे लड़ा, जहाँ तीन चौथाई जनता हिन्दी भाषा से परिचित है वहाँ हिन्दी भाषा को लेकर इतनी संकीर्ण मानसिकता क्यों है ? हिन्दी भाषा देश की सम्पर्क भाषा है साथ ही 2011 के राष्ट्रीय जनगणना के अनुसार 44 प्रतिशत लोगों की मातृभाषा भी है । विशिष्ट क्षेत्रों की दृष्टि से देखें तो हिन्दी लगभग 8 राज्यों में फैली हुई है । अब सवाल यह उठता है कि भारत जैसे विशाल देश में राजभाषा के रूप में हिन्दी की क्या स्थिति रह गयी है ? देश की शिक्षा प्रणाली में हिन्दी की क्या भूमिका है ? इस पर राष्ट्रीय विमर्श होना चाहिए । देश की भाषा समस्या जनता जनित नहीं है बल्कि जनता द्वारा चयनित प्रतिनिधियों द्वारा जनित है ।

सन् 1947 में जब देश में संविधान निर्माण की प्रक्रिया चल रही थी तब इन चुने हुए प्रतिनिधियों ने यह तय किया था कि देश में एक सम्पर्क भाषा हो और वह भारत की अपनी भाषा हो, कोई विदेशी भाषा न हो। संविधान लागू होने के पश्चात 15 साल का समय भाषा परिवर्तन के लिए रखा गया ताकि भारत संघ की सभी राज्य सरकारें अपने-अपने राज्यों मे अपनी राजभाषा निर्धारित करें और उस भाषा के माध्यम से अपने राज्यों में सरकारी कामकाज करें तथा राज्य में स्थित सभी शैक्षिक संस्थानों में शिक्षा प्रदान करें । संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 भाषाओं को राजभाषा का दर्जा दिया गया है । अपनी सामर्थ्य अनुसार राज्यों ने अपनी राजभाषाओं को प्रचलित करने के लिए भाषा विभागों की स्थापना की और कार्यलयी भाषा की नीति में शिक्षा देना प्रारम्भ किया साथ ही प्रशासनिक शब्दावली तैयार की ।

ऐसे में यह और भी आवश्यक हो गया कि राज्यों के बीच सम्पर्क स्थापित करने के लिए हिन्दी को स्थापित किया जाए । लेकिन आज भी कार्यालयों में अँग्रेजी का मोह उतना ही है जितना स्वतन्त्रता से पूर्व हुआ करता था । बल्कि आज के दौर में अँग्रेजी का मोह और अधिक बढ़ गया है । हिन्दी भाषा प्रयोग के आंकड़े कितने वास्तविक है इसका तथ्यांक तो राजभाषा विभाग ही जानता है । आज यदि यह तय करना पड़े कि शिक्षा और अभिव्यक्ति की भाषा का चुनाव किस बात से निर्धारित होता है तो इसका स्पष्ट कारक तत्व है रोजी-रोटी का, एक आदर्श रोजगार का जिससे कि समाज में मर्यादित सामाजिक प्रतिष्ठा बनी रहे और साथ ही भविष्य को सुरक्षित बनाया जा सके । अँग्रेजी को रोजगार की भाषा का एकाधिकार देने से ऐसा भाषागत कुचक्र चला की देश के हर कोने-कोने में, गाँव-देहात और कस्बों में कॉन्वेंट स्कूल बेहतर शिक्षा का प्रतीक बनते चले गये । हर अभिभावक की मानसिकता यह हो गयी कि उनके बच्चे किसी भी तरह कॉन्वेंट स्कूल में ही पढ़े । हिन्दी भाषी सरकारी विद्यालयों पर निम्नस्तर और सस्ते दर्जे का ठप्पा लगा दिया गया और वहाँ अध्ययन करने वाले छात्रों को भी कमजोर समझा जाने लगा । इससे हिन्दी भाषा के प्रति बच्चों और अभिभावकों में नकारात्मक मनस्थिति बनने लगी । वास्तव में किसी भी भाषा के पास यह गुण नहीं होता कि वह किसी भी बच्चे को प्रतिभा सम्पन्न बना सके । प्रतिभा तो निजात्मक गुण है जिस पर भाषा का कोई प्रभाव नहीं होता । देश की शिक्षा प्रणाली में त्रिभाषा सूत्र पर जोर दिया गया है जिसके अंतर्गत क्षेत्रीय भाषा, हिन्दी और अँग्रेजी पढ़ना प्राय: सभी विद्यालयों में अनिवार्य है । संविधान के किसी भी अनुच्छेद में त्रिभाषा सूत्र का उल्लेख नहीं है यद्यपि यह सभी राज्य सरकारों द्वारा भाषायी सौहार्द स्थापित करने हेतु अनुमोदन किया गया था ।

भारत एक बहु भाषी और बहु सांस्कृतिक विविधता वाला देश है । त्रिभाषा सूत्र इसलिए भी स्वीकार किया गया था कि भिन्न-भिन्न भाषा और संस्कृति वाले व्यक्ति, समुदाय एवं प्रांत एक-दूसरे की भाषा, संस्कृति, कला, साहित्य और रहन-सहन को जाने और समझे । क्षेत्रीय भाषाओं के साथ-साथ हिन्दी की राष्ट्रीय स्वीकार्यता को मजबूत समर्थन दें । लेकिन हिन्दी के प्रचार-प्रसार में त्रिभाषा सूत्र उतना कारगार साबित नहीं हुआ । क्योंकि दक्षिण प्रांत के

कुछ राज्यों ने यह संकुचित धारणा बना ली कि हिन्दी उनके ऊपर जबरदस्ती थोपी जा रही है । कुछ राजनीतिज्ञों ने भी अपने राजनैतिक लाभ के लिए हिन्दी के प्रति लोगों को भड़काया । इसी तरह हिन्दी भाषी राज्य भी हिन्दी को लेकर उदासीन भावना रखते हैं । उनका मानना है कि हिन्दी तो हम जन्मजात से बोलते आ रहें हैं तो इसे सीखने की आवश्यकता क्यों हैं ?इसके बदले अँग्रेजी, फ्रेंच, जर्मन इत्यादि भाषा सीखने की होड़ चली है । हिन्दी के प्रति युवाओं की रुचि घटती जा रही है लेकिन इसे पठनीय बनाने के लिए हिन्दी दिवस मनाकर सिर्फ औपचारिकता पूरी की जा रही है । अब सवाल उठता है कि हिन्दी सिर्फ जबान की भाषा है ? क्या हिन्दी की अपनी कोई सभ्यता नहीं है, अपना गौरवमय इतिहास नहीं है ? क्या हिन्दी महज एक दिवस की भाषा है, एक पखवाड़े की भाषा है ? सोचने वाली बात है कि हर साल हम हिन्दी दिवस मनाते हैं, हिन्दी पखवाड़ा मनाते हैं और विश्व हिन्दी सम्मेलन आयोजन करते हैं तो इससे हिन्दी को क्या लाभ हुआ ? हिन्दी बोलने वालों की कितनी प्रतिशत आबादी की वृद्धि हुई ? एक जागरूक और स्वस्थ शिक्षा नीति के तहत सरकार को यह बताना चाहिए कि हिन्दी क्यों पढ़नी चाहिए ? हिन्दी को नहीं पढ़ने से क्या-क्या भावी नुकसान हो सकता है ? हिन्दी पढ़कर भी समाज में सम्मान और प्रतिष्ठा आर्जित की जा सकती है । एक व्यक्ति अपने जीवन काल में 20 भाषा सीख सकता है । लेकिन जब तक इन 20 भाषाओं का कोई उपयोग ही नहीं होगा तो इसे सीखना निरर्थक है। भाषाविदों की माने तो कोई भी भाषा सीखने के लिए छह महिने से अधिक समय व्यय नहीं होता है ।

किसी भी विदेशी भाषा को सीखने से व्यक्ति के व्यवहार और सोचने की क्षमता पर कोई नवीन क्रांति नहीं आती । सिर्फ भाषा बदलती है, व्यवहार और भाव नहीं । अगर ऐसा होता तो आज देश में बुद्धिजीवियों की संख्या अत्याधिक होती । देश विश्व के अन्य देशों के साथ प्रतिस्पर्धा में सबसे आगे होता । आज तमाम भाषाविद यह मानते हैं कि जो बात बच्चे अपनी मातृभाषा में बड़ी जल्दी सीख पाते हैं वे अन्य किसी भाषा से नहीं सीख सकते । विदेशी भाषा सीखने की होड़ में हमने अपने बच्चों पर एक और भाषायी बोझ थोप दिया है। जहाँ बच्चों को अपनी प्रतिभा और क्षमता को निखारना था वहीं वह अधिक समय विदेशी भाषा को सीखने में व्यतीत कर देते हैं । इससे एक तो बच्चे अपनी मातृभाषा से दूर होते गए दूसरा विदेशी भाषा के बोझ तले मानसिक दबाव झेलने लगा । इससे बच्चों का मनोबल गिरता है । वे भविष्य को लेकर चिंतित और हतोत्साहित होने लगता है। शिक्षक और अभिभावक की अपेक्षा भी उन्हें मानसिक तनाव देता है जिससे उनमें निहित आंतरिक प्रतिभा भी धीरे-धीरे मरने लगती है । हिन्दी को लेकर हिनताबोध का बीज अंकुरित होने लगता है । अँग्रेजी, फ्रेंच और जर्मन आदि भाषा सीखने के लिए बच्चे अपने दैनिक समय तालिका समय का अधिक समय व्यय कर देते हैं । नतीजा यह होता है कि बोर्ड परीक्षा पर हिन्दी जो अपनी मातृभाषा है उसी भाषा में अनुत्तीर्ण होते हैं ।

हाल ही में उत्तर प्रदेश की दसवीं की बोर्ड परीक्षा के रिपोर्ट के अनुसार इस वर्ष हिन्दी विषय में 10 लाख विद्यार्थी अनुत्तीर्ण हुए हैं। जब हिन्दी भाषी राज्य का यह हाल है तो अन्य राज्यों से क्या आश लगाएँ ? विद्यालय स्तर पर जब हिन्दी का इतना बुरा हाल है तो कैसे हम हिन्दी को विश्व भाषा बनाएँगे ? हिन्दी का संरक्षण और संवर्धन कैसे होगा? अब राष्ट्रीय मुद्दों पर इसे प्राथमिकता से लिया जाना चाहिए । आज हिन्दी साहित्य कोई पढ़ना ही नहीं चाहता जिसका असर हिन्दी पर पड़ रहा है । हिन्दी को राजभाषा तो घोषित कर दिया गया लेकिन वर्चस्व अँग्रेजी भाषा की है । हरेक वर्ष हिन्दी साहित्य की लाखों पुस्तकें प्रकाशित होती है । लेकिन दिनोंदिन हिन्दी के पाठकों की संख्या भी कम होती जा रही है । हमें यह तय करना होगा कि हम जो कवितायें, गीत, गजल, कथा और उपन्यास लिख रहें हैं वो किसके लिए लिख रहें हैं ? जब हमारे लिखे हुए साहित्य के लिए पाठक वर्ग ही नहीं होगा तो लिखने का क्या औचित्य रह जाता है ? हमें तय करना होगा कि हिन्दी का पाठक क्यों कम हो रहा है और हमारे साहित्य में परिष्कृत सामग्री क्यों नहीं है ? हर कोई लेखक बनने की होड़ में लगा हुआ है । आज के युवा लेखकों में स्वाध्ययन एवं पुन: मुद्रण का अभाव होना भी हिन्दी साहित्य के प्रति लोगों में वितृष्णा उत्पन्न करता है । कविता, गीत, गजल के नाम पर लुगदी साहित्य छापा जा रहा है तो वहीं व्यंग्य और उपन्यास के नाम पर फूहड़ता परोसी जा रही है । इन सभी बातों से भी हिन्दी साहित्य के प्रति अब कौतुहल और उत्साह नहीं पाया जाता । सूचना क्रांति और प्रौद्योगिकी के इस युग में दुनिया बहुत ही छोटी हो गयी है ।

वैश्वीकरण और बाजारवाद ने भौगोलिक दूरियों को लगभग समाप्त ही कर दिया है । ईमेल, वीडियो कॉन्फ्रेंस, मोबाइल, ई-पेपर तथा अन्य डिजिटल माध्यमों ने विचार के आदान-प्रदान को, मानवीय संबंधों को सरल से सरलतर कर दिया है । लेकिन चाहे पुस्तक पाठन हो, पत्रिका पाठन हो, साहित्य या समाचार-पत्र हो, हर स्थिति में लोगों के पढ़ने की आदतों में भारी गिरावट आयी है । 'वर्ल्ड एसोसिएशन ऑफ न्यूजपेपर्स' के अनुसार पिछले 15 वर्ष में भारत में 7 प्रतिशत, अमेरिका में 5 प्रतिशत, यूरोप में 3 प्रतिशत और जापान में 2 प्रतिशत पाठक अखबारों ने खो दिये हैं । यही बात हिन्दी साहित्य पर भी लागू होती है । ब्रॉड बैंड इंटरनेट, टेलीविजन, ई-पेपर, ई-बुक, ब्लॉग पत्रकारिता आदि ने भी पाठकों की पढ़ने की आदतों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया है । खासकर नयी पीढ़ी के युवाओं से हिन्दी साहित्य का दामन छूटता ही जा रहा है । समय रहते ही हिन्दी भाषा और हिन्दी साहित्य के लिए ठोस कदम उठाने होंगे अन्यथा हिन्दी भाषा और साहित्य के साथ अकल्पनीय दुर्घटना हो सकती है ।

- राजकुमार श्रेष्ठ
उप सम्पादक, हिन्दुस्तानी भाषा भारती

पूर्वोत्तर राज्यों की भाषाएँ, संस्कृति, लोक कलाएँ एवं हिन्दी की स्थिति

पूर्वोत्तर भारत की लोकभाषाएँ और हिन्दी

डॉ. वीरेन्द्र परमार

भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र बांग्लादेश, भूटान, चीन, म्यांमार और तिब्बत पाँच देशों की अंतर्राष्ट्रीय सीमा पर अवस्थित है। असम, अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नागालैंड, त्रिपुरा और सिक्किम इन आठ राज्यों से बना समूह पूर्वोत्तर कहलाता है। यह क्षेत्र भौगोलिक, पौराणिक, ऐतिहासिक एवं सामरिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। देश के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 7.9 प्रतिशत भूभाग पूर्वोत्तर के इन आठ राज्यों मे समाविष्ट है। पूर्वोत्तर के कुल क्षेत्रफल का 52 प्रतिशत भूभाग वनाच्छादित है। इस क्षेत्र में 400 समुदायों के लोग रहते हैं और लगभग 220 भाषाएँ बोलते हैं। इस क्षेत्र की अधिकांश भाषाओं की अपनी कोई लिपि नहीं है, लेकिन लोककंठ में विद्यमान लोकसाहित्य अत्यंत समृद्ध और बहुआयामी है । पूर्वोत्तर का कुल क्षेत्रफल 2,55.168 वर्ग किमी है । संस्कृति, भाषा, परंपरा, रहन-सहन, खान-पान, रीति-रिवाज, पर्व-त्योहार, वेश-भूषा आदि की दृष्टि से यह क्षेत्र इतना वैविध्यपूर्ण है कि इसे भारत की सांस्कृतिक प्रयोगशाला कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा। पूर्वोत्तर में आदिवासियों की सर्वाधिक आबादी है। अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम, नागालैंड और मेघालय की लगभग सम्पूर्ण जनसंख्या आदिवासी है। सैकड़ों आदिवासी समूहों और उनकी अनेक उपजातियाँ, असंख्य भाषाएँ, भिन्न-भिन्न प्रकार के रहन-सहन, खान-पान और परिधान, अपने-अपने ईश्वरीय प्रतीक, धर्म और अध्यात्म की अलग-अलग संकल्पनाएँ इत्यादि के कारण यह क्षेत्र विशिष्ट बन गया है। वन और वन्य प्राणियों, जीव-जंतुओं की असंख्य दुर्लभ प्रजातियों, वनस्पतियों एवं पुष्पों की अनेक प्रजातियों, औषधीय पेड़-पौधों के आधिक्य के कारण पूर्वोत्तर क्षेत्र को वनस्पतिविज्ञानियों, पुष्पविज्ञानियों व जंतुविज्ञानियों का स्वर्ग कहा जाता है। पर्वतमालाएं, सदाबहार वन एवं सदानीरा नदियां इस क्षेत्र के नैसर्गिक सौन्दर्य में चार चाँद लगा देती हैं। जैव विविधता, सांस्कृतिक कौमार्य, सामूहिकता बोध, प्रकृति प्रेम, अपनी परंपरा के प्रति सहज प्रतिबद्धता आदि इस क्षेत्र की अप्रतिम विशेषताएँ हैं। अनेक उच्छृंखल नदियों, जल प्रपातों, तालाबों से अभिसिंचित पूर्वोत्तर की शस्य - श्यामला धरती अभी विकास की रह देख रही है। आजादी के बाद वर्षों तक यह क्षेत्र उपेक्षित रहा । वर्ष 1990 के बाद की केंद्र सरकारों ने इस क्षेत्र के विकास पर पर्याप्त ध्यान दिया । इस क्षेत्र के सामाजिक - आर्थिक विकास में समन्वय स्थापित करने और केंद्र सरकार के प्रयासों को प्रोत्साहन देने के लिए वर्ष 2001 में उत्तर -पूर्वी क्षेत्र विकास विभाग स्थापित किया गया । विकास को और अधिक गति मिली जब वर्ष 2004 में उत्तर-पूर्वी विकास मंत्रालय के नाम से एक स्वतंत्र मंत्रालय का गठन किया गया। इस मंत्रालय का दायित्व पूर्वोत्तर क्षेत्र की विकास योजनाओं- परियोजनाओं का समन्वय एवं निगरानी करना है । भ्रष्टाचार और उचित निगरानी के अभाव में केंद्र सरकार द्वारा प्रचुर मात्रा में धन उपलब्ध कराए जाने के बावजूद अभी भी यह क्षेत्र विकास के राजपथ पर सरपट नहीं दौड़ पा रहा है, परन्तु यदि 90 के दशक से तुलना की जाए तो यातायात, संचार आदि के क्षेत्र में आशातीत प्रगति हुई है, राजपथ एवं राज्य पथ की गुणवत्ता व लम्बाई में वृद्धि हुई है, बैंकों का विस्तार हुआ है, अधिक संख्या में रेलगाड़ियाँ चलने लगी हैं । अभी तक पूर्वोत्तर के राज्यों की सभी राजधानियाँ रेल और वायुमार्ग से नहीं जुड़ सकी हैं। पूर्वोत्तर सीमांत रेलवे ने वर्ष 2020 तक सभी राजधानियों को रेल नेटवर्क से जोड़ने का लक्ष्य निर्धारित किया है और इस दिशा में तेजी से कार्य भी किए जा रहे हैं । अरुणाचल की राजधानी इटानगर, त्रिपुरा की राजधानी अगरतला, असम की बराक घाटी के प्रमुख शहर सिलचर आदि रेल नेटवर्क से जुड़ चुके हैं । पूर्वोत्तर सीमांत रेलवे ने मिजोरम की राजधानी आइजोल एवं मणिपुर की राजधानी इम्फाल को क्रमशः वर्ष 2018 तथा 2019 तक रेल नेटवर्क से जोड़ने का लक्ष्य निर्धारित किया है । पूर्वोत्तर के शहर गुवाहाटी, इंफाल, अगरतला, सिलचर, आइजोल, शिलोंग, तेजपुर, जोरहाट, डिब्रूगढ़, दीमापुर आदि पहले से ही वायु सेवा से जुड़े हुए हैं । यदि पूर्वोत्तर के अन्य शहरों को वायु सेवा से जोड़ दिया जाए तो पर्यटन को प्रोत्साहन मिलेगा । पूर्वोत्तर में पर्यटन के विकास की अपार संभावनाएं हैं । यदि आवागमन के साधनों का उचित विकास किया जाए और प्राथमिकता के आधार पर पर्याप्त संख्या में होटलों - अतिथिगृहों का निर्माण कराया जाए तो पर्यटन इस क्षेत्र की अर्थव्यवस्था का मजबूत आधार साबित हो सकता है । इस क्षेत्र की धीमी प्रगति के अनेक कारण हैं जिनमें प्रमुख हैं- उच्छृंखल नदियां, घने वन, गहरी घाटियां, पर्वतमालाएँ और उग्रवादी समूहों द्वारा संचालित गतिविधियाँ। उग्रवादी समूहों को पड़ोसी देशों से पर्याप्त संरक्षण भी मिलता है और घने वनों में छिपने के लिए निरापद शरण भी। इसलिए इन समूहों पर सरकार के लिए नियंत्रण करना कठिन हो जाता है। दिल्ली में बैठे अधिकारियों को पूर्वोत्तर के भूगोल, इतिहास, विविधवर्णी संस्कृति की बुनियादी समझ भी नहीं है । ये अधिकारीगण दिल्ली, उत्तर प्रदेश, बिहार के चश्मे से ही पूर्वोत्तर को देखते हैं, अतः दिल्ली में बनी योजनाएँ पूर्वोत्तर में विफल हो जाती हैं।

देश के तथाकथित प्रबुद्धवर्ग को पूर्वोत्तर के संबंध में न तो कोई ज्ञान है, न ही रूचि । यह कैसी विडम्बना है कि अमेरिका, ब्रिटेन, जापान आदि देशों में घटित छोटी-छोटी घटनाएँ भी लोगों को ज्ञात हो जाती हैं परंतु अपने ही देश के एक महत्वपूर्ण भूभाग की घटनाओं की जानकारी न तो दिल्ली स्थित संचार माध्यम दे पाते हैं, न ही इस क्षेत्र में प्रबुद्ध समाज की कोई रुचि है। दिल्ली स्थित संचार माध्यमों और चैनलों का भूगोल बहुत सीमित है । कुछ अपवादों को छोड़कर उस क्षेत्र में किसी चैनल का रिपोर्टर तक नहीं है । कोई आतंकवादी घटना होने पर ही पूर्वोत्तर समाचार चैनलों और समाचार पत्रों की सुर्खियों बनता है, अन्यथा ये आठ राज्य समाचारों से गायब रहते हैं । अंग्रेजी के लेखकों ने पूर्वोत्तर क्षेत्र के समाज, साहित्य, संस्कृति और लोकजीवन पर भरपूर लेखन किया है, अतः उनकी प्रशंसा की जानी चाहिए । पूर्वोत्तर क्षेत्र के समाज, साहित्य, संस्कृति के संबंध में अंग्रेजी भाषा में तो पर्याप्त पुस्तकें उपलब्ध हैं परंतु हिन्दी में लगभग शून्य की स्थिति है। हिन्दी के लेखक दिवास्वप्न देखने अथवा खेमेबाजी करने में ही मस्त रहते हैं । सपने तो देखते हैं कि हिन्दी विश्व भाषा बने लेकिन इस दिशा में कोई महत्वपूर्ण पहल नहीं करते । जब तक हिन्दी ज्ञान-विज्ञान की भाषा नहीं बनेगी तब तक इसके वैश्विक स्वरुप की कल्पना नहीं की जा सकती है । मात्र कविता, कहानी, उपन्यास आदि के बल पर हम हिन्दी को विश्व भाषा नहीं बना सकते । भारतीय समाज, संस्कृति, अभियांत्रिकी, भौतिकी, रसायन, नृविज्ञान, समाजशास्त्र, आदिवासी जीवन, सिनेमा, पर्यटन, महिला अध्ययन, धर्म, पर्व-त्योहार, फैशन, सोशल मीडिया, जनसंचार, भूगोल, मनोविज्ञान, मनोचिकित्सा, चिकित्साशास्त्र, शल्यक्रिया आदि ज्ञान-विज्ञान की विविध शाखाओं पर स्तरीय पुस्तकें प्रकाशित कर हम हिन्दी को विश्व पटल पर प्रतिष्ठित कर सकते हैं । लेकिन दुर्भाग्यवश इस दिशा में कहीं कोई प्रयास नहीं दिख रहा है । पूर्वोत्तर क्षेत्र बुद्धिजीवियों, हिन्दी लेखकों, पत्र-पत्रिकाओं, नौकरशाहों द्वारा उपेक्षित रहा है । हिन्दी समाज का दिवालियापन तो इस हद तक है कि कोई व्यक्ति यदि पूर्वोत्तर के समाज, संस्कृति, लोकपरंपरा, पर्व-त्योहार के संबंध में हिन्दी में पुस्तक पढ़ना चाहे तो उसे निराश होना पड़ेगा। छिटपुट रूप से किसी प्रदेश या किसी विषय विशेष पर मुश्किल से दो-चार पुस्तकें ही हिन्दी में उपलब्ध हैं। हिन्दी-हिन्दी बोलकर विधवा विलाप करनेवाले हिन्दी लेखकों ने दिल्ली को ही सम्पूर्ण देश मान लिया है । हिन्दी के लेखकों और कवियों के लिए पूर्वोत्तर क्षेत्र वर्जित भूमि रही है ।

असम

असम पूर्वोत्तर का सबसे बड़ा प्रदेश है । महाभारत में असम का उल्लेख प्रागज्योतिषपुर के रूप में मिलता है। कालिकापुराण में भी कामरूप-प्रागज्योतिषपुर का वर्णन है। इसकी राजधानी दिसपुर, गुवाहाटी है । गुवाहाटी पूर्वोत्तर का सबसे बड़ा शहर है । गुवाहाटी को पूर्वोतर का प्रवेशद्वार कहा जाता है । असम का क्षेत्रफल 78,438.00 वर्ग किलोमीटर तथा कुल जनसंख्या 31,169,272 है जिनमे पुरुषों की संख्या 15,954,927 एवं महिला 15,214,345 हैं । जनसंख्या का घनत्व (प्रति वर्ग किलोमीटर) 397 है । लिंग अनुपात (प्रति 1000 पुरुषों पर महिलाओं की संख्या) 954 और साक्षरता 73.18 प्रतिशत है । असम के प्रमुख शहर गुवाहाटी, डिब्रूगढ़, डिगबोई, तिनसुकिया, तेजपुर, सिलचर, ग्वालपाडा, जोरहाट, धुबरी, नगांव, बोंगाईगांव है । असमिया असम की प्रमुख भाषा है । यहां बांग्ला और हिन्दी भी बोली जाती है । इनके अतिरिक्त राज्य की अन्य भाषाएं हैं-बोड़ो, कार्बी, मिसिंग, राभा, मीरी आदि । कार्बी (मिकिर), बोड़ो कछारी, दिमासा कछारी, सोनोवाल कछारी, बर्मन कछारी, देवरी, मीरी (मिशिंग), तिवा इत्यादि असम की प्रमुख जनजातियाँ हैं ।

अरुणाचल प्रदेश

अरुणाचल प्रदेश अपने नैसर्गिक सौंदर्य, सदाबहार घाटियों, वनाच्छामदित पर्वतों, बहुरंगी संस्कृति, समृद्ध विरासत, बहुजातीय समाज, भाषायी वैविध्यं एवं नयनाभिराम वन्य-प्राणियों के कारण देश में विशिष्ट स्थान रखता है । अनेक नदियों एवं झरनों से अभिसिंचित अरुणाचल की सुरम्ये भूमि में भगवान भाष्कसर सर्वप्रथम अपनी रश्मिर विकीर्ण करते हैं, इसलिए इसे उगते हुए सूर्य की भूमि का अभिधान दिया गया है । इसके पश्चिम में भूटान और तिब्बत, उत्तर तथा उत्तर-पूर्व में चीन, पूर्व एवं दक्षिण-पूर्व में म्यांमार और दक्षिण में असम की ब्रह्मपुत्र घाटी स्थित है । पहले यह उत्तर-पूर्व सीमांत एजेंसी अर्थात नेफा के नाम से जाना जाता था। 21 जनवरी 1972 को इसे केन्द्र शासित प्रदेश बनाया गया । इसके बाद 20 फरवरी 1987 को इसे पूर्ण राज्य का दर्जा दिया गया । इसका क्षेत्रफल 83,743 वर्ग किलोमीटर है जो देश के क्षेत्रफल का 2.54 प्रतिशत एवं पूर्वोत्तर का (सिक्किम को छोड़कर) 32.81 प्रतिशत है। 2011 की जनगणना के अनुसार अरुणाचल की कुल जनसंख्या 1382611 है जिनमें पुरुष 720232 और महिला 662379 हैं । यहाँ लिंगानुपात प्रति 1000 पुरुषों पर 920 है तथा साक्षरता दर 66.95 प्रतिशत है । यहाँ की सम्पूर्ण जनसंख्या आदिवासी है । प्रदेश में निम्नलिखित जनजातियाँ निवास करती हैं: आदी, न्यिशी, आपातानी, हिल मीरी, तागिन, सुलुंग, मोम्पा, खाम्ती, शेरदुक्पेन, सिंहफो, मेम्बा, खम्बा, नोक्ते, वांचो, तांगसा, मिश्मी, बुगुन (खोवा), आका, मिजी । अरुणाचल की 25 प्रमुख जनजातियों की अलग-अलग भाषाएं हैं लेकिन सभी लोग संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग करते है, यहाँ तक कि विद्यालयों-महाविद्यालयों में भी माध्यम भाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग किया जाता है ।

इटानगर, नाहरलागुन, बमडीला, तवांग, पासीघाट, जीरो इत्यादि अरुणाचल के प्रमुख शहर हैं । इटानगर इस राज्य की राजधानी है ।

मिजोरम

मिजोरम एक छोटा पर्वतीय प्रदेश है । मिजो का शाब्दिक अर्थ पर्वतवासी है । यह शब्द मि और जो के संयोग से बना है । मि का अर्थ है लोग तथा जो का अर्थ है पर्वत । मिजोरम उत्तर-पूर्वी भारत का एक महत्वपूर्ण राज्य है । इसके पश्चिम में बंगलादेश और त्रिपुरा तथा पूरब एवं दक्षिण में म्यांमार है । इसके उत्तर में मणिपुर और असम की सीमा है । सामरिक दृष्टि से यह प्रदेश विशिष्ट महत्व रखता है क्योकि लगभग 650 मील की सीमा म्यांमार एवं बंगलादेश को स्पर्श करती है । इस क्षेत्र को पहले लुशाई हिल्स के नाम से जानते थे । बाद में लुशाई हिल्स का नाम परिवर्तित कर इसे मिजो हिल्स नाम दिया गया । 21 जनवरी 1972 को इसे केन्द्र शासित प्रदेश घोषित किया गया । 20 फरवरी 1987 को मिजोरम को भारत का 24 वां राज्य बनाया गया । इसका कुल क्षेत्रफल 21,087 वर्ग किलोमीटर तथा 2011 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या- 10,91,014 है जिनमे पुरुष 5,52,339 एवं महिला 5,38,675 है । जनसंख्या का घनत्व प्रति वर्ग किलोमीटर 52 है । लिंग अनुपात प्रति 1000 पुरुषों पर महिलाओं की संख्या 975 है । मिजोरम की साक्षरता 91.58 प्रतिशत है । मिजोरम की राजधानी आइजोल है । अन्य प्रमुख शहर हैं चम्फई, लुंगलेई, सरछिप आदि । मिजोरम में मुख्यत: निम्नलिखित समुदायों के लोग निवास करते है - राल्ते , पाइते, दुलियन, पोई, सुक्तें, पंखुप, जहाव, फलाई, मोलबेम, ताउते, लखेर, दलाड; खुड.लई, इत्यादि । मिजो इस प्रदेश की मुख्य भाषा है । यहाँ की अन्य भाषाएँ हैं- जाहू,लखेर, हमार, पाइते, लाई, राल्ते इत्यादि ।

सिक्किम

तिब्बत, नेपाल, भूटान की अंतर्राष्ट्रीय सीमा पर अवस्थित सिक्किम एक लघु पर्वतीय प्रदेश है । यह सम्राटों, वीर योद्धाओं और कथा-कहानियों की भूमि के रूप में विख्यात है । पर्वतों से आच्छादित इस प्रदेश में वनस्पतियों तथा पुष्पों की असंख्य प्रजातियां विद्यमान हैं । सिक्किम की राजधानी गंगटोक है । राज्य में मुख्यत: लेपचा, भूटिया, नेपाली तथा लिंबू समुदाय के लोग रहते हैं। सिक्किम सरकार ने प्रदेश की 11 भाषाओं को राजभाषा घोषित किया है- नेपाली, सिक्किमी, हिन्दी, लेपचा, तमांग, लिंबू, नेवारी, राई, गुरुंग, मागर और सुनवार । नेपाली इस प्रदेश की संपर्क भाषा है। नेपाली को भारतीय संविधान की अष्टम अनुसूची में शामिल किया गया है । सिक्किम का कुल क्षेत्रफल 78,438.00 वर्ग किलोमीटर तथा जनसंख्या 607688 है जिनमें पुरुष 321661 एवं महिला 286027 है । जनसंख्या का घनत्व प्रति वर्गकिलोमीटर 397 है तथा लिंग अनुपात प्रति 1000 पुरुषों पर महिलाओं की संख्या 954 है । प्रदेश में साक्षरता दर 73.18 प्रतिशत है ।

नागालैंड

विभिन्न विद्वानों, समाजशास्त्रियों एवं नृविज्ञानियों ने 'नागा' शब्द की व्युत्पत्ति के संबंध में भिन्न-भिन्न मत व्यक्त किए हैं । कुछ विद्वानों का मत है कि 'नोक' (NOK) शब्द से 'नागा' शब्द की उत्पत्ति हुई है जिसका अर्थ 'लोग' है । कुछ विद्वानों का मानना है कि नागा शब्द कछारी भाषा के शब्द 'नांगरा' से उत्पन्न हुआ है जिसका अर्थ 'योद्धा' है । कुछ विद्वान मानते हैं कि संस्कृत में 'नाग' का अर्थ 'पर्वत' होता है और नागा का अर्थ पर्वत पर निवास करनेवाले मानव है । कुछ लोगों की मान्यता है कि नागा शब्द बर्मा भाषा के 'नाका' से आया है जिसका अर्थ होता है 'कान की बाली' नागालैंड के लोग कानों में बाली धारण करते हैं । इसलिए इन्हें नागा कहा गया । नागालैंड पूर्वोत्तर का एक प्रमुख राज्य है । यहाँ की लगभग सम्पूर्ण आबादी जनजातीय है । यहाँ का समाज अनेक आदिवासी समूहों एवं उपजातियों में विभक्त है। नागालैंड की प्रमुख जनजातियाँ हैं- चाकेसांग, अंगामी, जेलियांग, आओ, संगतम, चिमंगचुर, चांग, सेमा, लोथा, खेमुन, रेंगमा, कोन्यक इत्यादि। नागालैंड का क्षेत्रफल 16579 वर्गकिलोमीटर है तथा कुल जनसंख्या 1,980,602 है जिनमें पुरुष 1,025,707 और महिला 954,895 है । राज्य में जनसंख्या का घनत्व 120 प्रति वर्गकिलोमीटर तथा लिंगानुपात (प्रति 1000 पुरुषों पर महिलाओं की संख्या) 931 है । साक्षरता दर 80.11 प्रतिशत है। राज्य के प्रमुख शहर कोहिमा, दीमापुर, वोखा, किफिरे, मोकोकचंग एवं प्रमुख भाषाएँ चाकेसांग, अंगामी, जेलियांग, आओ, संगतम, चांग, सेमा, खेमुन, रेंगमा, कोन्यक, नागामीज, हिन्दी इत्यादि है ।

मेघालय

मेघालय एक छोटा पर्वतीय प्रदेश है । यहां की अधिकांश भूमि पर्वत-घाटियों और वनों से आच्छादित है । यहां खासी, जयंतिया, गारो तीन प्रमुख आदिवासी समूह रहते हैं । खासी, जयंतिया और गारो प्रदेश की प्रमुख भाषाएं हैं । अंग्रेजी राज्य की राजभाषा है । यहाँ हिन्दी भी बोली जाती है । मेघालय का क्षेत्रफल 22429 वर्गकिलोमीटर तथा कुल जनसंख्या 2964007 है जिनमे पुरुष 1492668 और महिला 1471339 हैं । जनसंख्या का घनत्व प्रति वर्गकिलोमीटर 132 एवं लिंग अनुपात (प्रति 1000 पुरुषों पर महिलाओं की संख्या) 986 है । राज्य की साक्षरता 73.18 प्रतिशत है । मेघालय के प्रमुख शहर शिलांग, जोवाई, विलियमनगर, मवलाई, नोंगपो, चेरापूंजी, तुरा इत्यादि हैं । मेघालय की राजधानी शिलांग है ।

मणिपुर

मणिपुर अपने शाब्दिक अर्थ के अनुरूप वास्तव में मणि की भूमि है । इसे देवताओं की रंगशाला कहा जाता है । सदाबहार वन, पर्वत, झील, जलप्रपात आदि इसके नैसर्गिक सौंदर्य में चार चांद लगा देते हैं । अत: इस प्रदेश को भारत का मणिमुकुट कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं है । यहां की लगभग दो-तिहाई भूमि वनाच्छादित है । प्रदेश के पास गौरवशाली अतीत, समृद्ध विरासत और स्वलर्णिम संस्कृति है । यहाँ तीन जातीय समूह के लोग रहते हैं- मैतेई, नागा और कुकी चीन । मणिपुर की प्रमुख भाषा मैतेई है जिसे मणिपुरी भी कहा जाता है । मणिपुरी भाषा की अपनी लिपि है-मीतेई-मएक । इसके अतिरिक्त राज्य में 29 बोलियां हैं जिनमें प्रमुख हैं- तंगखुल, भार, पाइते, लुसाई, थडोऊ (कुकी), माओ आदि । मणिपुर में निम्नलिखित आदिवासी समुदाय रहते हैं- ऐमोल, अनल, अंगामी,चिरु, चोथे, गंगते, हमार,लुशोई, काबुई, कचानगा, खरम, कोईराव, कोईरंग, कोम, लम्कांग,माओ, मरम, मरिंग, मोनसंग, मायोन, पाईते, पौमई,पुनरूम, राल्ते,सहते, सेमा, तांगखुल, थडाऊ, तराव इत्यादि । मणिपुर का क्षेत्रफल 22327 वर्गकिलोमीटर है तथा कुल जनसंख्या 2,721,756 है जिनमें पुरुष 1,369,764 एवं महिला 1,351,992 हैं । जनसंख्या का घनत्व (प्रति वर्ग किलोमीटर) 103 और लिंगानुपात (प्रति 1000 पुरुषों पर महिलाओं की संख्या) 987 है । साक्षरता प्रतिशत है मणिपुर के प्रमुख शहर इम्फाल, बिसनपुर, उखरुल, थौबल, चंदेल, सेनापति, चूराचांदपुर इत्यादि हैं ।

त्रिपुरा

त्रिपुरा पूर्वोत्तर का छोटा पर सामरिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण राज्य है । त्रिपुरा नाम के संबंध में विद्वानों में मत भिन्नता है । इसकी उत्पत्ति के संबंध में अनेक मिथक और आख्योन प्रचलित हैं । कहा जाता है कि राधाकिशोरपुर की देवी त्रिपुर सुंदरी के नाम पर त्रिपुरा का नामकरण हुआ । एक अन्य मत है कि तीन नगरों की भूमि होने के कारण त्रिपुरा नाम विख्याात हुआ । विद्वानों के एक वर्ग की मान्यता है कि मिथकीय सम्राट त्रिपुर का राज्य होने के कारण इसे त्रिपुरा अभिधान दिया गया । कुछ विद्वानों का अभिमत है कि दो जनजातीय शब्द तुई और प्रा के संयोग से यह नाम प्रकाश में आया जिसका शाब्दिक अर्थ है भूमि और जल का मिलन स्थल । लगभग 18 आदिवासी समूह त्रिपुरा के समाज को वैविध्यपूर्ण बनाते हैं जिनमें प्रमुख हैं- त्रिपुरी, रियड; नोआतिया, जमातिया, चकमा, हालाम, मग, कुकी, गारो, लुशाई इत्यादि । इस प्रदेश के पास उन्नत सांस्कृतिक विरासत, समृद्ध परंपरा, लोक उत्सव और लोकरंगों का अद्वितीय भंडार है । बंगला और काकबराक इस प्रदेश की प्रमुख भाषाएं है । हिन्दी भी व्यापक रूप से यहाँ बोली जाती है । इसका क्षेत्रफल 10486.00 वर्ग किलोमीटर तथा कुल जनसंख्या 3,671,032 है जिनमें 1,871,867 पुरुष एवं 1,799,165 महिला हैं। जनसंख्या का घनत्व 350 प्रति वर्गकिलोमीटर और लिंग अनुपात (प्रति 1000 पुरुषों पर महिलाओं की संख्या) 961 है । त्रिपुरा में साक्षरता 87.75 प्रतिशत है । राज्य के प्रमुख शहर अगरतला, अमरपुर, अम्बासा, धर्मनगर, आनंदनगर, बेलोनिया, उदयपुर, विशालगढ इत्यादि है ।

नई दिल्ली स्थित फिजी दूतावास में फिजी गणराज्य की कवयित्री सुश्री श्वेता दत्त चौधरी के कविता संग्रह 'यह भी मेरे देश की माटी... वह भी मेरे देश की माटी' के लोकार्पण के अवसर पर फिजी गणराज्य के राजदूत महामहिम श्री योगेश पुंजा जी, फिजी में भारत के राजदूत महामहिम सुश्री पद्मजा जी, मंगोलिया के राजदूत, मलेशिया के राजदूत, राजनेता श्री विजय जौली, मारवाह स्टूडियोज़ के अध्यक्ष श्री संदीप मारवाह, साहित्यकार श्री नरेश शांडिल्य, भारतीय योग संस्थान के वरिष्ठ पदाधिकारी श्री देशराज, श्री शरत चन्द्र अग्रवाल, डॉ. वेद व्यथित एवं पुस्तक के प्रकाशक डॉ. अरुण कुमार सिंह, श्री सुधाकर पाठक, अध्यक्ष, हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी सहित कई राष्ट्रों के राजनायिक उपस्थित थे ।

पूर्वोत्तर राज्यों की भाषाएँ, संस्कृति, लोक कलाएँ एवं हिन्दी की स्थिति

पूर्वोत्तर भारत का भाषिक परिदृश्य और हिन्दी

डॉ. कृष्ण कुमार गोस्वामी

भारत के पूर्वोत्तर राज्यों से अभिप्राय भारत के सर्वाधिक पूर्वी क्षेत्रों के असम, मेघालय, अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड, मणिपुर, मिजोरम और त्रिपुरा से है। एक-साथ जुड़े ये राज्य 'सात बहनों' (Seven Sisters States) के नाम से प्रसिद्ध हैं। इन्हीं के साथ सिक्किम और उत्तरी बंगाल के दार्जलिंग, जलपाईगुड़ी और कूच बिहार जैसे कुछ भाग भी शामिल हैं। इन सात राज्यों की सीमाएँ नेपाल, चीन, भूटान, म्यांमार (बर्मा) और बांग्ला देश के साथ मिलती हैं। पूर्वोत्तर के ये राज्य सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टि से भारत के अन्य राज्यों से कुछ अलग जा पड़ते हैं। ये राज्य भी बहुभाषी हैं और यहाँ के निवासियों में दो या तीन भाषाएँ बोलना सामान्य है।

पूर्वोत्तर राज्यों में भारोपीय, चीनी-तिब्बती, आस्ट्रो-एशियाटिक तथा ताई-कादाई चार भाषा-परिवारों की लगभग 220 भाषाएँ बोली जाती हैं। इनमें चीनी-तिब्बती परिवार की भाषाओं का प्रयोग सब से अधिक है। भारोपीय परिवार के भारत-आर्य परिवार की असमिया भाषा का प्रयोग असम में होता है। इसी परिवार की सिल्हेटी भाषा दक्षिण असम में, त्रिपुरी और बांग्ला त्रिपुरा में तथा नेपाली सिक्किम में बोली जाती हैं। इसके अतिरिक्त नागालैंड और अरुणाचल प्रदेश में क्रमशः नागामी और नेफामी भाषाएँ असमिया भाषा पर आधारित क्रियोल के रूप में विकसित हुई हैं। इन राज्यों में चीनी-तिब्बती भाषा-परिवार के तिब्बती-बर्मी परिवार की बोडो, राभा, कार्बी, मिसिंग, तिवा, देओरी आदि भाषाएँ असम राज्य में बोली जाती हैं। गारो भाषा का प्रयोग मेघालय राज्य में होता है। नागालैंड राज्य में आओ, अंगामी, लोथा, तङ्खुल, सेमी, कोन्यक आदि भाषाएँ बोली जाती हैं। मिजोरम में मिजो, चकमा, ह्मार भाषाओं का प्रयोग होता है। अरुणाचल प्रदेश में आदी, तानी, अबोर, नोक्ते, अप्पातोनी, मिसिंग, हरुस्सो आदि भाषाएँ प्रयुक्त होती हैं। इसी परिवार की मणिपुरी भाषा मणिपुर के दक्षिण-पूर्व हिमालय-क्षेत्र की प्रमुख भाषा और मणिपुर राज्य की राजभाषा है। यह इम्फाल, थोबल और बिशनपुर जिलों की मातृभाषा के रूप में बोली जाती है। इसे मैतेई या मीते लोन भाषा भी कहते हैं। आस्ट्रो-एशियाटिक भाषा परिवार को आग्नेय या मुंडा परिवार भी कहा जाता है। इस परिवार की खासी, जैंतिया, वार आदि भाषाएँ मुख्यतः मेघालय में बोली जाती हैं। ताई-कादाई भाषा परिवार की भाषाएँ मुख्य रूप से दक्षिण चीन और दक्षिण-पूर्वी एशिया में बोली जाती हैं। पहले यह भाषा-परिवार चीनी-तिब्बती भाषा परिवार के अंतर्गत माना जाता था किंतु अब इसे स्वतंत्र भाषा-परिवार के रूप में वर्गीकृत किया गया है। कुछ विद्वान इसे आस्ट्रोनेशियन भाषा परिवार की शाखा भी मानते हैं। पूर्वोत्तर भारत में इसकी अहोम भाषा असम की ब्रह्मपुत्र नदी के घाटी-क्षेत्र में बोली जाती है। खामती, ताई-फाके आदि भाषाएँ असम और अरुणाचल प्रदेश के कुछ भागों में बहुत कम संख्या में बोली जाती हैं। पूर्वोत्तर की उपर्युक्त भाषाओं में असमिया, मणिपुरी और बोडो भाषाएँ संविधान की अष्टम अनुसूची में उल्लिखित हैं। यहाँ यह बताना असमीचीन न होगा कि यूनेस्को ने 2009 में विश्व की संकटग्रस्त भाषाओं और लुप्तप्राय भाषाओं का जो एटलस जारी किया था, उसके अनुसार भारत की 196 भाषाएँ संकटग्रस्त और लुप्तप्रायः भाषाएँ हैं जिनमें 80 भाषाएँ सिर्फ पूर्वोत्तर भारत की हैं। इन 80 संकटग्रस्त भाषाओं में अकेले अरुणाचल प्रदेश की 36 संकटग्रस्त भाषाओं की श्रेणी में आती हैं। असम में राभा, कार्बी, देओरो आदि भाषाएँ, मणिपुर मैं कबूई, कुकी, कोन्यक, ताङ्खुल, हालते आदि भाषाएँ, अरुणाचल प्रदेश में आदी, मोपा, बुगुन, खाम्ती, चुग, खंबा, आप्तानी, न्यीशी, सिंहफो, साजोलाई, जाखरींग, शेरदुक्येन आदि भाषाएँ, नागालैंड में अंगामी, लोथा, सेमा, फोम, इम्चुङर आदि भाषाएँ, मिजोरम में लुशाई, चकमा आदि भाषाएँ, मेघालय में आलोंग, रुगा, गड्ग्ते, प्नार, ल्यङ्ग्ङ्गम (सलदहदहंउ) आदि भाषाएँ, त्रिपुरा में हमर, पैते, जमातिया आदि भाषाएँ और सिक्किम में लेप्चा आदि भाषाएँ असुरक्षित, संकटग्रस्त, अति संकटग्रस्त और लुप्तप्रायः भाषाएँ मानी गई हैं। इनका प्रयोग या तो बहुत ही कम है या कभी-कभार आंशिक रूप में होता है और वह भी बुजुर्गों में। यह न तो मातृभाषा के रूप में पढ़ाई जाती है और न ही नई पीढ़ी इस का प्रयोग करती है।

पूर्वोत्तर भारत की अधिकतर भाषाएँ समसंरचनात्मक भाषाएँ हैं। भारत-आर्य भाषा-परिवार की असमिया, नेपाली, त्रिपुरी आदि भाषाएँ तथा चीनी-तिब्बती भाषा-परिवार की मणिपुरी, बोड़ो, गारो, राभा, कार्बी, आओ, अगामी, लोथा, आदी, मिजो, चकमा, आदि भाषाओं का पदक्रम कर्ता-कर्म-क्रिया है जबकि आस्ट्रो-एशियाटिक भाषा-परिवार की खासी, जैंतिया आदि भाषाएँ का पदक्रम कर्ता-क्रिया-कर्म है। ताई-कादाई भाषा-परिवार की अहोम, खामती आदि भाषाओं का पदक्रम कर्ता-कर्म-क्रिया, कर्ता-क्रिया-कर्म और कर्म-कर्ता-क्रिया तीनों में संभव है। इस परिवार की भाषाएँ तान-प्रधान हैं और इसी प्रकार मणिपुरी भी तान-प्रधान भाषा है। खासी, मणिपुरी आदि कुछ भाषाओं के लिंग-विधान में चार लिंग अर्थात पुल्लिंग, स्त्रीलिंग, उभयलिंग और नपुंसकलिंग हैं। खासी जैसी कुछ भाषाओं में विशेषण प्रायः संज्ञा के बाद में आता है। यदि हिन्दी भाषा के साथ इन भाषाओं की तुलना की जाए तो पूर्वोत्तर की अधिकतर भाषाओं का पदक्रम हिन्दी अर्थात कर्ता-कर्म-क्रिया के समान है जबकि कुछ व्याकरणिक संरचनाओं में भिन्नता मिलती है।

भारतीय भाषाओं के अंतर्संबंध में पूर्वोत्तर की भाषाओं का विशेष योगदान है तो भारतीय भाषाओं के अपने-अपने साहित्य के अलग-अलग होते हुए भी उनमें एकता, तादात्म्य और अंतर्संबंध भी निहित है। इनमें पूर्वोत्तर के साहित्य की भी विशेष भूमिका है जो भारतीय साहित्य को भारत की केवल मुख्य धारा के साहित्य को समाहित नहीं करता वरन पूर्वोत्तर भारत की भाषाओं के साहित्य को भी अपने भीतर अंतर्भुक्त कर लेता है। असमिया के भक्त कवि शंकर देव, आधुनिक साहित्य के लक्ष्मी नाथ बरुआ, हेमचंद्र गोस्वामी, बारदोली, चंद्र कुमार अग्रवाल, रजनी कांत बारदोली, हितेश्वर बारबरुआ, असमिया नई कविता के प्रणेता बीरेंद्र फूल गोस्वामी, हरेंद्र कुमार भूयान, मनोज कुमार गोस्वामी, अभिजीत शर्मा बरुआ, बंदिता फुकन ने असमिया साहित्य के विकास में विशेष योगदान किया है। साथ ही रामायण, महाभारत आदि महान ग्रंथों के असमिया अनुवाद से भारतीय साहित्य का संवर्धन किया है। मणिपुरी साहित्य में एम के बिनोदिनी देवी, अरिबम श्याम शर्मा, रत्न थियाम,एच गुणो सिंह आदि लेखकों की विशेष भूमिका रही है। 20वीं शताब्दी के ख्वाइरक्पम के उपन्यास लवंग लता से मणिपुरी साहित्य की श्रीवृद्धि हुई है। हिजम अंगङ्घल सिंह की कंस बध, सुभद्रा हरण काव्यों ने भारतीय साहित्य के सांस्कृतिक पक्षों को उजागर किया है। चोबा सिंह, लंबाम कमाल सिंह मणिपुरी साहित्य के सुविख्यात साहित्यकारों ने न केवल मणिपुरी साहित्य के हैं वरन वे भारतीय साहित्य के भी साहित्यकार हैं। बोडो साहित्य की भी भारतीय साहित्य में विशेष भूमिका है। बोडो साहित्य सभा अर्थात बर'थूनलाई आफाद' बोडो साहित्य के विकास में बहुत काम कर रही है। ब्रोजेंद्र कुमार ब्रह्मा, अनिल बोरा आदि साहित्यकार बोडो साहित्य के संवर्धन में काफी योगदान कर रहे हैं। मिजो साहित्य के विकास में अविथांगा, पसेना, लालसियामा, लालगुरलियाना आदि साहित्यकारों का विशेष योगदान है। केरोलिन मराक ने अपने गारो लिटेरचर पुस्तक में गारो भाषा के गीतों, लोकगीतों, लोककथाओं आदि का जो संकलन किया है उससे गारो साहित्य का सुंदर परिचय मिलता है। खासी भाषा में भी साहित्य का विशेष स्थान है। संस्कृत से भगवद्गीता आदि ग्रंथों और अंग्रेजी के महान कवि शेक्सपियर के मेकबेथ, रोमियो जूलियट आदि कई नाटकों का अनुवाद खासी भाषा में हुआ है। डी एस लिंदोह, बी आर खरलुखी, खोंग्दूप आदि खासी साहित्य के जाने-माने साहित्यकार हैं। इस प्रकार पूर्वांचल की भाषाएँ, साहित्य और संस्कृतियों का विशेष स्थान है।

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि पूर्वोत्तर भारत की अधिकतर भाषाओं में परस्पर बोधगम्यता नहीं है, क्योंकि ये भाषाएँ न तो भाषापरक दृष्टि से विभाजित हैं और न ही भौगोलिक दृष्टि से, बल्कि जाति-आधारित भाषाएँ हैं। ये जातियाँ पहले आदिवासी के रूप में प्राय: सूदूर अकेले रहती थीं और इनमें परस्पर संपर्क बहुत ही कम था। अब इन जातियों में एक-दूसरे से संपर्क बढ़ रहा है और ये नगरों की ओर अग्रसर हो रही हैं। स्वतंत्रता से पूर्व ब्रिटिश साम्राज्य के आधिपत्य और ईसाई मिशनरियों के प्रचार-प्रसार से इन्हें अंग्रेजी भाषा को अपनाना पड़ा। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद हिन्दी के भारत की राजभाषा घोषित होने के बाद हिन्दी पूर्वोत्तर राज्यों की आवश्यकता बन गई। इस समय इन राज्यों में, विशेषकर शहरी क्षेत्रों में अंग्रेजी और हिन्दी का संपर्क भाषा के रूप में प्राय: प्रयोग होता है और कहीं-कहीं असमिया भाषा भी संपर्क भाषा के रूप में प्रयुक्त होती है। इन राज्यों में अंग्रेजी का वर्चस्व अधिक है और लगभग सभी राज्यों में अंग्रेजी का प्रयोग राजभाषा के रूप में होता है। अत: इन राज्यों की भारत की मुख्य धारा में लाने के लिए तथा राष्ट्रीय एकता और अखंडता के लिए हिन्दी का प्रसार और विकास इन राज्यों में करना अनिवार्य है। वास्तव में हिन्दी भाषा और साहित्य की भूमिका समन्वयपरक है जो समूचे देश की भाषिक चेतना और भावात्मक प्रकृति को एक-साथ जोड़ सकती है। इस लिए समय आ गया है कि हिन्दी को भारत के सुदूर क्षेत्र पूर्वोतर को भारतीय संस्कृति और परंपरा से जोड़ा जाए क्योंकि पूर्वांचल की संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी ही काम कर सकती है।

पूर्वांचल की अधिकतर भाषाएँ लिपिहीन हैं। असम में असमिया लिपि का प्रयोग होता है। मणिपुर की लिपि मैतेइ मेयक तो है किंतु वहाँ अधिकतर रोमन और बांग्ला लिपि का प्रयोग होता है। बोडो भाषा ने देवनागरी लिपि को अपना रखा है। शेष भाषाओं में रोमन लिपि का प्रयोग हो रहा है। लेकिन यह विचारणीय है कि देवनागरी लिपि पूर्वांचल की भाषाओं के लिए अधिक उपयुक्त है। देवनागरी की एक विशेषता है कि इन भाषाओं की ध्वनि-प्रक्रिया को देवनागरी लिपि में समायोजित किया जा सकता है। देवनागरी लिपि की विस्तृत वर्णमाला में भारत की अनेक भाषाओं की ध्वनियों को अपने भीतर समेटा जा सकता है और समेटा गया भी है। यह लिपि पूर्वांचल की भाषाओं को एक-सूत्र में बाँध सकती है और इससे पूर्वांचल की भाषाओं तथा संस्कृतियों का प्रसार और विकास होगा।

-प्रो. कृष्ण कुमार गोस्वामी
1764, औट्रम लाइन्स, डॉ मुखर्जी नगर (किंग्ज्वे कैंप), दिल्ली-09
ई-मेल : kkgoswami1942@gmail.com

''प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब होता है ।''
- रामचन्द्र शुक्ल

प्रतिनिधि कॉकबरक उपन्यास: परिचयात्मक विश्लेषण

'कॉकबरक' त्रिपुरा की प्रमुख जनजातीय बोली है। यह पूर्वोत्तर भारत की भाषाओं यथा, बोड़ो, गारो, दिमासा, कोच आदि की सहोदरी भाषा है। त्रिपुरा (भारत) के अतिरिक्त यह भाषा म्याँमार एवं बंगलादेश में भी बोली जाती है। कॉकबरक को अपने विकास के लिए 27 दिसम्बर 1945 ई. में गठित 'त्रिपुरा जनशिक्षा समिति', 'कोताल कथमा', 1954 (कॉकबरक भाषा की पहली पत्रिका), 'त्रिपुरा कॉकबरक साहित्य सभा', 1972 ई., आदि से स्पंदन मिला। इन संस्थाओं से जुड़े हुए चेतनशील नेताओं यथा, सुधन्य देबबर्मा, दशरथ देबबर्मा, नीलमणि देबबर्मा, अघोर देबबर्मा, श्यामलाल देबबर्मा आदि ने कॉकबरक को जन-जन तक पहुँचाकर चरम दरिद्रता के खिलाफ संघर्ष करते हुए कॉकबरक भाषा में शिक्षा का आन्दोलन शुरू किया। इससे जनजातियों में अपनी अस्मिता एवं अस्तित्व को तलाशने की आकांक्षा जागी। आम जनता की सदियों से दबी हुई इसी आकांक्षा को कॉकबरक के रचनाकारों ने कविता, गीत, कहानी, उपन्यास आदि में खुलकर जगह देना शुरू किया। जिससे यह भाषा जीवंत हो उठी। कॉकबरक की इस विकासयात्रा में 'त्रिपुरार कॉकबरक भाषार लिखित रूपे उत्तरण', 1972, (कॉकबरक भाषा की प्रथम आलोचनात्मक पुस्तक, लेखक: डॉ सुहास चट्टोपाध्याय, श्री कुमुद कुन्दू चौधुरी एवं श्री श्यामसुन्दर भट्टाचार्य) की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। स्पष्ट तौर पर कहा जाए तो एक विकसित भाषा के साथ नजदीकी संबद्धता और सदियों से उपेक्षा के दंश झेलने के बावजूद कॉकबरक भाषा में स्वयं को राज्य की सामान्य भाषा के रूप में बनाए रखने की ताकत है। इसका उदाहरण हमें इस भाषा में लिखे उपन्यासों में मिलता है।

उपन्यासों का उदय कॉकबरक साहित्य में एक ऐतिहासिक महत्व रखता है। इससे समकालीन सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक एवं राजनीतिक आन्दोलनों की गतिविधि की जानकारी आमजन को मिली, साथ ही नए समाज के गठन की दिशा का मार्गदर्शन भी हुआ। कॉकबरक के कथाकारों ने अपनी लेखनी द्वारा कॉकबरक-कथासाहित्य को एक गम्भीर साहित्य के रूप में न केवल प्रतिष्ठित किया, बल्कि अपनी अद्‌भुत शैली द्वारा कॉकबरक साहित्य के पाठकों की रूचियों का संस्कार कर असंख्य कॉकबरक पाठकों का निर्माण भी किया है। कॉकबरक गद्य-भाषा को उन्होंने जो शक्ति और क्षमता प्रदान की, उससे निश्चित रूप से कॉकबरक का उज्ज्वल भविष्य का निर्माण हुआ है। अब तक इस भाषा में दस मौलिक उपन्यास लिखे जा चुके हैं, जिनका सामान्य परिचय इस प्रकार है-

1. हाचुक खुरिवो (पहाड़ की गोद में): सुधन्य देबबर्मा, 1987 ई.

2. खङ (सीमा-रेखा): श्यामलाल देबबर्मा, 1996 ई.

3. रूङ (नाव): नन्दकुमार देबबर्मा, 2001 ई.

4. मोनाकनि पहर (रोशनी की किरण): कुंजबिहारी देबबर्मा, 2002 ई.

5. 'लाङमानि रुकुङ' (जीवन-संघर्ष): सुनील देबबर्मा, 2003 ई.

6. '1980': डॉ. अतुल देबबर्मा, 2005 ई.

7. 'तङथाई नायतोगोई' (आश्रय की तलाश में): श्यामलाल देबबर्मा, 2007 ई.

8. 'दलाई तोयमा नारो' (दलाई नदी के तट पर): बिजय देबबर्मा, 2008 ई.

9. लखोपति: शेफाली देबबर्मा, 2010 ई.

10. चेथुवाङ: सुधन्य देबबर्मा, 2017 ई.

हाचुक खुरिवो (पहाड़ की गोद में): सुधन्य देबबर्मा, 1987 ई.

चार खण्डों में लिखित 'हाचुक खुरिवो' उपन्यास कॉकबरक भाषा का प्रथम प्रकाशित उपन्यास है। इसमें त्रिपुरा के जनजातीय समाज की पड़ताल करते हुए उसके मन की तहों में पड़े हुए जख्मों का बारीक चित्रण किया गया है। अपने बुनियादी अधिकारों से वंचित होने की व्यथा और व्यवस्था की भेंट चढ़ते जनजातियों के जंगल और जमीन के सवालों से टकराती हुई यह रचना युग-संधि काल में त्रिपुरा की जनजातियों के जीवन में उत्पन्न समस्याओं का खुलासा करती है। एक तरफ जनजातियाँ राजतंत्र से जनतंत्र की ओर अग्रसित हो रही थीं तो दूसरी तरफ जनजातियों की प्राचीन कृषि पद्धति अर्थात झूमकृषि पद्धति टूटकर चरमरा रही थी। ऐसी ही विषम परिस्थितियों में पर्वतीय त्रिपुरा में गैर जनजातियों का भी निरंतर प्रवेश हो रहा था, जिससे भूमि संकट, जनजातियों के बाहरी जातियों के साथ नए संबंध, उनके साथ लगातार सामाजिक-सांस्कृतिक आदान-प्रदान से जनजातीय जीवन मूल्यों एवं पद्धति में टूटन, बिखराव की स्थिति उत्पन्न हो गयी थी। जिससे उनकी सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्था प्रभावित हो रही थी। इसका पहला सबसे बड़ा दुष्परिणाम यह निकला कि आदिम जनजीवन की अभ्यस्त जनजातीय समाज-व्यवस्था टूटकर नए-नए रूपों में उभरने लगी। दूसरा, समतल कृषि में परिवर्तित होने के बाद जनजाति कृषक तीन भागों में बँट गए- मध्यवर्गीय कृषक, गरीब कृषक एवं भूमिहीन झूमिया (कृषक)।

गौरतलब है कि जनजाति समाज में जाति और अर्थ के आधार पर कोई वर्ग नहीं होता था, लेकिन जबसे वे तथाकथित सभ्य एवं सुसंस्कृत जाति के संपर्क में आई, उनके समाज में भी श्रेणी विभाजन होने लगा। इसी बीच राजस्व की नई नीतियाँ भी आईं, फलस्वरूप राज्य के सारे जंगल एवं जमीन राज-शक्ति के अंतर्गत चले गए। जिससे जनजातियों को मजबूरन प्राचीन कृषि पद्धति छोड़कर समतल कृषि करनी पड़ी। जो दूरदर्शी थे, वे झूम एवं समतल कृषि दोनों करने लगे और मध्यमवर्गीय कृषक बन गए। उनसे कम दूरदर्शी वाले जीवन के दाँव-पेच न जानने के कारण थोड़ी सी समतल भूमि पर ही अधिकार जमा सके, वे ही लोग गरीब कृषक कहलाए और जो दोनों जगहों से वंचित हुए, वे भूमिहीन झूमिया या कृषक कहलाए, जिसकी उपन्यास में बार-बार चर्चा की गई है।

उपन्यास की कथ्य भूमि मोताई दङगर गाँव है। जहाँ बंकुमणि, मंगल सरदार, गंगाचरण आदि मध्यवर्गीय कृषक, उपन्यास का नायक नरेन के पिता बुदराय, हरजय आदि जैसे गरीब कृषक एवं दुखिया, फातङ दियारी आदि भूमिहीन झूमिया (कृषक) रहते हैं। इसी गाँव में नरेन और बिमल जैसे आदर्श पात्र, प्रमोद, भारत चन्द्र एवं माधवी जैसे पथभ्रष्ट, दिशाहीन युवक-युवती, भक्तमणि जैसे युग-संधि के पात्र, शिक्षा-प्रचार के नाम पर जनजाति युवतियों को बहलाने-फुसलाने वाले मधु मास्टर जैसे गैर जनजाति चरित्र भी रहते हैं। जिनके इर्द-गिर्द उपन्यास की घटनाएँ घटित होती हैं। इसके अतिरिक्त उपन्यास के अन्य प्रमुख पात्र हैं- कॉमरेड सुमन्त, दशराम, दुर्बासा आदि जो कि समाज सुधारक एवं साम्यवादी विचारधारा के संवाहक नेता हैं।

उपन्यास में गंगाचरण, मंगल सरदार आदि के माध्यम से महाजनी प्रथा को भी उठाया गया है। इस प्रथा के कारण भी जनजातियों का जीवन मुश्किल हो गया था। यह प्रथा उन्हें कमजोर बनाती थी और यहीं से शुरू होता था अभावों का कभी न खत्म होने वाला सिलसिला। उपन्यास में नरेन के पिता सहित गाँव के प्रायः सभी जनता इस प्रथा के चंगुल में फँसे हुए थे।

जनजातियों के निरंतर पिछड़ने के कारणों को भी उपन्यास में परत-दर-परत उघाड़ते हुए उपन्यासकार ने कई महत्वपूर्ण सवाल खड़े किए हैं, जैसे, 'राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक अव्यवस्थाओं के कारण चारों तरफ आन्दोलनों की गति तीव्र हो रही थीं। स्वतंत्रता के 25 वर्षों में देश में अनेक परिवर्तन हुए, बहुसंख्यक जनजाति अल्पसंख्यक हो गई, भूमि पुत्र अब शरणार्थियों-सा जीवन जी रहा है। उनकी आर्थिक, सामाजिक, शिक्षा एवं संस्कृति के विकास के लिए कोई भी स्वतंत्र पथ नहीं है, तथापि जाति-उपजातियों के विकास के लिए संविधान में अनेक लिखित नियम हैं।'

उपन्यास में यह भी उल्लेख मिलता है कि यहाँ के राजाओं द्वारा किए गए प्रत्येक युद्ध में जनजाति वीरों ने अपनी जान पर खेलकर राजाओं की सहायता की। चाहे वह आराकान के साथ किया गया युद्ध हो या अविभाज्य बंगाल के नवाब के साथ किया गया युद्ध। बदले में जनजातियों को उम्मीद थीं कि शासक भी उनके विकास के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाएँगे, किन्तु ऐसा कुछ नहीं हुआ, बल्कि उन्हें विकास की मुख्यधारा से ही वंचित कर दिया गया। जिसको लेकर जनजातियों में असंतोष के स्वर बुलंद होते रहे। यह असंतोष पूर्व में कभी 'जमातिया विद्रोह' (परीक्षित विद्रोह), 'रियांग विद्रोह' (रतनमणि विद्रोह) तो कभी कूकी विद्रोह के रूप में दिखें। उपन्यास-लेखन काल में यह असंतोष उग्रवादी समस्या के रूप में उभरकर आया। इस तरह त्रिपुरा की जनजातियों के असंतोष के प्रमुख कारणों में आर्थिक एवं सामाजिक-सांस्कृतिक रहे हैं, अर्थात बाहरी लोगों ने इनके जीवन और जीवन पद्धति एवं इनकी परंपराओं में घुसपैठ की, इसलिए वे असंतुष्ट हैं।

इसके अलावा उपन्यास में जनशिक्षा आन्दोलन, कॉकबरक भाषा-साहित्य आन्दोलन, प्रकृति रक्षा, साम्यवादी विचारधाराओं पर आधारित 'त्रिपुरा गणमुक्ति परिषद', अस्तित्ववादी आन्दोलन 'त्रिपुरा उपजाति युवक समिति' एवं 'त्रिपुरा सुन्दरी नारी बाहिनी' जैसे कई सामाजिक, सांस्कृतिक, भाषिक एवं राजनीतिक आन्दोलनों के कार्यों पर गम्भीरता से विचार किया गया है।

'खङ' (सीमा रेखा): श्यामलाल देबबर्मा, 1996 ई.:

'खङ' (1996 ई.), श्यामलाल देबबर्मा द्वारा बरक जनजाति को केन्द्र में रखकर लिखा गया उपन्यास है, जिसके अंतर्गत बरक समाज के ताने-बाने, रीति-रिवाज, आचार-विचार, परंपरा, धार्मिक मान्यताओं को बारीकी के साथ उकेरा गया है। लेखक स्वयं इस समुदाय से संबंधित होने के कारण इसके धर्म, संस्कृति एवं समाज-व्यवस्था को बखूबी जानता और समझता है। अपने समाज एवं जनजाति के प्रति लेखक की यही समझ इस उपन्यास में अभिव्यक्त हुई है।

त्रिपुरी जनजाति के सबसे महत्वपूर्ण उत्सव 'केर पूजा' का वर्णन इस उपन्यास में देखा जा सकता है। लेखक ने पूरे मनोयोग से 'केर पूजा' का उद्देश्य, पूजा-पद्धति, मायलुमा-खुलूमा मोताई (धान एवं कपास की देवी), मामिता (नवान्न उत्सव), जनजीवन में लोकगीतों एवं कथाओं का महत्व, जनजातियों के रहन-सहन, खान-पान, जीवन-पद्धति, प्रकृति एवं संस्कृति आदि का चित्रण किया है। इन्हीं चर्चाओं के बीच उपन्यास का शीर्षक 'खङ' भी जनजाति-जीवन के विभिन्न पहलुओं के साथ अपना अर्थ प्रकट करता है।

लोकजीवन में 'खङ' का प्रयोग भूमि पर स्थायित्व एवं अस्थाई अधिकार जमाने के लिए किया जाता है, जैसे झूम-खेती के लिए जमीन सुनिश्चित करने के बाद उसकी सीमाओं पर या समतल खेतों के मेड़ पर बाँसों को चीरकर या पेड़-पौधों की कोमल टहनियाँ गाड़ दी जाती हैं। जिसे कॉकबरक भाषा में खङ कहा जाता है। इसके अतिरिक्त घर-आंगन के बाहर उग आई सब्जी या पेड़-पौधों पर अधिकार जमाने के लिए भी खङ का प्रयोग किया जाता है।

कॉकबरक भाषा-साहित्य आन्दोलन के साथ-साथ यह सवाल भी लगातार उठाया जाता रहा कि इस भाषा के लिए कौनसी लिपि अपनाई जाए। इसके लिए कई बैठकें की गईं, समितियाँ बनाई गईं, किन्तु यह समस्या आज तक सुलझ नहीं सकी। लेखक स्वयं बैठकों में भाग लेते रहे हैं और समितियों के सदस्य भी रहे इसलिए वे विवेच्य उपन्यास में भी इस मुद्दे को उठाते हैं। अभी-अभी ईसाई धर्म में दीक्षित हुए मिहिर एवं पादरी सुमन रियांग के अनुसार- 'मिजो जनजाति का वर्तमान सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक उत्थान ईसाई धर्म एवं अंग्रेजी भाषा को अपनाने के कारण है, इसलिए यहाँ की जनजातियों को भी ईसाई धर्म ग्रहण कर लेना चाहिए।' अर्थात कॉकबरक भाषा के लिए रोमन लिपि ही अपनाई जाए, किन्तु उपन्यास का नायक बिचाङ चाहता है कि कॉकबरक भाषा बंगला लिपि में लिखी जाए और बंगला भाषा-साहित्य के साथ कदम से कदम मिलाकर आगे बढ़े। उनके अनुसार बंगला भाषा एवं संस्कृति को अब नकारा नहीं जा सकता, क्योंकि उसे नकारने का अर्थ है, उन बहुत सारी मान्यताओं, मर्यादाओं, परंपराओं, विचार-मूल्यों को नकार देना, जो हमारी सोच, संवेदना में ही नहीं, बल्कि हमारे सृजन-संसार में दाखिल होकर हमारे साहित्य, नृत्य, चित्रकला, संगीत आदि में अभिव्यक्त हो रहे हैं। उपन्यास में जनजाति समाज में विद्यमान विभिन्न धार्मिक मुद्दों को भी उठाया गया है, जिसमें त्रिपुरी वैष्णव और त्रिपुरी ईसाई के बीच हुए धार्मिक मतभेद मुख्य है।

इस प्रकार 'खङ' उपन्यास के माध्यम से रचनाकार ने जनजातियों के बीच प्रचलित परंपराओं, रूढ़ियों, विश्वास एवं मान्यताओं, संस्कारों, छोटी-बड़ी दैनिक घटनाओं एवं दुःख-दर्द के बीच सदियों से जो जीवन-धारा चली आ रही है उसका खुलासा किया है। इस संदर्भ में विवेच्य उपन्यास 'खङ' आधुनिक कॉकबरक भाषा-भाषी समाज का सचमुच आइना है।

'रूङ' (नाव): नन्दकुमार देबबर्मा, 2001 ई.

रूङ (सन्‌ 2001 ई.) नन्दकुमार देबबर्मा द्वारा रचित प्रसिद्ध कॉकबरक उपन्यास है। उपन्यास का समय 1950 ई. से 1970 ई. तक का है। जिसकी कथा का मूल आधार दुम्बूर बाँध निर्माण के क्रम में राइमा-सरमा नदी के किनारे रहने वाली बरक जनजाति के विस्थापन से उत्पन्न दुःख-दर्द, गरीबी, निरक्षरता, बेरोजगारी और भूमिहीनता है। दूसरे शब्दों में कहे तो बरक जनजाति विकास के नाम पर किस तरह व्यवस्था द्वारा ठगी गई, इसका खुलासा प्रस्तुत उपन्यास में किया गया है।

तत्कालीन त्रिपुरा सरकार द्वारा आधुनिकता एवं विकास के नाम पर राइमा एवं सरमा नदियों के संगम स्थल पर एक बाँध बनाया गया था, जिसे स्थानीय भाषा में दुम्बूर प्रोजेक्ट या बाँध कहा जाता है। विडम्बना यह है कि जब प्रोजेक्ट की योजना को अमली जामा पहनाया जा रहा था, तब कायदे से उसके आस-पास बसे हुए जनजातीय समाज के लोगों से पूछा जाना चाहिए था, पर ऐसा नहीं हुआ, न ही उन्हें इस योजना की जानकारी दी गई थी। नतीजा यह हुआ कि जब बाँध बनकर तैयार हुआ तो एक-एक करके आस-पास के गाँव पानी में डूबते चले गए और वहाँ बसे लोगों को रातों-रात विस्थापित होना पड़ा। राइमा-सरमा से विस्थापित होकर वे और घने जंगलों एवं पहाड़ों में चले जाते हैं और यहीं से शुरू होती है उनके जीवन की करूण गाथा। साथ ही राइमा-सरमा की गोद से जन्म लेता है भुवन रूवाजा जैसा चरित्र।

त्रासदी यह है कि अब भुवन रूवाजा को कोई नहीं पहचानता है। उसके अपने रिश्तेदार, गाँव के लोग यहाँ तक कि दूर-दराज गाँवों में रहने वाले लोग भी उसे पागल ही कहते हैं। आज उसका परिचय केवल एक शब्द में सिमटकर रह जाता है 'भुवन कबर'। पढ़े-लिखे सभ्य लोगों की नजर में यह बाँध निर्माण समाज एवं जाति उत्थान के लिए था, बरक जनजाति का पुनर्जन्म, नया सूर्योदय था, साथ ही नई रोशनी भी। भुवन रूवाजा पढ़ा-लिखा और समझदार नहीं था, इसलिए उसे ये बातें समझ में नहीं आई। उसे बस इतना ही पता था कि उसके पूर्वजों की भूमि उसे अब वापस नहीं मिलेगी। वह जिन्दगी द्वारा ठगे गए, जादुनि लाङमानि बुमूल अर्थात जीवन के अनचिह्नें कसीदेकारी अब स्मृति या यादों का हिस्सा है। रात और दिन कुछ भी नहीं बदले, वही हवाएँ, वही प्रकाश, वही धरती और आकाश हैं, सब पहले जैसे हैं। आज भी साल भर गाँवों में लोकोत्सव मनाए जाते हैं। ऋतुएँ आती हैं और चुपचाप चली जाती हैं लेकिन बरसात के दिनों में टूटे छप्पर से जैसे लगातार पानी टपकता है उसी तरह भुवन रूवाजा की आँखों से पानी बहता है। और वह पूरी शक्ति से चिल्लाकर ध्यान मग्न जलसागर से कहता है-'मेरे गाँव और हूक को तुम कहाँ ले गए, मुझे मेरे गायरिंग और चखा लौटा दो।'

विवेच्य उपन्यास में भुवन रूवाजा के माध्यम से जहाँ विस्थापन के बाद उत्पन्न हुए बरक जनजाति की असीम वेदना एवं अस्तित्व-संघर्ष की कथा कही गई। वहीं लेखक अतीत के कुछ सुन्दर दृश्य को भी प्रस्तुत करते हैं। भुवन रूवाजा के गाँव का वर्णन

लेखक ने कुछ इस तरह से किया- 'पानी से घिरे हुए छोटी-छोटी पहाड़ी टीलों के बीच बसे हुए भुवन रूवाजा के गाँव में आसमान कुछ गहरे नीला रंग में डूबा रहता था। चाँदनी की ठंडक रातों की शोभा बढ़ाती थी। गाँव में प्रत्येक दिन अनुष्ठान एवं उत्सव मनाए जाते थे। मानो जैसे लोग खुशियों के नशे में डूबे रहते हों। युवक-युवतियों के हाथों से दाङदू और चङप्रेङ कभी अलग नहीं होते थे। युवतियों की नखरे और उनके चेहरों पर खिलती मुस्कान उनके भीतर के उल्लास को उजागर करती थी। प्रेमी द्वारा बुइसू में दी गई 'रिसा' उनके गोरे रंग पर चार चाँद लगाती थी।'

उपन्यास में बिदु बाबू जैसे नेताओं के चरित्र पर भी व्यंग्य किया गया है जो केवल वोट बैंक बढ़ाने के लिए बार-बार आम जनता को ठगते हैं। उनसे बड़े-बड़े वायदे करते हैं, सपने दिखाते हैं, लेकिन अपना उल्लू सीधा होते ही तुरंत गाँव वालों को भूल जाते हैं। उपन्यास में जब आम जनता कई समस्याओं से जूझ रही थी, तब बिदू बाबू जैसे नेता कहीं भी नहीं थे। इनमें केवल बाहर के यानी गैर आदिवासी ही लोग नहीं थे, कुछ स्थानीय लोग भी शामिल थे। एक तरफ इस तरह की विषम स्थितियाँ थीं तो दूसरी तरफ बरक समुदाय के कुछ पढ़े-लिखे लोग यानी शिक्षित वर्ग जिसने दुनिया देखी हुई है, जो समझदार कहलाते हैं। उनके आचार-विचार भी समाज को दिशाहीन बनाते हैं।

अंतत: यह कहा जा सकता है कि विवेच्य उपन्यास आधुनिक समाज के विकास संबंधी मॉडल को स्वीकार नहीं करता है। यह विकास और प्रगति किसके लिए हैं और किस कीमत पर किया जा रहा है। विकास के नाम पर क्यों जनजातियों को उनके भूगोल और इतिहास से वंचित किया जाता है आदि अनेक सवालों से यह उपन्यास बार-बार टकराता है। चूँकि लेखक मूलत: कवि है, इसलिए उपन्यास की भाषा काव्य-भाषा के काफी करीब है, किन्तु इससे उपन्यास के भाव एवं विचार को समझने में कोई बाधा उत्पन्न नहीं होती है।

मोनाकनि पहर (रोशनी की किरण): कुंजबिहारी देबबर्मा, 2002 ई.

कॉकबरक उपन्यास की विकास यात्रा में 'मोनाकनि पहर' (2002 ई.) का अपना महत्व है। उपन्यास का आधार जनजाति समाज एवं संस्कृति है। आधुनिक सुख-सुविधाओं से वंचित दूर पहाड़ी जंगलों में निवास करने वाली जनजातीय-संस्कृति ही आज खतरे में नहीं, बल्कि उसकी अपनी पहचान एवं जीवन-मूल्य भी कटघरे में हैं। वे आज दिशाहीन जीवन जीने के लिए बाध्य हैं। ऐसे में विवेच्य उपन्यास नई रोशनी और राह लेकर पाठकों के बीच उपस्थित होता है। सिदान, सुजूमुखि, गंगाचरन, आनाकति, तिसना, सुबिचन्द्र, रामनाथ सरदार आदि उपन्यास क प्रमुख चरित्र हैं। जिसके माध्यम से बरक जनजाति के आचार-विचार, भाषा-भाव, आशा-आकांक्षा, सुख-दुख और सूझ-बूझ आदि को वाणी दी गई है।

लाङमानि रुकुंगो (जीवन-संघर्ष): सुनील देबबर्मा, 2003 ई.

यह स्त्री-जीवन पर आधारित उपन्यास है। सुमति के पिता के गुजर जाने के बाद घर की बड़ी बेटी होने के कारण सारी जिम्मेदारी उसके कंधे पर आ जाती है। चार भाई-बहनों में सुमति सबसे बड़ी है। वह हर जिम्मेदारी को बखूबी निभाती है, जिसमें बादराई नामक युवक उसकी मदद करता है, लेकिन पारिवारिक दायित्वों को उठाते-उठाते सुमति स्वयं जीवन में अकेली रह जाती है, यही उसका जीवन-संघर्ष है। उपन्यासकार ने उसके इस संघर्ष को पूरी ईमानदारी के साथ उपन्यास में चित्रित किया है। इसके अलावा उपन्यास में जनजाति समाज-व्यवस्था, रीति-रिवाज, मूल्यों आदि पर भी प्रामाणिकता के साथ विचार किया गया है।

'1980': डॉ. अतुल देबबर्मा, 2005 ई.

विवेच्य उपन्यास त्रिपुरा में वर्ष '1980' में जनजाति एवं गैर जनजाति के बीच हुए सांप्रदायिक दंगे को आधार बनाकर लिखा गया है, दूसरे शब्दों में कहे तो यह एक संघर्ष की कथा है। भारत संघ में विलय से पहले त्रिपुरा में राजतंत्र कायम था। उसकी अपनी स्वतंत्र व्यवस्था थी, परन्तु भारत स्वतंत्रता के बाद अक्टूबर, 1949 में राजनीतिक, सामाजिक-सांस्कृतिक कारणों से त्रिपुरा राज्य को भारत संघ में शामिल होना पड़ा। इसी बीच पूर्व पाकिस्तान और पश्चिम पाकिस्तान के बीच भाषा, संस्कृति और धर्म को लेकर मतभेद शुरू हुआ परिणाम-स्वरूप असंख्य बंगलादेशियों को भारत के पड़ोसी राज्यों में आश्रय लेना पड़ा, जिसमें त्रिपुरा भी शामिल था। नतीजा यह निकला कि बंग्लादेश से लगातार गैर-आदिवासियों के प्रवेश के कारण त्रिपुरा में आदिवासी समुदाय धीरे-धीरे बहुसंख्यक से अल्पसंख्यक हो गए। इस समस्या का समाधान निकालने के लिए अर्थात् अपनी जमीन एवं अस्तित्व की रक्षा करने के लिए आदिवासी समुदाय ने TTAADC (Tripura Tribal Area Autonomous District Council) की मांग की। सन् 1979 ई. में त्रिपुरा विधानसभा द्वारा TTAADC के बिल को पास किया गया। उसके बाद यह बिल संसद में भी पास हो गया, लेकिन त्रिपुरा में गैर आदिवासियों के विरोध के चलते यह बिल लागू नहीं हो रहा था। तब आदिवासियों ने उदयपुर शहर में एक विशाल आन्दोलन का आयोजन किया। इस आन्दोलन में हजारों की तादाद में स्त्री-पुरुष शामिल हुए। इस आन्दोलन को रोकने के लिए कुछ गैर-आदिवासियों ने आन्दोलनकारियों पर

आक्रमण कर किया जिसके कारण अनेक आदिवासी युवक शहीद हो गये। इस तरह दोनों समुदायों के बीच संघर्ष शुरु होता है। यह संघर्ष इतना बढ़ जाता है कि एक गांव दूसरे गांव में जाकर मार, काट, हत्या, आगजनी करने लगते हैं। इन आक्रमणों से दोनों समुदाय के हजारों बेगुनाह लोग मारे जाते हैं। गैर आदिवासी समुदाय सरकार से संरक्षण पाकर इस घाव से जल्दी उबर आते हैं लेकिन आदिवासी समुदाय के लोग अपने प्राणों की रक्षा करने के लिए घने जंगलों में भाग जाते है। वे जंगलों में भटकते हुए भूख-प्यास एवं बीमारी से भी मारे जाते हैं। पुलिसकर्मियों को देखकर वे और भी भयभीत हो जाते हैं क्योंकि पुलिस ने भी साधारण जन के साथ मिल कर आदिवासियों पर बहुत जुल्म किया था। आदिवासियों पर झूठा केस दर्ज कर उनको जेल में ले जाकर सताते थे। सरकार की ओर से आदिवासियों के लिए शरणार्थी शिविर लगाए गए और आदिवासियों को शिविर में किसी तरह लाया गया। एक दिन जिन आदिवासियों ने बंगलादेश से आये हुये शरणार्थियों को आश्रय दिया था, छत दी थी, उनको क्या पता था कि एक दिन वे अपने ही देश में शरणार्थी हो जायेंगे। उपन्यासकार ने 1980 ई. में हुए साम्प्रदायिक दंगों, उससे उपजी समस्याओं और विषमताओं को काल्पनिक पात्रों के माध्यम से विवेच्य उपन्यास के चरित्रों एवं घटनाओं को यथार्थ रूप देने का प्रयास किया है।

त्रिपुरावासियों के लिए यह एक अविस्मरणीय घटना है। कहा जा सकता है कि इसी दंगे के माध्यम से ही त्रिपुरी आदिवासी समाज में नवजागरण आया। इसने कई सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तनों को जन्म दिया। 1980 में इसी संघर्ष को आधार बनाकर यह उपन्यास लिखा गया है। इस संघर्ष से सभी समुदाय के लोग प्रभावित हुए, किन्तु आदिवासी समुदाय ज्यादा प्रभावित हुआ। हजारों लोग इस दंगे के बलि चढ़े। अत: इस उपन्यास में दंगे के कारण हुए बर्बादी, दर्द, क्रन्दन, आदिवासियों के दर्दनाक दास्तान को मर्मस्पर्शी ढंग से चित्रित किया गया है। विवेच्य उपन्यास केवल आदिवासियों को ही केन्द्र में नहीं रखता बल्कि गैर आदिवासियों को भी परिस्थितियों से जूझते-संघर्ष करते दिखाया गया है। साथ ही उपन्यासकार आदिवासियों एवं गैर आदिवासियों के बीच संबंधों में सकारात्मकता को रेखांकित करना भी नहीं भूलते। इसके अतिरिक्त उपन्यास में जनजातियों के सामूहिक जीवन, संस्कृति, उनके रहन-सहन, रीति-रिवाज, पर्व-उत्सव, परम्पराएं एवं रूढ़ियों का भी सजीव चित्रण किया गया है।

'तङथाई नायतोगोई' (आश्रय की तलाश में): श्यामलाल देबबर्मा, 2007 ई.

'उपजाति गणमुक्ति परिषद' द्वारा संपादित पत्रिका 'लामा' में (जनवरी, 1987-दिसम्बर, 1992) धारावाहिक क्रम में छपते के दौरान ही चर्चा में आया श्यामलाल देबबर्मा का उपन्यास 'तङथाई नायतोगोई' कॉकबरक उपन्यास के विकास यात्रा की महत्वपूर्ण कड़ी है। विकास के नाम पर बन रही योजनाओं के कार्यान्वयन के दौरान जनजातियों की जमीन को सरकार द्वारा किस तरह छीनकर उन्हें जंगलों में भागने पर मजबूर किया गया, यह उसकी पीड़ाजनक कथा है। इस क्रम में बिसिराम, सेनाति, सरनि, हरमाला, मेलाति, राजकइना, सुकुति, सरला आदि चरित्रों के माध्यम से जनजातियों की घुटन, चुभन एवं कसक को प्रतिबिम्बित करते हुए उपन्यासकार ने जहाँ एक ओर जनजातीय जीवन में व्याप्त रूढ़ियों, अंधविश्वासों, अंध-परंपराओं पर कड़ा प्रहार किया, वहीं मानवीय संवेदनाओं को भी उभारा है। शिक्षा के प्रति तत्कालीन जनजातीय समाज में जैसी धारणा विद्यमान थी, उसे भी यहाँ देखा जा सकता है।

दलाई तोयमा नारो (दलाई नदी के तट पर): बिजय देबबर्मा, 2008 ई.

'दलाई तोयमा नारो' (2008 ई.) में उत्तर त्रिपुरा (वर्तमान में ढलाई) जिले की यथास्थिति का चित्रण किया गया है। उपन्यास का नायक एक कॉकबरक शिक्षक है जिसकी पोस्टिंग दलाई नदी के किनारे बसे हुए गाँव तोय सिकामबुक में होती है। 20वीं शताब्दी के अंतिम दशक में जाकर गाँव वालों को पहली बार किसी स्कूल के दर्शन होते हैं और इस स्कूल का पहला शिक्षक है सजल देबबर्मा। जिसे केन्द्र में रखकर उपन्यासकार ने गरीबी, अशिक्षा के बीच यहां के आदिवासियों के जीवन-संघर्ष का यथार्थ चित्रण किया है।

जहाँ देश के बाकी हिस्से के लोग बड़ी-बड़ी कम्पनी, बड़े-बड़े मॉल, उद्योग की बातें करते हैं। सपने इतने बड़े हैं कि वे आसमान और चाँद-सितारों को छूने की बात करते हैं, वहाँ उत्तर त्रिपुरा की दलाई नदी के किनारे रहने वाली जनजाति जीवन के आधारभूत जरूरतों, रोटी, कपड़ा और मकान के लिए संघर्षरत थी। उनके लिए भूख और प्यास इतनी बड़ी समस्या थी कि बाकी जरूरतों की ओर उनका ध्यान कभी जा ही नहीं पाया। यही कारण है कि जब नए स्कूल के उद्घाटन के लिए BDO साहब आ रहे थे तो खेतोमनि को अपने गाँववालों को बुलाकर समझाना पड़ा कि वे BDO साहब के सामने कपड़े पहनकर आएँ। बात इतनी पर भी नहीं बनी, उसे घर-घर जाकर स्त्री-पुरुष को कहना पड़ा कि पुरुष धोती पहनें और स्त्रियाँ कम से कम रिगनाई-रिसा पहनकर ही घर से बाहर निकलें जिसके पास ये सब नहीं है, वे कल बाहर न निकलें।

उपन्यास में खेतोमनि, चरोनिया, कोमपनि, दुखिया, चक्रधन, चिकनति, सजल आदि काल्पनिक चरित्रों के माध्यम से जनजाति समुदाय की समस्याओं, मान्यताओं एवं

रूढ़ियों-अंधविश्वासों का सजीव वर्णन किया गया है, साथ ही शिक्षा और चेतना के अभाव में वे कैसे अभावग्रस्त जीवन जीते हैं, राजनीतिक पार्टी और नेताओं द्वारा वे कैसे बेवकूफ बनाए जाते हैं, इसकी गम्भीरता से पड़ताल की गई है।

'लखोपति': शैफाली देबबर्मा, 2010 ई.

'लखोपति' (2010) नौकरानी 'सेनाति' को आधार बनाकर लिखा गया उपन्यास है। वह अपने मालिक को खुश रखने के लिए रात-दिन मेहनत करती है बावजूद इसके उसे न भरपेट भोजन मिलता है, न पहनने को ढंग के कपड़े और न ही उसे रहने लायक कमरा दिया जाता है फिर भी उसे जिन्दगी से कोई शिकायत नहीं है। यौवन की दहलीज पर कदम रखते ही उसे उपन्यास का नायक मनमोहन से प्रेम हो जाता है, लेकिन उसे प्रेम की प्राप्ति नहीं होती। नायक मनमोहन को उपन्यास के अंत में 'सेनाति' के महत्व का पता चलता है और वह उसे अपने जीवन में दुबारा पाना चाहता है, लेकिन सेनाति अपने जीवन में आगे बढ़ चुकी थी, जिससे मनमोहन को जीवन भर पछतावा होता है। उपन्यास में उग्रवादियों द्वारा किए जाने वाले जुल्म, अत्याचार और उसका जनजाति समाज पर प्रभाव को भी यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया गया है। उपन्यास में 'सेनाति' ऐसे नारी चरित्र है, जिसने अपने सुन्दर जिन्दगी के लिए कई ख्वाब देखे लेकिन एक भी ख्वाब पूरी नहीं हुई, बल्कि तथाकथित उग्रवादियों द्वारा बलात्कार का शिकार होती है और उसकी जिन्दगी नरक से भी बदतर हो जाती है।

'चेथुवाङ' (चेथुवाङ पेड़): सुधन्य देबबर्मा, 2017 ई.

'चेथुवाङ' सुधन्य देबबर्मा द्वारा लिखा गया प्रथम कॉकबरक उपन्यास है जो उन्हीं के द्वारा संपादित 'कोताल कथमा' पत्रिका में धारावाहिक क्रम में प्रकाशित हुआ परन्तु स्वतंत्र पुस्तक के रूप में पाठकों को यह तोहफा इसी वर्ष यानी 2017 को ही मिल पाया। उपन्यास की कथा एक चर्चित कॉकबरक लोककथा 'चेथुवाङ' पर आधारित है। मूल कथा में सामाजिक रीति-रिवाजों के खिलाफ जाकर बड़ा भाई अपनी ही छोटी बहन से शादी के लिए जिद करता है। माता-पिता, सगे-संबंधियों के समझाने एवं स्वयं छोटी बहन द्वारा प्रबल विरोध के बावजूद बड़ा भाई अपना निर्णय नहीं बदलता। परिणामस्वरूप आत्म-सम्मान की रक्षा के लिए छोटी बहन मृत्यु का मार्ग अपना लेती है। जिसमें 'चेथुवाङ' पेड़ उसकी मदद करता है। उपन्यासकार ने लोककथा के इस मूल अंश को केन्द्र में रखकर ही उपन्यास की कथा बुनी है।

उपन्यास में 'छेङतुङफा' नामक राजा के शासन की कल्पना की गई है, जिसके दरबार में तुगन खाँ नामक सामन्त रहता था, जो प्राय: राजा से नाखुश रहता था। वह दरबार के अन्य सामंतों को भी राजा के खिलाफ भड़काने का प्रयास करता था। साथ ही अविभाज्य बंगाल के नवाब से भी महाराजा छेङतुङफा की शिकायत किया करता था। एक दिन वह महाराजा छेङतुङफा के विरुद्ध षड्यंत्र रचने में सफल हो जाता है, जिसमें बंगाल का नवाब उसकी सहायता करता है। सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक कई कारणों के चलते बंगाल के नवाब से महाराजा छेङतुङफा युद्ध नहीं करना चाहता था। वह संधि के लिए बार-बार प्रयास करता है, लेकिन तब तक परिस्थितियाँ हाथ से निकल चुकी थी। दूसरी तरफ महारानी त्रिपुरेश्वरी संधि के खिलाफ थी और स्वयं तुगन खाँ को सजा देने के लिए उसके सैनिकों के विरुद्ध युद्ध छेड़ देती है। अंत में महाराजा छेङतुङफा भी युद्ध में योगदान देते हैं और त्रिपुरा का राज सैनिक इस युद्ध में विजयी होते हैं।

इस युद्ध से उपन्यास के नायक नुगराई एवं नायिका कर्मति का जीवन अत्यंत प्रभावित होते हैं। नायिका कर्मति स्वयंवरा होना चाहती थी, उसकी इच्छा का मान रखते हुए दादी स्वयंवर की सारी व्यवस्था करती है। स्वयंवर का नियम यह था कि जो 'खङरङ ' से ज्यादा से ज्यादा काँटें निकाल पाएँगे, कर्मति उसी के गले में वरमाला डालेगी, किन्तु कोई भी युवक इस शर्त की पूर्ति नहीं कर पाता है। ऐसी स्थिति में कर्मति की दादी विवाह के लिए इच्छुक नवयुवकों की शक्ति परीक्षा के लिए पुन: दिन एवं तारीख तय करती है। इसी बीच उपन्यास के नायक नुगराई मन ही मन कर्मति से प्रेम कर बैठता है। उसका दृढ़ विश्वास था कि इस शक्ति परीक्षा में सफल होकर वह सुन्दरी कर्मति को अवश्य वरण कर सकेगा, किन्तु दुर्भाग्यवश राज्य में युद्ध की घोषणा हो जाती है। महाराजा छेङतुङफा तुगन खाँ एवं बगाल के नवाब के विरुद्ध युद्ध करने जा रहा है, इस घोषणा मात्र से कर्मति की स्वयंवर में बाधा पड़ती है। नुगराई सहित स्वयंवर के अन्य सभी दावेदारों को राजसैनिक में शामिल होने के लिए चले जाना पड़ता है।

युद्ध के बाद जब नुगराई गाँव लौट आता है तो उसे पता चलता है कि युद्ध से कर्मति की स्वयंवर में भी बाधा पड़ी, किन्तु अब समस्या दूसरी है, वह यह कि स्वयं कर्मति का बड़ा भाई उससे विवाह करना चाहता है। भाई, बहन से विवाह करने जा रहा है, इसे लेकर समाज में कई प्रकार की चर्चाएँ शुरू हो जाती हैं, गाँव के सारे लोग इस विवाह के खिलाफ हैं। कर्मति भी इस विवाह का तीव्र विरोध करती है, आपत्ति जताती है। समस्या का समाधान न निकलता देख अंत में वह आत्म-सम्मान की रक्षा हेतु चेथुवाङ पेड़ पर चढ़कर आत्महत्या कर लेती है। इस घटना से नुगराई अत्यंत आहत होता है, वह अपनी मानसिक संतुलन खो बैठता है और यहाँ से वहाँ भटकने लगता है। कई सालों बाद वह अपने गांव एवं राज्य लौट आता है और

उसी चेथुवाङ पेड़ के नीचे आश्रय लेता है, जिस पर चढ़कर कर्मति ने आत्म-सम्मान की रक्षा की थी। चेथुवाङ के नीचे बैठकर नुगराई प्रत्येक दिन नई पीढ़ी को पूर्वजों की कहानी, उनके द्वारा बनाए गए सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों की कथा सुनाता है। इन उपन्यासों की खासियत ये है कि हिन्दी के शुरुआती उपन्यासों की तरह कॉकबरक के ये उपन्यास मनोरंजन, उपदेश, जासूसी, अथवा किसी काल्पनिक विषय पर नहीं लिखे गए, बल्कि बेहद सचेतन ढंग से त्रिपुरा की जनजातीय भाषा, सामाजिक-सांस्कृतिक बदलाव तथा अस्मिता की पहचान से संबंधित मुद्दों को ध्यान में रखकर लिखे गये हैं। इस अर्थ में इन उपन्यासों का समाज और इतिहास से वास्तविक और गहरा जुड़ाव दिखाई देता है। इस प्रकार कॉकबरक उपन्यास की कथायात्रा एक ऐतिहासिक यात्रा है, जिसमें कॉकबरक उपन्यास के इतिहास की दिशाएँ स्पष्ट रूप से देखी जा सकती हैं। यद्यपि कॉकबरक में उपन्यासों की संख्या अधिक नहीं है, लेकिन त्रिपुरा की जनजातीय भाषाओं एवं साहित्य के विकास की दृष्टि से इनके महत्व को कम नहीं समझा जा सकता।

1. सं. कुमुद कुन्दू चौधुरी: 'पहाड़ की गोद में' (हाचुक खुरिवो': सुधन्य देबबर्मा, अनूदित), पेज नं. 175-176, अक्षर पब्लिकेशन, अगरतला, 2004
2. त्रिपुरा के प्रमुख आठ जनजाति समुदाय को बरक कहा जाता है। जिसके अंतर्गत त्रिपुरी/देबबर्मा, रियांग, जमातिया, नोवातिया, उचई, रुपिनी, मुरासिंह एवं कलई जनजातियाँ आती हैं।
3. खङ, श्यामलाल देबबर्मा, पृ. 29
4. सरमा नदी को स्थानीय भाषा में साइमा नदी भी कहा जाता है।
5. बरक जनजाति के अंतर्गत त्रिपुरा की आठ मुख्य जनजातियाँ आती हैं, यथा, त्रिपुरी/देबबर्मा, रियांग, जमातिया, नोवातिया, मूरासिंह, रुपिनी, कलाई एवं उचई।
6. पागल भुवन
7. झूमखेत
8. मचान
9. चरखा
10. नन्दकुमार देबबर्मा, रुंङ, पेज. 11
11. लोक वाद्य
12. लोक वाद्य
13. त्योहार का नाम
14. पारंपरिक पोशाक
15. पेज.9
16. काँटेदार झाड़ी

-डॉ. मिलन रानी जमातिया
सहायक प्राध्यापिका
हिन्दी विभाग, त्रिपुरा विश्वविद्यालय
ईमेल-milanrani08@gmail.com
फोन-08974009245

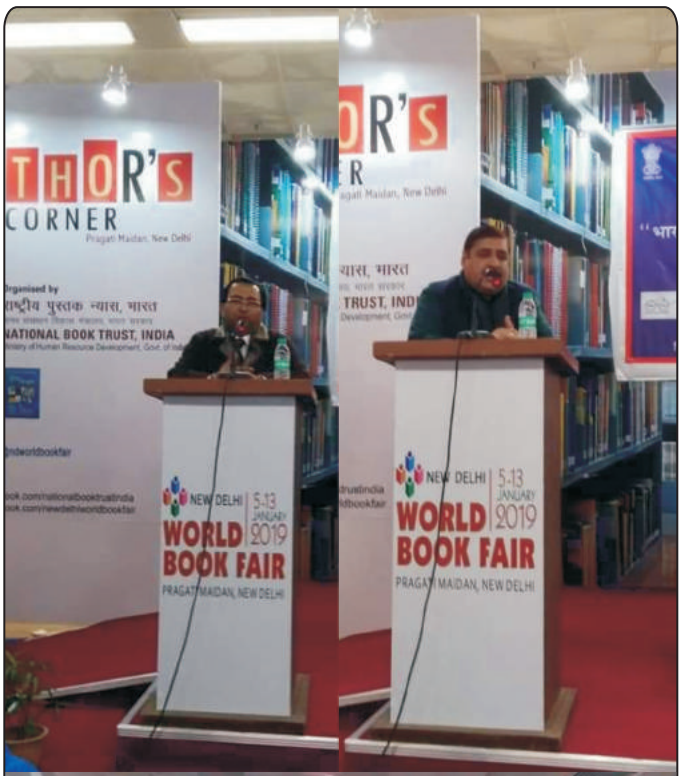

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय की ओर से विश्व पुस्तक मेले में आयोजित संगोष्ठी : 'भारतीय एवं विदेशी भाषाओं के कोष-निर्माण में निदेशालय की भूमिका' के अवसर पर मंचासीन वक्ता प्रो. अवनीश कुमार, निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. गंगा प्रसाद विमल, डॉ. धनेश द्विवेदी एवं श्री सुधाकर पाठक, अध्यक्ष, हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी।

एशिया का सर्वोच्च भाषाई वैविध्यवाला क्षेत्र-अरुणाचल प्रदेश

भारत में भाषाओं, प्रजातियों, धर्मों, सांस्कृतिक परम्पराओं एवं भौगोलिक स्थितियों का असाधारण एवं अद्वितीय वैविध्य विद्यमान है। विश्व के इस सातवें विशालतम देश को पर्वत तथा समुद्र शेष एशिया से अलग करते हैं जिससे इसकी अपनी अलग पहचान है, अविरल एवं समृद्ध सांस्कृतिक विरासत है, राष्ट्र की अखंडित मानसिकता है। "अनेकता में एकता" तथा "एकता में अनेकता" की विशिष्टता के कारण भारत को विश्व में अद्वितीय सांस्कृतिक लोक माना जाता है। भारत की आठवी अनुसूची में 22 भाषायें सूचीबद्ध हैं ये हैं हिन्दी, असमी, बांग्ला, बोड़ो, डोगरी, गुजराती, कन्नड़, कश्मीरी, कोंकणी, मैथिली, मलयालम, मैतेई (मणिपुरी), नेपाली, ओडिया, पंजाबी, संस्कृत, संथाली, सिंधी, तमिल, तेलुगू और उर्दू। इसके अलावा 100 गैर सूचीबद्ध भाषायें हैं 31 अन्य भाषायें भी हैं जिन्हे विभिन्न राज्य सरकारों और केन्द्र शासित प्रदेशों आधिकारिक भाषा के तौर पर मान्यता मिली हुई है। इस प्रकार अनुसूचित 22 भाषाओं में से 5 भाषायें पूर्वोत्तर भारत में बोली जाती हैं। गैर सूचीबद्ध 100 भाषाओं में से 55 भाषायें पूर्वोत्तर भारत में बोली जाती हैं।

भाषिक दृष्टि से भारत बहुभाषी देश है। यहाँ मातृभाषाओं की संख्या 1500 से अधिक है (दे0 जनगणना 1991, रजिस्ट्रार जनरल ऑफ इण्डिया) । इस जनगणना के अनुसार दस हजार से अधिक लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषाओं की संख्या 114 है। (जम्मू और कश्मीर की जनगणना न हो पाने के कारण इस रिपोर्ट में लद्दाखी का नाम नहीं है। इसी प्रकार इस जनगणना में मैथिली को हिन्दी के अन्तर्गत स्थान मिला है। अब मैथिली भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची की एक परिगणित भाषा है।) लद्दाखी एवं मैथिली को सम्मिलित करने पर दस हजार से अधिक लोगो द्वारा बोली जाने वाली भाषाओं की संख्या 116 हो जाती है।

यूरोप एवं एशिया महाद्वीप के भाषा-परिवारों में से "दक्षिण एशिया" में मुख्यत: चार भाषा-परिवारों की भाषायें बोली जाती हैं। भारत में भी सामी भाषा परिवार की "अरबी" के अपवाद के अलावा इन्हीं चार भाषा परिवारों की भाषायें बोली जाती हैं। ये चार भाषा परिवार हैं: क). भारोपीय परिवार: (भारत में भारत-ईरानी उपपरिवार की आर्य भाषाएँ तथा दरद शाखा की कश्मीरी बोली जाती हैं। कश्मीरी को अब भाषा वैज्ञानिक भारतीय आर्य भाषाओं के अन्तर्गत ही मानते हैं। भारत की जनसंख्या के 75. 28 प्रतिशत व्यक्ति इस परिवार की भाषाओं के प्रयोक्ता हैं। "जर्मेनिक" उपपरिवार की अंग्रेजी के मातृभाषी भी भारत में निवास करते हैं जिनकी संख्या 178,598 है।)

ख). द्रविड़ परिवार: (भारत की जनसंख्या के 22. 53 प्रतिशत व्यक्ति इस परिवार की भाषाओं के प्रयोक्ता हैं)

ग). आग्नेय परिवार (आस्ट्रिक अथवा आस्ट्रो-एशियाटिक): (इस परिवार की भाषाओं के प्रयोक्ता 1. 13 प्रतिशत है।

घ)चीनी-तिब्बती परिवार: (इस परिवार की स्यामी/थाई/ताई उपपरिवार की अरुणाचल प्रदेश में बोली जाने वाली भाषा खम्प्टी को छोड़कर भारत में तिब्बत-बर्मी उपपरिवार की भाषाएँ बोली जाती हैं। इस परिवार की भाषाओं के प्रयोक्ता 0. 97 प्रतिशत हैं अर्थात भारत की जनसंख्या के एक प्रतिशत से भी कम व्यक्ति इस परिवार की भाषाओं के प्रयोक्ता हैं)

पूर्वोत्तर भारत एक भाषाई क्षेत्र है जहाँ विभिन्न भाषा परिवारों यथा भारोपीय, साइनो-तिब्बतन, ताई-कादाई, आग्नेय समूह की 220 से अधिक भाषायें बोली जाती हैं। अरुणाचल प्रदेश में भारोपीय परिवार की असमी, नेपाली और हिन्दी, ताई-कादाई परिवार की खामती इसके अतिरिक्त साइनो तिब्बतन परिवार की ह्रूसो, तानी, निशी, आदी, नोक्ते, वांचो, अपातानी, मिश्मी, मोनपा, मिजी शेरदुकपेन इत्यादि भाषायें बोली जाती हैं।

अरुणाचल प्रदेश की जनजातीय भाषायें चीनी-तिब्बती परिवार की है। मुख्य रूप से अधिकतर भाषायें तिब्बती-बर्मी शाखा की हैं केवल खामती भाषा ताई-कादाई शाखा की है। तिब्बती-बर्मी शाखा के तीन भाषाई समूह हैं,बोदिक समूह, मुख्य अरुणाचली समूह और बर्मी समूह। बोदिक शाखा के अंतर्गत पश्चिमी अरुणाचल प्रदेश की मोनपा, शेरदुकपेन, मेम्बा, खाम्बा, सुलुंग और खोवा भाषायें हैं। मुख्य अरुणाचल समूह को तीन भागों वर्गीकृत किया जा सकता है पश्चिमी अरुणाचल उपसमूह, मध्य अरुणाचल उपसमूह और पूर्वी अरुणाचल उप समूह। पश्चिमी अरुणाचल उपसमूह में मुख्य रूप से मिजी, अका, मिरी अका जैसे छोटे समूह की भाषायें हैं तो मध्य अरुणाचल उपसमूह जिसे तानी वर्ग की भाषायें या ऊपरी असम भाषा समूह की भाषाओं में मान जाता है इसके अंतर्गत न्यिशी, आदी, अपातानी हिलमिरी तागिन जैसे बड़े जनजातीय समूह के द्वारा बोली जाने वाली भाषायें हैं। पूर्वी अरुणाचल उपसमूह के अंतर्गत मिश्मी समुदाय की भाषाये हैं इसके अंतर्गत तीन जनजातीय समुदाय की भाषायें हैं ईदू मिश्मी, मिजू मिश्मी और दिगारू मिश्मी। बर्मी समूह के तीन उप समूह हैं। लोलो उपसमूह में लिसू भाषा आती है। नागा उपसमूह में नोक्ते तांगसा और वांचो भाषायें आती हैं, तो काचिन

उपसमूह में सिंगफो और मायोर अथवा जाखरिंग भाषायें आती हैं। अरुणाचल प्रदेश में ताई कादाई (सियामीज-चिन) शाखा की भाषा खामती एक विशिष्ट जनजाति वर्ग द्वारा बोली जाती है। बोदिक समूह की भाषायें पश्चिम अरुणाचल प्रदेश में तिब्बत और भूटान की सीमा से जुड़े क्षेत्रों में निवास करने वाले बौद्धधर्मी जनजातीय समुदाय द्वारा बोली जाती हैं। इस के अंतर्गत आने वाले समुदाय तिब्बत के साथ घनिष्ठ भाषाई संबंध रखते हैं। मोनपा, शेरदुकपेन, मेम्बा, खाम्बा, खोवा, सुलुंग इत्यादि मुख्य भाषायें हैं।

मोनपा भाषा- मोनपा समुदाय तवांग और पूर्वी कामेंग तथा कुछ संख्या में पश्चिमी कामेंग जिले में निवास करने वाली अरुणाचल प्रदेश की प्रमुख बौद्धधर्मी जनजाति हैं। इनके द्वारा बोली जाने वाली मोनपा यह चीनी-तिब्बती परिवार के तिब्बती-बर्मी शाखा के पश्चिमी बोदिक समूह की भाषा है। मोनपा की 6 मुख्य बोलियाँ हैं ख्र चुग मोनपा, बूत मोनपा, दिरांग मोनपा, कलक्टांग मोनपा, लिश मोनपा और तवांग मोनपा। लिश, चुग और बूत मोनपा बोलियाँ अन्य बोलियों से बहुत अधिक अलग हैं। दिरांग मोनपा को मुख्य मोनपा कहा जाता है। दिरांग और कलक्टांग मोनपा को सांगला मोनपा और तवांग मोनपा को ब्राह्मी मोनपा भी कहा जाता है। तवांग मोनपा द्वारा प्रयुक्त बोली दाकपा कहलाती है जो भूटान में भी बोली जाती है।इनके धार्मिक कार्यों की भाषा तिब्बती लिपि में है तथा तिब्बती लिपि का उपयोग भी करते हैं। परन्तु वर्तमान में मोनपा भाषा के लिए देवनागरी और रोमन लिपि का प्रयोग बढ़ा है। मोनपा जनजाति में खानाबदोश जीवन भी बिताया जाता है। खानाबदोश मोनपा जिस बोली का प्रयोग करते हैं उन्हे ब्रोकपा कहा जाता है। पूरे प्रदेश में इनकी जनसंख्या लगभग 60,000 है।

शेरदुकपेन- शेरदुकपेन भी मोनपा समुदाय की तरह पश्चिमी कामेंग जिले के रूपा शेरगाँव जिगाँव, थुंगराव गाँवों में निवास करने वाली अरुणाचल प्रदेश की बौद्धधर्मी जनजाति हैं। इनके द्वारा बोली जाने वाली शेरदुकपेन भाषा चीनी-तिब्बती परिवार के तिब्बती-बर्मी शाखा के पश्चिमी बोदिक समूह की भाषा है। शेरदुकपेन भाषा को साजी ङूक भी कहा जाता है। रूपा क्षेत्र में रहने वाले लोगों की बोली थोंगजी ङूक(जीवदहरपछहववा) कहा जाता है। ये भाषा बूत मोनपा, लिश मोनपा और मिजी भाषा से कुछ साम्यता रखती है। इनकी अपनी कोई लिपि नहीं है बौद्ध धार्मिक कार्यों में तिब्बती भाषा का प्रयोग होता है जबकि इनकी प्रकृति धर्मी मान्यताये पड़ोसी मोनपा से अलग हैं और प्रकृति पूजा के लिए अपनी बोली का उपयोग करते हैं। वर्तमान में देवनागरी लिपि का विस्तृत प्रयोग हो रहा है साथ में रोमन लिपि भी प्रयुक्त होती है। इनकी जनसंख्या लगभग 4200 है।

मेम्बा-बौद्ध धर्मावलम्बी मेम्बा समुदाय के लोग पश्चिमी सियांग और ऊपरी सियांग के मेचुखा, तूतिंग, गेलिंग वृत्त में रहते हैं जो कि तिब्बत की सीमा के बहुत नजदीक है। इनके द्वारा बोली जाने वाली मेम्बा भाषा चीनी-तिब्बती परिवार के तिब्बती-बर्मी शाखा के बोदिक समूह की भाषा है। मेम्बा भाषा मोनपा की सांगला बोली के बहुत नजदीक हैं। इनके धार्मिक कार्यों में तिब्बती भाषा का प्रयोग होता है ये तिब्बती की हिकोर लिपि का प्रयोग करते हैं। वर्तमान में देवनागरी और रोमन लिपि का प्रयोग बढ़ रहा है। इनकी जनसंख्या लगभग 5000 है। खाम्बा- बौद्ध धर्मावलम्बी मेम्बा समुदाय के लोग पश्चिमी सियांग के सिंगा वृत्त के विभिन्न गाँवों में फैले हुए हैं। इनके द्वारा बोली जाने वाली भाषा चीनी-तिब्बती परिवार के तिब्बती-बर्मी शाखा के बोदिक समूह की भाषा है। इनकी भाषा खांबा खादी कहलाती है जो तिब्बती भाषा की बोली है। ये तिब्बती की हिंगना लिपि का प्रयोग पारंपरिक लेखन हेतु करते हैं कई खांबा मेम्बा लोगों द्वारा प्रयोग की जा रही हिकोर लिपि का भी उपयोग करते हैं। वर्तमान में देवनागरी और रोमन लिपि का प्रयोग बढ़ा है। खोवा (बुगुन)- ये पश्चिमी कामेंग जिले थ्रिजिनो बूढ़ागाँव इलाके में निवास करते हैं। इनके द्वारा बोली जाने वाली बुगुन भाषा चीनी-तिब्बती परिवार के तिब्बती-बर्मी शाखा के बोदिक समूह की भाषा है। यह एकाकी भाषा है जिसे केवल समुदाय के अंदर ही बोला जाता है। इसे संकटग्रस्त भाषा के रूप में घोषित किया गया है। बुगुन समुदाय के लोग अन्य पड़ोसियों की भाषा बोलते हैं परन्तु अन्य इनकी भाषा का प्रयोग नहीं करते। बुगुन लोगों को पूर्व में खोवा पुकारा जाता था जिसे ये पसन्द नहीं करते और स्वयं को बुगुन कहना पसंद करते हैं। वर्तमान में इनकी जनसंख्या लगभग 3000 है।

पुरोइक(सुलुंग)- पुरोइक समुदाय के लोग निचली सुबनसिरी, उपरी सुबनसिरी, पापुमपारे, कुरुंग कुमे और पूर्वी कामेंग जिले में फैले हुए हैं। खोवा (बुगुन) के साथ इनके नजदीकी संबंध हैं। ये सुलुंग नाम से पुकारा जाना पसंद नहीं करते जो कि इनके स्वामियों द्वारा दिया गया था उसका अर्थ ये गुलाम के रूप में लेते हैं। सुलुंग लोग अपनी पुरोईक भाषा में बात करते हैं ये बांगनी भी बोल सकते हैं। आसपास के अन्य जनजातीय समुदाय द्वारा इनकी भाषा नहीं बोली जाती ये पड़ोस की भाषाये बोलने में सक्षम हैं। इनकी जनसंख्या वर्तमान में 10000 के आसपास है।

अरुणाचल प्रदेश के भाषा भाषियों में चीनी तिब्बती भाषा परिवार के बर्मी-तिब्बती शाखा में सर्वाधिक बोलने वालों की संख्या अरुणाचल समूह के भाषी-भाषियों की है। पश्चिमी अरुणाचल उप समूह के अंतर्गत अका, मिजी और मिरी अका भाषायें आती हैं। अका- अका या ह्रूसो समुदाय के लोग पश्चिमी कामेंग जिले में निवास करते हैं। अका लोगों को उनके पड़ोसी विभिन्न नामों से पुकारते हैं मिजी इन्हे गुनू बांगनी इन्हे बांगरू और बुगुन इन्हे एबोन पुकारते हैं। अका की दो मुख्य बोलियाँ है ह्रूसो अका और कोरो

अका। ह्रूसो अका पुरानी बोली है जबकि कोरो अका 2010 में खोज की गई बोली है कोरो अका सांस्कृतिक रूप से ह्रूसो अका समुदाय से समानता रखते हैं पर भाषाई रूप से भिन्न हैं। इनकी भाषा पूर्वी तिब्बत की तानी भाषा से समानता रखती है। ह्रूसो अका की कुल जनसंख्या लगभग 6000 तथा कोरो अका की जनसंख्या 1200 के आस-पास है। कोरो अका को संकटग्रस्त भाषा माना गया है। मिजी ख्र मिजी समुदाय को साजालोंग या दमाई भी कहा जाता है। यह चीनी तिब्बती परिवार की बर्मी तिब्बती शाखा की भाषा है इसकी भाषा साजालोंग कहलाती है। यह भाषा पश्चिमी कामेंग, पूर्वी कामेंग और कुरुंग कुमे जिले में बोली जाती है। मिजी शब्द मि अर्थात आग जी अर्थात देने वाले से बना है। इनकी भाषा में अका भाषा से काफी मेल है। इनकी अपनी कोई लिपि नहीं है। वर्तमान में देवनागरी और रोमन लिपि का लेखन हेतु प्रयोग किया जाता है पूर्व में असमी लिपि प्रयुक्त होती थी। मिजी समुदाय स्वयं को रोबो की संतान मानती है जिसे तानी समुदाय के पितृपुरुष आबो तानी के भाई मानते हैं। अरुणाचल प्रदेश में बोली जाने वाली भाषाओं में सबसे बड़ी संख्या तानी समुदाय की भाषाओं की है ये भाषाये चीनी तिब्बती भाषा परिवार के तिब्बती बर्मी शाखा की अरुणाचल में सबसे बड़े समूह की भाषायें हैं। इस समूह में आने वाली जनजातियाँ स्वयं को तानी की संतान मानती हैं। इसे चीनी तिब्बती परिवार की ऊपरी असम शाखा भी कहा जाता है। इस समूह की भाषाओं में समानता एवं अंतर दोनो परिलक्षित होते हैं। यह भाषा कामेंग नदी से सियांग नदी के मध्य निवास करने वाली जनजातियों में मुख्यत:बोली जाती हैं मुख्य रूप से दो समूह है पूर्वी तानी भाषा समूह और पश्चिमी तानी भाषा समूह। पश्चिमी तानी भाषा समूह के अंतर्गत न्यिशी और उससे जुड़े समुदायों की भाषा है तो पूर्वी तानी समूह में आदी भाषा और उसकी बोलियाँ हैं।

न्यिशी या निशिंग भाषा- न्यिशी लोग अरुणाचल के सात जिलों पूर्वी कामेंग, वेस्ट कामेंग, क्रा दादी, कुरुंग कुमे, पापुम पारे, निचली सुबनसिरी एवं ऊपरी सुबनसिरी जिलों में फैले हैं। चीनी तिब्बती परिवार की अरुणाचल प्रदेश की यहु मुख्य भाषा है। न्यि का अर्थ है लो और शी का अर्थ ऊँचे स्थलो पर अर्थात ऊँचे स्थलों पर रहने वाले लोग न्यिशी कहलाते हैं। इन्हे पूर्व में असम के लोगों द्वारा दफला कहा जाता था जो अब प्रयोग में नहीं है। न्यिशी एक लयबद्ध भाषा है इनकी भाषा में स्वरों के तीन स्तर चढ़ाव सामान्य एवं उतार पाया जाता है जिसे अर्थ परिवर्तन भी होता है। पहले न्यिशी भाषा हेतु असमी लिपि का प्रयोग किया जाता था अब देवनागरी और रोमन लिपि से लिखा जाता है। तेई, बांगनी, निशांग इत्यादि इनकी बोलियाँ हैं। इनकी संख्या वर्तमान में 220000 से अधिक है।

तागिन- तागिन तानी समुदाय की प्रमुख जनजाति है। इनके द्वारा बोली जाने वाली भाषा चीनी-तिब्बती परिवार के तिब्बती बर्मी शाखा की तागिन भाषा है। तागिन समुदाय के मारा और ना उपसमूह बौद्ध धर्मी हैं बाकी प्रकृति पूजक हैं। इनकी भाषा न्यिशी भाषा से काफी साम्यता रखती है। ये जनजाति तिब्बत सीमा पर ऊपरी सुबनसिरी जिले में निवास करती है। इनकी अपनी कोई लिपि नहीं है।

हिलमिरी- हिलमिरी क्रा दादी, ऊपरी सुबनसिरी और निचली सुबनसिरी जिले में फैले हुए हैं। इनके द्वारा बोली जाने वाली भाषा चीनी-तिब्बती परिवार के तिब्बती बर्मी शाखा की हिलमिरी अथवा सराक भाषा है। ये न्यिशी भाषा की एक बोली के रूप में भी मानी जाती है। ये वर्तमान में देवनागरी और रोमन लिपि को लेखन हेतु प्रयोग करते हैं।

अपातानी- चीनी-तिब्बती भाषा परिवार की तिब्बती बर्मी शाखा के मध्य अरुणाचल समूह की प्रमुख भाषा अपातानी भाषा है यह लोवर सुबनसुरी के जीरो घाटी में निवास करने वाले अपातानी समुदाय द्वारा बोली जाती है। अपातानी समुदाय अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक एवं पारिस्थितकीय विरासत को सहेजने के लिए प्रसिद्ध है। इस समुदाय को कोई लिपि नहीं है। देवनागरी और रोमन लिपि का प्रयोग लेखन हेतु होता है।

आदी- आदी चीनी- तिब्बती भाषा परिवार की तिब्बती बर्मी शाखा के मध्य अरुणाचल समूह की प्रमुख भाषा है। यह ऊपरी सियांग, निचली सियांग, निचली दिबांग घाटी जिलों में बोली जाती है। इसके अंतर्गत 35 से अधिक बोलियाँ हैं। पूर्व में सभी बोलियों को आदी समुदाय के मध्य ही गिना जाता था परन्तु अब ये बोलियां पृथक अस्तित्व बना रही हैं। इस समूह के अतर्गत मुख्य रूप से आशिंग बोकार, बोरी, कारको, कोमकार, मिलांग, मिनयांग, पासी, पदम, पैलिबो, पांगी, रामो, सिमांग, तामांग इत्यादि जनजातियाँ हैं पूर्व में गालो जनजाती भी आदी समुदाय में परिगणित होती थी परन्तु अब गालो स्वयं को अलग समुदाय के रूप में मानते हैं। पूर्व में आदी लगभग इस क्षेत्र के सभी लोगों द्वारा संपर्क भाषा के रूप में प्रयुक्त होती थी। साथ ही नेफामीज (आदी और असमी की मिश्र भाषा) का प्रयोग होता था। अब हिन्दी ने संपर्क भाषा का रूप ले लिया है इनकी कोई लिपि नहीं है अब देवनागरी और रोमन लिपि लेखन हेतु प्रयुक्त होती है। इनकी जनसंख्या लगभग 2,50000 है।

गालो- गालो पूर्व में आदी की ही उप भाषा थी जो अब पृथक भाषा के रूप में गिनी जाती है। यह तिब्बती भाषा परिवार की तिब्बती बर्मी शाखा के मध्य अरुणाचल समूह की प्रमुख भाषा है।गालो को पहले गालोंग उच्चरित किया जाता था जिसे परिवर्तित कर गालो के रूप में मान्यता दिलाने में समुदाय ने सफलता प्राप्त की। गालो न्यिशी और उसकी बोलियों से काफी समानता रखती है। आदी समुदाय के मध्य नियमित संपर्क से गालो भाषा आदी से प्रभावित हुई जिसका परिणाम इन्हें आदी समूह की भाषाओं में माना जाने लगा। आदी और गालो तानी उपसमूह के अतर्गत पृथक शाखाओं में समूहित हैं। गालो

समुदाय की अपनी लिपि नहीं है परन्तु अब रोमन और देवनागरी लिपि का प्रयोग हो रहा है। इनकी जनसंख्या लगभग 100000 है।

चीनी तिब्बती भाषा परिवार के तिब्बती बर्मी शाखा की पूर्वी अरुणाचल समूह के अंतर्गत मिश्मी जनजातीय वर्ग की भाषायें हैं। मिश्मी अरुणाचल प्रदेश के दिबांग वैली, लोवर दिबांग, अंजाव, और लोहित जिले में फैली तीन जनजातियों का समूह है। इन्हे तिब्बत में देंग नाम से पुकारा जाता है। इनके अंतर्गत तीन जनजाति समूह ईदू मिश्मी (चूलिकटा), मिजू मिश्मी (कामाँ) और दिगारू मिश्मी (ताराँ) आते हैं। ईदू मिश्मी- ईदू मिश्मी इन्हे इनकी बालों की कटाई के कारण चूलिकटा भी कहा जाता है। साथ ही स्थानीय रूप में बेबेजिया कहा जाता है। मिश्मी भाषा की यह शाखा ऊपरी दिबांग वैली निचली दिबांग वैली और कुछ संख्या में लोहित जिले में रहने वाले ईदू समुदाय द्वारा बोली जाती है। बहुत पहले ईदू तिब्बतन लिपि का प्रयोग करते थे पर अब यह नहीं देखा जाता वर्तमान में स्थानीय स्तर पर ईदू अजोब्रा नामक लिपि विकसित की गई है। मिदू मिन्द्री एवं मिथू इसकी बोलियाँ हैं। दिगारू मिश्मी भाषा के साथ व्याकरण साम्यता रखती है। दिगारू मिश्मी- ये अंजाव जिले के हायुलियांग, चांगलांगम एवं गेलियांग वृत्त में रहने वाले मिश्मी समुदाय के दिगारू समूह द्वारा बोली जाती है इनकी भाषा ताराँ कहलाती है। इनकी अपनी लिपि नहीं है वर्तमान में देवनागरी और रोमन लिपि लेखन हेतु प्रयुक्त होती है। मिजू मिश्मी- मिजू मिश्मी समुदाय द्वारा तिब्बती बर्मा शाखा के मिश्मी समूह की कामाँ भाषा बोली जाती है। यह भाषा अंजाव के हवाई और दाऊ घाटी और तेजू के परशुराम कुंड क्षेत्र में रहने वाले मिजू समुदाय द्वारा बोली जाती है। मिजू मिश्मी भाषा तिब्बत में देंग कहलाती है। इनकी अपनी कोई लिपि नहीं है वर्तमान में देवनागरी एवं रोमन लिपि द्वारा लेखन कार्य संपादित होता है। चीनी तिब्बती भाषा परिवार के तिब्बती बर्मी शाखा के बर्मी समूह के बोलने वाले पूर्वी अरुणाचल प्रदेश के पूर्वी भाग में रहने वाले निवासी हैं जिनमें मुख्य रूप से तीन उप समूह हैं लोलो उपसमूह जिसके अंतर्गत लिसू भाषा आती है नागा उपसमूह जिसके अंतर्गत तांगसा, नोक्ते और वांचो भाषाये आती हैं। इसके अतिरिक्त काचिन उपसमूह जिसके अंतर्गत सिंग्फो और जाखरिंग भाषायें आती हैं।

लिसू भाषा- लिसू तिब्बती बर्मी शाखा की यी अथवा न्यिओसू (लोलो) उपसमूह की भाषा है। इन्हे योबिन भी कहा जाता है। ये तिराप और चांगलांग जिले में नोआ दिहिंग नदी और उसकी शाखाओं के आसपास निवास करने वाली लिसू जनजाति के द्वारा बोली जाती है। लिसू लोगों की अपनी लिपि है परन्तु उसे पढ़ने वाले लोग अब बहुत कम हैं।चीन के लिसू लोगों में पादरी फ्रेजर द्वारा निर्मित लिपि को मान्यता मिल गई है जो कि रिवर्स रोमन लिपि में लिखी जाती है। भारत में रहने वाले लिसू लोगों की भाषा संकटग्रस्त है। अरुणाचल प्रदेश में इनकी जनसंख्या लगभग 5000 है। सिंग्फो ख़सिंग्फो तिब्बती बर्मी शाखा की काचिन उपसमूह की भाषा है। ये उत्तरी बर्मा के काचिन राज्य से संबंध रखते हैं वर्तमान में भारत के अरुणाचल के चांगलांग और लोहित जिले में बसे हुए हैं। ये बौद्धधर्मी हैं। इनके द्वारा बोली जाने वाली भाषा सिंग्फा या जिंग्फा कहलाती है।

जाखरिंग या मेयोर- ये अंजाव जिले के वालोंग एवं किविथो घाटी में निवास करते हैं इनकी भाषा तिब्बती बर्मी शाखा की काचिन उपसमूह की भाषा है। इनकी भाषा में वर्तमान में पड़ोसी कामाँ और ताराँ मिश्मी से निकटता दिखती है। इनकी अपनी लिपि नहीं है वर्तमान में देवनागरी और रोमन लिपि का प्रयोग करते हैं। इन्हे मेयोर या माम्येर भी कहते हैं। अरुणाचल प्रदेश के दक्षिण-पूर्वी क्षेत्र के चार पाँच जिलों में चीनी तिब्बती भाषा परिवार की तिब्बती बर्मी शाखा के बर्मी समूह के नागा उपसमूह की तीन भाषाये मुख्यत: बोली जाती हैं तांगसा, नोक्ते और वांचो। यद्यपि इन् तीनो समुदायों की अपनी कई बोलियाँ हैं विशेष रूप से तांगसा की तो स्वयं की 32 से अधिक उपसमुदाय है जिनकी पृथक पृथक बोलियाँ हैं। ऐसे ही नोक्ते और बांचों समुदाय की भी कई शाखायें है जिनकी पृथक पृथक बोलियाँ हैं।

तांगसा- तांगसा या तांगवा पूर्व में नागा माने जाते थे परन्तु 1956 में इन्हे तांगसा के रूप में पृथक पहचान दी गई। चांगलांग, तिराप जिले के पहाड़ी इलाकों में रहने वाले एक समुदाय के विभिन्न उपसमूहों को सामूहिक रूप से तांगसा नाम दिया गया। तांग सा का अर्थ है तांग अर्थात पहाड़ और सा अर्थात लोग इस प्रकार पहाड़ में रहने वाले लोग। हावी, किमसिंग, लुंगफी, मोरांग, मुकलोम,सांगवाल, तिखाक, योंगकुक, जुगली, लुंगचांग, लुंगरी, मोसांग, रोनरांग, सैंके,तोंगलिम इत्यादि तांग्सा के प्रमुख उपसमूह हैं।

नोक्ते- नोक्ते चीनी तिब्बती भाषा परिवार की तिब्बती बर्मी शाखा के बर्मी समूह के नागा उपसमूह की प्रमुख भाषा है। अरुणाचल प्रदेश के तिराप जिले के विभिन्न क्षेत्रों में निवास करते हैं। इसकी हाखुन, खापा, हावा, दोमलाक, फोथुंग, जोपे, सैंग्नियाक, लाजू , दादोम इत्यादि उपबोलियाँ हैं। बोलियों को जाप कहा जाता है लाजू समुदाय में बोली को रेत कहते हैं। हावा दादोम और सैंग्नियाक बोलियों में काफी समानता है। नोक्ते समुदाय की जनसंख्या लगभग 33000 है। वांचो - वांचो चीनी तिब्बती भाषा परिवार की तिब्बती बर्मी शाखा के बर्मी समूह के नागा उपसमूह के कोन्याक परिवार की प्रमुख भाषा है। चांगनोई, बोर मुथुन, होरू मुथुन कुलुंग मुथुन इनकी मुख्य बोलियाँ हैं। पूर्व में इनकी लिपि नहीं थी देवनागरी एवं रोमन लिपि में लिखी जाती है। 2001 से 2012 में मध्य बानवांग लोसू नामक शिक्षक ने वांचो के लिए पृथक लिपि विकसित की है जिसे वांचों क्षेत्र के कुछ विद्यालयों में पढ़ाया जा रहा है। अरुणाचल प्रदेश में जहाँ एक ओर

अधिकतर भाषायें चीनी तिब्बती परिवार की तिब्बती बर्मी शाखा की हैं वहीं लोहित और नामसाई जिले के आसपास रहने वाले खामती समुदाय द्वारा बिल्कुल अलग शाखा कादाई चीन शाखा की भाषा प्रयुक्त की जाती है। ये अरुणाचल की एकमात्र भाषा है जिनका लिखित इतिहास और लिपी बहुत समृद्ध है।

खामती- खामती चीनी तिब्बती परिवार की ताई कदाई (सियामीज-चीन) शाखा की भाषा है। ताई खामती की अपनी लिपि है जो बर्मा की शान लिपि से मिलती है दोनो के वर्णाक्षर समान हैं। ताई भाषा में शब्द क्रम कर्ता क्रिया कर्म होता है परन्तु खामती भाषा में कर्ता कर्म और क्रिया होता है। यह सुरभेदी भाषा है। यह थाई और लाओ भाषा से बहुत निकट से जुड़ी हुई है। ताई खामती लोगों के पास अपना स्वयं की लिपि है जिसे लिक-ताइ कहते हैं। ताई खामती में 35 वर्ण जिसमें 17 व्यंजन और 14 स्वर शामिल हैं। ताई खामती में पहली मुद्रित पुस्तक 1960 में आई।

उपरोक्त भाषाओं के अतिरिक्त भी अरुणाचल प्रदेश में अन्य कई भाषायें बोली जाती है इन भाषा भाषियों की संख्या बहुत कम है तथापि इनकी भाषाओं की इनकी परंपरा और संस्कृति छुपी हुई है। कार्बी, देवरी, मिसिंग, खामयांग, म्रा, ना, तुत्सा, मिलांग इत्यादि विभिन्न जनजातियों का निवास अरुणाचल प्रदेश में है जिनकी अपनी बोलियां हैं साथ ही इनका अपना पृथक रहन सहन रीति रिवाज हैं। अरुणाचल प्रदेश में पिछले तीन दशकों भाषाई विविधता तीव्र जोखिम में है। धीरे धीरे विविध भाषाओं के वक्ताओं में कमी होती जा रही है यहां के लोग अपनी भाषाओं को छोड़कर दूसरी प्रमुख भाषाओं की ओर मुड़ रहे हैं। इस समस्या का समाधान सामाजिक स्तर पर ही संभव है। जिसके अंतर्गत विभिन्न समुदायों को अपनी भाषा के संरक्षण में शामिल होना होगा। ये भाषायें अरुणाचल प्रदेश की सांस्कृतिक संपदा हैं उपरोक्त भाषाओं-बोलियों को बोलने वाले लोगों की इनके प्रति आत्मीयता से अलग उत्साह के साथ सरकारों और भाषा कार्यकर्ताओं को इन्हें बढ़ावा देने की जरूरत है उससे ही ये भाषायें जीवित रह पायेंगी। ये सब मिलकर भारत का भाषायी मानचित्र में अरुणाचल प्रदेश को अत्यंत रंगबिरंगा और विविध रूप प्रदान करती हैं।

भारत के संविधान में अल्पसंख्यक भाषाओं के संरक्षण के लिए मौलिक अधिकार के रूप में एक अनुच्छेद को शामिल किया गया है। इसमें कहा गया है कि भारत के किसी भी क्षेत्र और किसी भी भाग में रहने वाले नागरिकों के किसी भी वर्ग की विशिष्ट भाषा, लिपि या अपनी स्वषयं की संस्कृति को संरक्षित करने का अधिकार होगा। भारत की भाषा नीति भाषाई अल्पसंख्यकों की रक्षा की गारंटी प्रदान करती है। संविधान के प्रावधान के तहत अल्पसंख्यक समूहों द्वारा बोली जाने वाली भाषा के हितों की रक्षा की एकमात्र जिम्मेदारियों के लिए भाषाई अल्पसंख्यक समुदाय हेतु विशेष अधिकारी की नियुक्ति की जाती है।

भाषायें केवल सरकारी प्रयासों से शक्ति नहीं पा सकती उन्हे शक्ति उनके अन्दर से मिलती है जिन भाषाओं में साहित्य तैयार होने लगता है वे अपने आप शक्तिशाली होती जाती हैं। अरुणाचल प्रदेश में विभिन्न भाषाओं में साहित्य तैयार हो रहा है उपन्यास और कथायें लिखी जा रही हैं साहित्य सभायें निर्मित हो रही हैं। ये भाषाओं को सशक्त बना रहे हैं तथा सरकारी प्रयासों को मजबूती प्रदान कर रहे हैं। अरुणाचल प्रदेश की जनता जागरुक हो रही है वो अपने भाषाई महत्व को पहचान रही है जिससे भाषाओं पर बढ़ता संकट कम करने में सरकार को सहायता मिल रही है।

- मुनीन्द्र मिश्र
हिन्दी अधिकारी त्रिपुरा विश्वविद्यालय

पृष्ठ संख्या 13 का शेष

विविधता का पता चलता है । महामहिम महोदय ने साहित्य के विषय में चिंता व्यक्त की कि इतने घनिष्ठ मित्र राष्ट्र होने के बावजूद भी दोनों देशों में अनुवाद साहित्य को लेकर कोई ठोस काम कभी हुआ ही नहीं । भारतीय साहित्य का अनुवाद नेपाली में थोड़ा बहुत हुआ तो है लेकिन नेपाली साहित्य को भारतीय समाज में पहुँचाने के लिए अनुवाद की दिशा में कभी कोई पहल ही नहीं की गयी । जो एकाध नेपाली पुस्तकों का अनुवाद हुआ है वो भी निजी स्तर से साहित्यकारों के अपने खर्चे से ही किया गया है । दोनों देशों के प्रतिनिधि साहित्यों का पर्याप्त अनुवाद होना चाहिए और उन्हें बाजार तक पहुँचाना भी चाहिए ।

कई भाषाओं के ज्ञाता, कानूनविद, नेपाल के संविधान निर्माण कमेटी के अध्यक्ष एवं नेपाल सरकार के कई महत्वपूर्ण पदों को सुशोभित करने वाले महामहिम महोदय ने भाषा के प्रति अकादमी की निष्ठा और कार्यों को बहुत सराहा और अपनी शुभकामनाएँ प्रेषित की । उन्होंने दोनों देशों के संबंधों में प्रगाढ़ता लाने के उद्देश्य से साहित्यिक एवं सांस्कृतिक आयोजन के संबंध मे चर्चा की और भविष्य में दोनों देशों में इस तरह के आयोजनों में पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया । इस शिष्टाचार भेंट को मूर्त रूप देने में नेपाल दूतावास के सांस्कृतिक सलाहकार श्री होम प्रसाद लुइंटेल ने विशेष सहयोग दिया और इस बैठक में पूरे समय उपस्थित रहे ।

**''आप जिस तरह बोलते हैं, बातचीत करते हैं,
उसी तरह लिखा भी कीजिए ।
भाषा बनावटी नहीं होनी चाहिए ।''**
- महावीर प्रसाद द्विवेदी

प्रारम्भिक शिक्षा में मातृभाषा बनाम अँग्रेजी

उड़ीसा के गजपति जिले के तुमूलो गाँव की साओरा जनजाति की पिंकी जब पैदा हुई थी, तो उसके माता-पिता खुश थे। "हमारी पिंकी स्कूल जाएगी", पिता ने कहा। पिंकी की माँ यह सुनकर खुश हुई थी। "यह तो बहुत अच्छा होगा। हम तो इतने सौभाग्यवान नहीं थे, लेकिन पिंकी जरूर शिक्षा पाएगी", उसने कहा पिंकी बड़ी हुई, उसने चलना शुरू किया और जल्दी ही वह अपने पिता की उँगली पकड़कर गाँव के बाजार जाने लगी। अपने खेलने-कूदने के पूरे समय के दौरान वह हँसती रहती और कुछ शब्द बोलती, बहुत स्पष्ट तो नहीं लेकिन आसपास के सभी लोग उसकी तुतलाहट से खुश प्रतीत होते। जल्दी ही उसने अपने माता-पिता, गाँव वालों और दूसरे बच्चों से बात करने के लिए साओरा भाषा में टूटे-फूटे वाक्य बोलना शुरू कर दिए। वह अपने माता-पिता को साओरा में सम्बोधित करती, गाँव के पेड़-पौधों, फलों, फूलों और जानवरों को भी साओरा नामों से ही बुलाती थी। अपने पिता के कन्धों पर घूमते हुए, वह उनके साथ बगाडा(उड़ीसा में आदिवासी जनजातियों के खेतों का एक प्रकार) जाते वक्त रास्ते में दिखने वाली सभी तितलियों को बड़ी प्रसन्नता से गिनती जाती। गाँव वाले पिंकी से बड़े प्रभावित थे; "यह बड़ी होशियार लड़की है!" वे कहते थे।

एक दिन गाँव के शिक्षक ने कहा, "वह छह साल की हो चुकी है। उसे स्कूल भेजो।" पिंकी के माता-पिता उसे दाखिले के लिए स्कूल ले जाते हुए बड़े खुश थे। पिंकी भी बहुत खुश थी। उसे अपने स्कूल से नई किताबें और कॉपियाँ मिलीं और उसने बड़े गर्व से उन्हें अपनी माँ को दिखाया माँ बोली, "तुम्हारे शिक्षक तुम्हें इन किताबों को पढ़ना सिखाएँगे। मुझे तो पढ़ना आता ही नहीं।"

पिंकी रोज स्कूल जाती थी। लेकिन, धीरे-धीरे वह चुप होती चली गई। "तुमने स्कूल में क्या किया?" एक दिन उसकी माँ ने पूछा। पिंकी ने कोई जवाब नहीं दिया उसके पिता ने कहा, "क्या तुम्हारे शिक्षक ने तुम्हें यह किताब पढ़ना सिखाई? मुझे एक कहानी पढ़कर सुनाओ।" पिंकी चुप रही। धीरे-धीरे वह और ज्यादा चुप होती गई और उदास रहने लगी। वह स्कूल जाने में भी नियमित नहीं रह गई।

एक दिन पिंकी के शिक्षक बाजार में उसके पिता से टकरा गए, "पिंकी नियमित रूप से स्कूल नहीं आती। और जब भी मैं उससे कोई सवाल पूछता हूँ, वह अपना सिर झुका लेती है और कुछ बोलती नहीं।" उसके पिता को यह सुनकर अच्छा नहीं लगा। "तुम स्कूल क्यों नहीं जाती हो? शिक्षक को जवाब भी नहीं देती, ऐसा क्यों?" पिता ने घर आकर पिंकी से पूछा। "शिक्षक जो कुछ भी कहते हैं वह मुझे समझ नहीं आता। मैं तो किताबों में सिर्फ चित्र देखती हूँ, शिक्षक जो भी किताब में से पढ़ते हैं, वह मुझे समझ नहीं आता।" उसके पिता उसकी बात समझ गए। स्कूल के शिक्षक उड़िया में बोलते हैं जो पिंकी को समझ नहीं आती। पिता को खुद अपना बचपन याद आ गया; उन्होंने भी भाषा की इसी कठिनाई के चलते स्कूल छोड़ दिया था। वह भाषा साओरा नहीं थी। जल्दी ही पिंकी ने भी स्कूल जाना बन्द कर दिया।

पिंकी और उसके पिता अकेले नहीं हैं। लाखों बच्चे ऐसे स्कूल छोड़ने के लिए मजबूर हो जाते हैं जो बच्चों पर कोई भाषा थोप देते हैं और उस भाषा की अनदेखी करते हैं जिसमें उन्होंने बोलना, अपने माता-पिता को सम्बोधित करना, पेड़-पौधों, फलों, फूलों, जानवरों, पर्यावरण और अपने परिवार तथा सदस्यों को जानना सीखा हो। किसी बच्चे की प्रारम्भिक भाषा उसकी पहली पहचान की, उसके सभी शुरुआती अनुभवों और सीखों की, अपने दोस्तों व बड़ों के साथ उसके सम्बन्धों, और अपनी समझ और समाधानों को तलाशने की उसकी कोशिशों की भाषा होती है। यह भाषा उसके घर, परिवार, समुदाय और गाँव के लिए पर्याप्त होती है, और वह उसे अपनी सामाजिक दुनिया के साथ प्रभावशाली ढंग से तालमेल बनाकर चलने की ताकत देती है। लेकिन, जब एक बच्चा स्कूल में दाखिल होता है, तो सब कुछ बदल जाता है। स्कूल उसके लिए अपने दरवाजे खोल तो देता है पर उसके और उसकी कक्षा के बीच एक अदृश्य और मजबूत दीवार होती है। स्कूल की प्रबल भाषा के आगे अचानक उसकी अपनी भाषा बेकार और छोटी बन जाती है। उसकी सारी समझ, उसके अनुभव और उसके स्रोतों का मोल अचानक से घट जाता है। उसकी भाषा अब उसका सबल पक्ष नहीं रह जाती बल्कि वह एक बोझ बन जाती है। स्कूल की भाषा उसके लिए अनजान होती है और उसका उसके बचपन, उसके अनुभवों, उसकी रचनाओं और उसके ज्ञान से कोई वास्ता नहीं होता। वह एक ऐसी भाषा के बोझ को कैसे सम्भालेगा जो उसकी पहचान का अवमूल्यन कर देता हो और उसे अपने ही अनुभवों से दूर कर देता हो? इसलिए कोई अचरज की बात नहीं कि कई बच्चे इस अपरिचित भाषा के बोझ तले स्कूल छोड़ने को मजबूर हो जाते हैं।

यह जरूर सच है कि आज की दुनिया में, खासतौर पर हमारे जैसे बहुभाषाई देश में, एक भाषा पर्याप्त नहीं हो सकती, स्कूल की पढ़ाई में कई भाषाओं का शामिल होना जरूरी है - मातृभाषा, उस क्षेत्र की भाषा जैसे तमिल, पंजाबी या बंगाली, राष्ट्रीय स्तर की भाषाएँ जैसे हिन्दी और अन्तर्राष्ट्रीय भाषा जैसे अँग्रेजी। पर, बच्चों को स्कूल में ऐसी भाषा क्यों सीखना चाहिए जो उन्हें पहले से

ही आती हो? हम किसी दूसरी बड़ी भाषा को सिखाने की शुरुआत कुछ जल्दी क्यों नहीं कर सकते? मातृभाषा तो जरूरी है क्योंकि बच्चों की प्रभावी स्कूली शिक्षा के लिए आधारभूत ज्ञान का शाब्दिक संकेतों में निरूपण (एनकोडिंग) उनको समझ में आने वाली और उनकी अभिव्यक्ति की भाषा में ही किया जाता है। यह भाषा उन्हें स्कूल के लिए तैयार कर देती है, पर इसके साथ ही, उन्हें भी अपने भाषा कौशलों को और निखारना चाहिए। भले ही बच्चे अपनी शुरुआती भाषा में दक्ष प्रतीत हों, उसका प्रमुख उपयोग उनके घर और समुदाय के एकदम निकट के परिवेश में सन्निहित सामाजिक और अन्तर्वैयक्तिक संवादों में ही होता है। दूसरी तरफ, स्कूल के सीखने में जटिल और गूढ़ अवधारणाओं को समझने, तथा इन अवधारणाओं में महारत हासिल करने, प्रश्नों को सुलझाने, खुद की सोच को नियंत्रित करने और स्वयं भाषा (सोच के विषय के रूप में) के बारे में सोचने के लिए भाषा का उपयोग करना शामिल रहता है। स्कूली शिक्षा और प्रारम्भिक साक्षरता शिक्षा बच्चों को भाषा के सामाजिक और प्रासंगिक उपयोग के परे जाकर व्यवस्थित सोच, संज्ञान और अकादमिक शिक्षा के लिए उपयोग के ऊँचे स्तरों तक पहुँचने में समर्थ बनाती है। बच्चों की प्रारम्भिक भाषा इस संज्ञानात्मक और अकादमिक स्तर के मुताबिक विकसित होना चाहिए और उनके पास शैक्षिक उपलब्धि के लिए भाषा के उपयोग के बारे में सोचने के लिए, तथा दूसरी भाषाएँ सीखने के लिए योग्यता होना चाहिए।

स्कूल में दाखिले होने पर, भाषाई अल्पसंख्यक और जनजातीय समुदायों के बच्चों पर एक ऐसी प्रबल स्कूली भाषा लाद दी जाती है जिससे उनका बहुत मामूली परिचय होता है या कोई परिचय नहीं होता। समझ न आने के बोझ और उसके परिणामस्वरूप सामने आने वाली स्कूली असफलता के अलावा स्कूली भाषा इन बच्चों के भाषाई कौशलों को सामान्य अन्तर्वैयक्तिक संवाद से आगे नहीं ले जा पाती, और इसका उनकी मातृभाषा पर नकारात्मक या ऋणात्मक प्रभाव पड़ता है, क्योंकि प्रधान स्कूली भाषा को सीखने के चक्कर में उनके मातृभाषा कौशल क्षीण हो जाते हैं। जहाँ किसी भाषा में बुनियादी अन्तर्वैयक्तिक संवाद कौशल के विकास में दो से तीन साल लग जाते हैं, वहीं संज्ञानात्मक और अकादमिक भाषा कौशल कहीं अधिक धीरे विकसित होते हैं और उसमें करीब छह से आठ साल लगते हैं। इस प्रकार, मातृभाषा को कम से कम छह सालों तक प्रारम्भिक शिक्षा तथा औपचारिक स्कूली शिक्षा की भाषा के रूप में इस्तेमाल किया जाना चाहिए, ताकि बच्चे शैक्षणिक सफलता को सुनिश्चित करने के साथ ही ऊँचे दर्जे की सोच के लिए, प्रश्नों व समस्याओं को हल करने के लिए और बहुभाषाई दक्षता के लिए भाषा का इस्तेमाल करने की क्षमता विकसित करें। दरअसल, मातृभाषा में प्रारम्भिक शिक्षा होने से बाद में अन्य भाषाएँ सीखने में कोई अड़चन नहीं आती। यद्यपि बच्चे उनके विकास के प्रारम्भ में कई भाषाओं में संवादात्मक और सामाजिक अभिव्यक्ति की योग्यता विकसित कर सकते हैं, पर वे दूसरी भाषाओं में ऊँचे दर्जे की साक्षरता और अकादमिक कौशल तब कहीं ज्यादा तेजी से हासिल करते हैं जब उनके मातृभाषा सम्बन्धी कौशल प्रारम्भिक सामाजिक उपयोग से कहीं ज्यादा विकसित होते हैं। यही मातृभाषा पर आधारित बहुभाषाई शिक्षा का बुनियादी सिद्धान्त है।

बच्चे जब स्कूल जाना शुरू करते हैं तो वे कोरी स्लेट नहीं होते, बल्कि उनके पास ज्ञान का अच्छा-खासा भण्डार होता है। उनकी भाषा, अनुभव और समझ वे संसाधन होते हैं जिनके आधार पर वे प्राथमिक स्कूलों में भाषा और साक्षरता, गणितीय सिद्धान्तों, पर्यावरण सम्बन्धी जागरूकता के क्षेत्रों में आगे विकास करते हैं। प्रारम्भिक बाल्यावस्था और अनौपचारिक सांस्कृतिक अनुभव से औपचारिक स्कूली शिक्षा की तरफ बढ़ना हर बच्चे के लिए एक महती चुनौती होती है। घर से स्कूल की दूरी केवल भौतिक नहीं होती, बल्कि यह स्कूली शिक्षा के लिए संज्ञानात्मक, क्रियात्मक और सामाजिक तैयारी की मनोवैज्ञानिक दूरी भी होती है। इसलिए, स्कूल में दाखिला लेने से पहले, 2 से 6 साल की उम्र के बीच, बच्चों का मनोवैज्ञानिक, शारीरिक, सामाजिक और बौद्धिक रूप से तैयार होना जरूरी है ताकि वे औपचारिक स्कूली शिक्षा का लाभ ले सकें। प्रारम्भिक बाल्यावस्था की शिक्षा ऐसी ही तैयारी के विकास के लिए होती है, जिसमें भाषा एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। प्रारम्भिक बाल्यावस्था की शिक्षा, सामाजिक संवादों के कौशलों से निर्मित हुई बच्चों की भाषा के विकसित होकर उसका सोचने और कक्षा में प्रभावी ढंग से सीखने के लिए उपयोग करने के बीच सेतु बनाने का काम करती है। 20 सितम्बर, 2013 को केन्द्रीय मंत्रिमण्डल ने प्रारम्भिक बाल्यावस्था की देखभाल और शिक्षा (ई.सी.सी.ई.) की राष्ट्रीय नीति को स्वीकार किया जो गुणवत्तापूर्ण शिक्षा को सुनिश्चित करने के लिए सम्पूर्ण विकास और समान मौके देने वाली स्कूली शिक्षा के लिए जरूरी तैयारी के रूप में बच्चे की मातृभाषा में शिक्षा दिए जाने को अनिवार्य बनाती है। छह साल से कम उम्र के लगभग 16 करोड़ बच्चों में से 4.5 करोड़ बच्चे प्रारम्भिक बाल्यावस्था शिक्षा के निजी कार्यक्रमों में भाग लेते हैं, जिनका शुल्क देने के लिए उनके माता-पिता के पास साधन होते हैं। करीब 7.5 करोड़ बच्चे सरकार की समेकित बाल विकास योजना के ई.सी.सी.ई. कार्यक्रमों (जैसे आँगनवाड़ी) में हैं। बाकी 4 करोड़ बच्चों के लिए ई.सी.सी.ई. का कोई मौका नहीं है।

इस प्रकार, प्रारम्भिक बाल्यावस्था वाले वर्षों के दौरान मानव संसाधनों और सम्भावनाओं के विकास के अवसरों में एक अन्यायपूर्ण भेदभाव मौजूद है। आशा है कि यह नीति पत्र जो न्यूनतम ई.सी.सी.ई. मानकों को निर्धारित करता है, ऐसे भेदभाव से प्रभावशाली ढंग से निपट सकेगा। नीति पत्र का खण्ड 5.2.4 कहता है कि, "बच्चे की मातृभाषा या घर की भाषा ही ई.सी.सी.ई. कार्यक्रमों के क्रियाकलापों की प्राथमिक भाषा होगी"। नीति पत्र में यह भी कहा गया है कि इस उम्र में छोटे बच्चों की कई भाषाएँ सीखने की क्षमता को देखते हुए, मौखिक रूप में राष्ट्रीय, क्षेत्रीय भाषा या अँग्रेजी से भी जरूरत के मुताबिक परिचय कराने की सम्भावना को टटोला जा सकता है। इस प्रकार, ई.सी.सी.ई. नीति बच्चे के सोचने और तर्क करने के कौशलों को व्यवस्थित रूप देने के लिए तथा संज्ञानात्मक और शैक्षिक विकास के लिए मातृभाषा की महत्त्वपूर्ण भूमिका को स्वीकार करती है और साथ ही शोध से प्राप्त इन सशक्त जानकारियों को भी स्वीकार करती है कि बहुभाषाई बच्चे अपने एकभाषाई साथियों की तुलना में ज्यादा बुद्धिमान और सृजनशील होते हैं। समस्या बहुभाषावाद के विकास के साथ नहीं है; समस्या गैर मातृभाषा में प्रारम्भिक शिक्षा देने से खड़ी होती है।

दुर्भाग्यवश, माता-पिता अधीर होते हैं - वे अपने बच्चे की शिक्षा में अँग्रेजी को बहुत जल्दी ले आना चाहते हैं। अँग्रेजी सत्ता, प्रगति और आर्थिक अवसरों की भाषा प्रतीत होती है, और इसलिए लोगों को घरों में तथा प्रारम्भिक बाल्यावस्था की शिक्षा तथा स्कूली शिक्षा में अँग्रेजी को जल्दी से जल्दी लाने की सनक है। बहुत छोटे और मासूम/अविकसित बच्चों को अँग्रेजी पढ़ाने की लालसा इस कदर व्याप्त है कि अगर कोई माँ के गर्भ में पल रहे शिशुओं के लिए भी जन्म-पूर्व अँग्रेजी शिक्षा देने का प्रस्ताव रखे, जैसा कि पौराणिक अभिमन्यु ने युद्धकला सीखी थी, तो इसे लेने के लिए भी लम्बी कतारें लग जाएँगी। अँग्रेजी के लिए यह मौजूदा पागलपन कोरी नासमझी है और शिक्षा के इस जाने-पहचाने सिद्धान्त के विपरीत भी है कि मातृभाषा ही गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तथा अँग्रेजी सहित कई भाषाओं की प्रभावी शिक्षा का राजसी मार्ग है। आधुनिक अभिमन्युओं को इतनी जल्दी अँग्रेजी की जरूरत नहीं है; उन्हें अच्छी देखभाल, संस्कार और मातृभाषा-आधारित गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की आवश्यकता है।

अजीत मोहन्ती नेशनल मल्टी,लिंगुअल एजूकेशन रिसोर्स कंसोर्टियम (एन.एम.आर.सी.) के मुख्य सलाहकार हैं। पूर्व में वे जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली में प्राध्यापक एवं आई.सी. एस.एस.आर. के राष्ट्रीय फैलो थे। वे फुलब्राइट अतिथि प्राध्यापक (कोलम्बिया विश्वविद्यालय), फुलब्राइट सीनियर स्कॉलर (विस्कॉन्सिन), किलम स्कॉलर (अलबर्टा) भी रह चुके हैं। बहुभाषाई शिक्षा पर अपने काम के लिए प्रसिद्ध मोहंती ने नेपाल और उड़ीसा (भारत) के लिए एम.एल.ई. नीति तैयार की। वे भारत की राष्ट्रीय मनोविज्ञान अकादमी तथा अमेरिका की एसोसिएशन ऑफ साइकलॉजिकल साइंस के फैलो हैं। उनसे ajitmohanty@gmail-com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

यह Learning Curve Issue... May 2014 में प्रकाशित Prental English ? Why Not/Mother Tongue vs-English पद Early Education : Ajit Mohanty लेख का अनुवाद है। अनुवाद : भरत त्रिपाठी । सम्पादन: राजेश उत्साही

- अजीत मोहन्ती

साभार : **Learning Curve Issue...**

पृष्ठ संख्या 12 का शेष

2000 छात्रों और शिक्षकों को सम्मानित किया गया था । इतना बड़ा आयोजन यूं ही एकाएक नहीं हो सकता । उसके पीछे रात-दिन का श्रम चाहिए और सबसे बड़ी बात ऐसे काम के लिए एक जुनून का होना बहुत आवश्यक है । अकादमी अपने क्षेत्र में काफी अच्छा कार्य कर रही है इसके लिए हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी और इसके सभी सदस्यों बहुत-बहुत बधाई देता हूँ । अकादमी को सोशल मीडिया का भी इस्तेमाल करना चाहिए क्योंकि आज के समय में सोशल मीडिया सबसे बड़ा हथियार है आप इसके जरिए अपनी भाषा संस्कृति को भी उन्नत कर सकते हैं ।

प्रश्न : आप इतने ऊंचे पद पर हैं और आपकी बात का एक अलग महत्व होता है । आपकी हर बात को राजनैतिक, कूटनीतिक और जनस्तर पर गंभीरता से लिया जाता है । आप हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के पाठकों को और सदस्यों को भाषा और संस्कृति के बारे में क्या संदेश देना चाहेंगे?

उत्तर : मेरे पूर्वज गुजरात के थे और मुझे अपनी भाषा और संस्कृति से काफी लगाव है । मैं यही कहना चाहूंगा कि हमें अपनी भाषा और संस्कृति को बचा कर रखना चाहिए । उसकी प्रगति के लिए कार्य करना चाहिए क्योंकि जब तक हमें यह नहीं पता होगा कि हम लोग आए कहाँ से है तो हमें यह भी पता नहीं चलेगा कि हमें जाना कहाँ है । इसलिए हमें सबसे पहले अपनी भाषा, संस्कृति और धर्म को बचाना होगा । मैं आप सब से भी यही आशा करता हूं कि आप भाषा और संस्कृति को बचाएंगे और उसकी उन्नति के निमित्त कार्य करेंगे। आपने हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के लिए अपना बहुमूल्य समय हमें दिया इसके लिए आपका बहुत-बहुत आभार !

हिन्दी : राजभाषा व राष्ट्रभाषा के रूप में

प्रो. शरद नारायण खरे

भारत का वर्तमान ही नहीं बल्कि अतीत भी अत्यंत गौरवशाली रहा है। अनेक महापुरुषों ने इसके गौरव को बनाये रखने के प्रति व्यापक गंभीरता व दूरदर्शिता दिखाई है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा था कि अगर हम भारत को राष्ट्र बनाना चाहते हैं, तो हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा हो सकती है । किसी भी राष्ट्र की सर्वाधिक प्रचलित एवं स्वेच्छा से आत्मसात की कई भाषा को राष्ट्रभाषा कहा जाता है । हिन्दी, बंगला, उर्दू, पंजाबी, तेलुगु, तमिल, कन्नड़, मलयालम, उड़िया, इत्यादि भारत के संविधान द्वारा राष्ट्र की मान्य भाषाएँ हैं । इन सभी भाषाओं में हिन्दी का स्थान सर्वोपरि है, क्योंकि यह भारत की राजभाषा भी है । राजभाषा वह भाषाहोती है, जिसका प्रयोग किसी देश में राज-काज को चलाने के लिए किया जाता है । हिन्दी को 14 सितंबर, 1949 को राजभाषा का दर्जा दिया गया है । इसके बावजूद सरकारी काम-काज में अब तक अंग्रेजी का व्यापक प्रयोग किया जाता है । हिन्दी संवैधानिक रूप से भारत की राजभाषा तो है, किन्तु इसे यह सम्मान सिर्फ सैद्धांतिक रुप में प्राप्त है,वास्तविक रूप में राजभाषा का सम्मान प्राप्त करने के लिए इसे अंग्रेजी से संघर्ष करना पड़ रहा है ।

वॉल्टर केनिंग ने कहा था विदेशी भाषा का किसी भी स्वतन्त्र राष्ट्र की राज-काज और शिक्षा की भाषा होना सांस्कृतिक दास्ता है । एक विदेशी भाषा होने के बावजूद अंग्रेजी में राज-काज को विशेष महत्व दिए जाने और राजभाषा के रूप में अपने सम्मान प्राप्त करने हेतु हिन्दी के संघर्ष के कारण जानने के लिए सबसे पहले हमें हिन्दी की संवैधानिक स्थिति को जानना होगा । संविधान के अनुच्छेद 343 के खंड-1 में कहा गया है कि भारत संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी । संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त होने वाले अंकों का रूप, भारतीय अंकों का अंतर्राष्ट्रीय रूप होगा । खंड-2 में यह उपबन्ध किया गया था कि संविधान के प्रारंभ से 15 वर्ष की अवधि तक अर्थात 26 जनवरी, 1965 तक संघ के सभी सरकारी प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी का प्रयोग होता रहेगा जैसेकि पूर्व में होता था । वर्ष 1965 तक राजकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी के प्रयोग का प्रावधान किए जाने का कारण यह था कि भारत वर्ष 1947 से पहले अंग्रेजों के अधीन रहा था और तत्कालीन ब्रिटिश शासन में यहाँ इसी भाषा का प्रयोग राजकीय प्रयोजनों के लिए होता था ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद अचानक राजकीय प्रयोजनों के लिए हिन्दी का प्रयोग कर पाना व्यवहारिक रुप से संभव नहीं था, इसलिए वर्ष 1950 में संविधान के लागू होने के बाद से अंग्रेजी के प्रयोग के लिए 15 वर्षों का समय दिया गया और यह तय किया गया कि इन 15 वर्षों में हिन्दी का विकास कर इसे राजकीय प्रयोजनों के उपयुक्त कर दिया जाएगा, किंतु यह 15 वर्ष पूरे होने के पहले ही हिन्दी को राजभाषा बनाए जाने का दक्षिण भारत के कुछ स्वार्थी राजनीतिज्ञों ने व्यापक विरोध करना प्रारंभ कर दिया । देश की सर्वमान्य भाषा हिन्दी को क्षेत्रीय लाभ उठाने के ध्येय से विवादों में घसीट लेने को किसी भी दृष्टि से उचित नहीं कहा जा सकता ।

भारत में अनेक भाषा-भाषी लोग रहते हैं । भाषाओं की बहुलता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि भारत के संविधान में ही 22 भाषाओं को मान्यता प्राप्त हिन्दी, भारत में सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा है और बांग्ला भाषा दूसरे स्थान पर विराजमान है । इसी तरह पहाड़ी, तमिल, तेलुगू, कन्नड़, मलयालम, मराठी, इत्यादि भाषाएँ बोलने वालों की संख्या भी काफी है । भाषाओं की बहुलता के कारण भाषायी वर्चस्व की राजनीति ने भाषावाद का रूप धारण कर लिया है । इसी भाषावाद की लड़ाई में हिन्दी को नुकसान उठाना पड़ रहा है और स्वार्थी राजनीतिज्ञ इसको इसका वास्तविक सम्मान दिए जाने का विरोध करते रहे हैं ।

देश की अन्य भाषाओं के बदले हिन्दी को राजभाषा बनाए जाने का मुख्य कारण यह है कि यह भारत में सर्वाधिक बोले जाने वाली भाषा के साथ-साथ देश की एकमात्र संपर्क भाषा भी है । ब्रिटिश काल में पूरे देश में राजकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी का प्रयोग होता था । पूरे देश के अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग भाषाएँ बोली जाती थी, किंतु स्वतन्त्रता आंदोलन के समय राजनेताओं ने यह महसूस किया है, जो दक्षिण भारत के कुछ क्षेत्रों को छोड़कर पूरे देश की संपर्क भाषा है और देश के विभिन्न भाषा-भाषी भी आपस में विचार विनिमय करने के लिए हिन्दी का सहारा लेते है । हिन्दी की इसी सार्वभौमिकता के कारण राजनेताओं ने हिन्दी को राजभाषा का दर्जा देने का निर्णय लिया था ।

हिन्दी, राष्ट्र के बहुसंख्यक लोगों द्वारा बोली और समझी जाती है, इसकी लिपि देवनागरी है, जो अत्यंत सरल है । पंडित राहुल सांकृत्यायन के शब्दों में "हमारी नागरी लिपि दुनिया की सबसे वैज्ञानिक लिपि है।" हिन्दी में आवश्यकतानुसार देशी-विदेशी

भाषाओं के शब्दों को सरलता से आत्मसात करने की शक्ति है । यह भारत की एक ऐसी राष्ट्रभाषा है, जिसमें पूरे देश में भावात्मक एकता स्थापित करने की पूर्ण क्षमता है ।

आजकल पूरे भारत में सामान्य बोलचाल की भाषा के रूप में हिन्दी और अंग्रेजी के मिश्रित रूप हिंगलिश का प्रयोग बढ़ा है, इसके कई कारण है । पिछले कुछ वर्षों में भारत में व्यवसायिक शिक्षा में प्रगति आई है । अधिकतम व्यावसायिक पाठ्यक्रम अंग्रेजी भाषा में ही उपलब्ध है और विधार्थियों के अध्ययन का माध्यम अंग्रेजी भाषा ही है । इस कारण से विद्यार्थी हिन्दी में पूर्ण पूर्णत: नहीं हो पाते हैं । अंग्रेजी में शिक्षा प्राप्त युवा हिन्दी में बात करते समय अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग करने को बाध्य होते है, क्योंकि हिन्दी भारत में आमजन की भाषा है । इसके अतिरिक्त आजकल समाचार-पत्रों एवं टेलीविजन के कार्यक्रमों में भी ऐसी ही मिश्रित भाषा प्रयोग में लाई जा रही है, इन सब का प्रभाव आम आदमी पर पड़ता है । भले ही हिंगलिश के बहाने हिन्दी बोलने वालों की संख्या बढ़ रही है, किंतु हिंगलिश का बढ़ता प्रचलन हिन्दी भाषा की गरिमा के दृष्टिकोण से गंभीर चिंता का विषय है । कुछ वैज्ञानिक शब्दों: जैसे मोबाइल, कंप्यूटर, साइकिल, टेलीविजन एवं अन्य शब्दों: जैसे स्कूल, कॉलेज, स्टेशन इत्यादि तक तो ठीक है, किंतु अंग्रेजी के अत्यधिक एवं अनावश्यक शब्दों का हिन्दी में प्रयोग सही नहीं है । हिन्दी, व्याकरण के दृष्टिकोण से एक समृद्ध भाषा है । यदि इसके पास शब्दों का अभाव होता है, तब तो इसकी स्वीकृति दी जा सकती है, पर शब्दों का भंडार होते हुए भी यदि इस तरह की मिश्रित भाषा का प्रयोग किया जाता है, तो यह निश्चय ही भाषायी गरिमा के दृष्टिकोण से एक बुरी बात है । भाषा संस्कृति की संरक्षक एवं वाहक होती है । राष्ट्रभाषा की गरिमा नष्ट होने से उस स्थान की सभ्यता और संस्कृति पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है । हमारे पूर्व राष्ट्रपति एपीजे अब्दुल कलाम का कहना था कि "वर्तमान समय में विज्ञान के मूलकार्य अंग्रेजी में होते हैं, इसलिए आज अंग्रेजी भी सहयोगी भाषा के रूप में आवश्यक है, किंतु मुझे विश्वास है कि अगले दो दशकों में विज्ञान के मूलकार्य हमारी भाषाओं में होने शुरू हो जाएंगे और तब हम जापानियों की तरह अधिक तीव्र गति से आगे बढ़ सकेंगे ।"

हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाए जाने के संदर्भ में गुरुदेव रविंद्रनाथ टैगोर ने कहा था "भारत की सारी प्रांतीय बोलियाँ, जिनमें सुंदर साहित्यों की रचना हुई है, अपने घर या प्रांत में रानी बनकर रहे, प्रांत के जन-गण के हार्दिक चिंतन की प्रकाशभूमि स्वरूप कविता की भाषा हो कर रहे और आधुनिक भाषाओं के हार की मध्य-मणि हिन्दी भारत-भारती होकर विराजती रहे ।" प्रत्येक देश की पहचान का एक मजबूत आधार उसकी अपनी भाषा होती है, जो अधिक से अधिक व्यक्तियों के द्वारा बोली जाने वाली भाषा के रूप में व्यापक विचार विनिमय का माध्यम बनकर ही राष्ट्रभाषा (यहाँ राष्ट्रभाषा का तात्पर्य है- पूरे देश की भाषा) का पद ग्रहण करती है । राष्ट्रभाषा के द्वारा आपस में संपर्क बनाए रखकर देश की एकता और अखंडता को भी कायम रखा जा सकता है ।

हिन्दी देश की संपर्क भाषा तो है ही, इसे राजभाषा का वास्तविक सम्मान भी दिया जाना चाहिए, जिससे कि यह पूरे देश को एकता के सूत्र में बांधने वाली भाषा बन सके । देशरत्न डॉक्टर राजेंद्र प्रसाद व्दारा कही गई बात आज भी प्रासंगिक है "जिस देश को अपनी भाषा और साहित्य के गौरव का अनुभव नहीं है, वह उन्नत नहीं हो सकता । अत: आज देश के सभी नागरिकों को यह संकल्प लेने की आवश्यकता है कि वह हिन्दी को स्नेह से अपनाकर और सभी कार्य क्षेत्रों में इसका अधिक से अधिक प्रयोग कर इसे व्यवहारिक रुप से राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा बनने का गौरव प्रदान करेंगे ।"

वस्तुत: संकल्प, दृढ़ता व निष्ठा की आवश्यकता है, जिसके बल पर हिन्दी राजभाषा भी बन सकती और राष्ट्रभाषा भी। वैसे भी दृढ़ इच्छा से क्या संभव नहीं है ?

- प्रो. शरद नारायण खरे
विभागाध्यक्ष इतिहास
शासकीय जे.एम.सी. महिला महाविद्यालय
मंडला-481661 (म.प्र.)
मो. : 9425484382

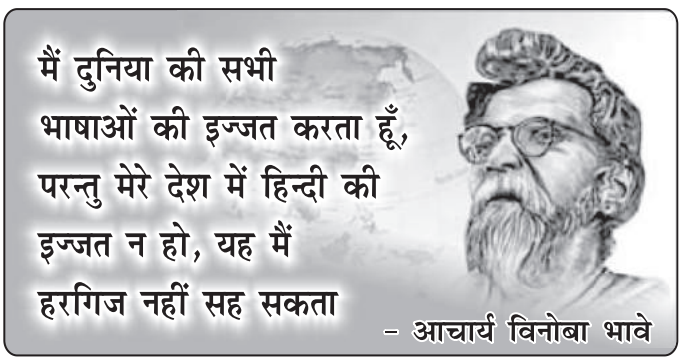

राष्ट्रीय व्यवहार में हिन्दी को काम में लाना देश की शीघ्र उन्नति के लिए आवश्यक है ।
- महात्मा गाँधी

वैद्यनाथ मिश्र : मैथिली साहित्य के 'यात्री' और 'हिन्दी' के नागार्जुन
मामूली सी बातों को कालजयी बनाने वाला जनकवि

डॉ. श्वेता दीप्ति

बाबा नागार्जुन का असली नाम वैद्यनाथ मिश्र था लेकिन वे अपनी मातृभाषा मैथिली में 'यात्री' नाम से लिखा करते थे । यह उनका खुद का चुना हुआ उपनाम था । इसकी भी एक कहानी है । बचपन में अपने पिता के साथ यजमानी के लिए घूमने फिरने वाले नागार्जुन ने एक बार मूल रूप से पाली में लिखी गई राहुल सांस्कृत्यायन की किताब 'संयुक्त निकाय' का अनुवाद पढ़ा था । इसे पढ़कर उनके मन में जिज्ञासा जागी कि इसे मूल भाषा में पढ़ना चाहिए । इसी को लक्ष्य बनाकर वे श्रीलंका पहुंच गए और यहां एक बौद्धमठ में रहकर पाली सीने लगे । बदले में वे बौद्ध भिक्षुओं को संस्कृत पढ़ाते थे । यह उनकी यायावरी प्रवृत्ति का एक अद्‌भुत उदाहरण है और इसीलिए उन्होंने खुद को 'यात्री' नाम दिया था । श्रीलंका में ही वैद्यनाथ मिश्र बौद्ध धर्म में दीक्षित हुए और उन्हें नया नाम मिला नागार्जुन । वहीं उनकी रचनाओं से प्रभावित पाठकों ने उन्हें 'बाबा' कहना शुरू कर दिया और आखिरकार वे बाबा नागार्जुन हो गए ।

जनता मुझसे पूछ रही है क्या बतलाऊं
जन कवि हूँ मैं साफ कहूँगा क्यों हकलाऊं

बाबा नागार्जुन की ये पंक्तियां उनके जीवन दर्शन, व्यक्तित्व एवं साहित्य का दर्पण है । अपने समय की हर महत्वपूर्ण घटना पर तेज तर्रार कवितायें लिखने वाले क्रान्तिकारी कवि बाबा नागार्जुन एक ऐसी हरफनमौला शख्सियत थे जिन्होंने साहित्य की अनेक विधाओं और तथा कई भाषाओं में लेखन कर्म के साथ-साथ जनान्दोलनों में भी बढ़ चढ़कर भाग लिया और उनका नेतृत्व भी किया ।

बाबा के नाम से प्रसिद्ध कवि नागार्जुन का जन्म जून 1911 को बिहार में हुआ था । उनकी प्रारंभिक शिक्षा स्थानीय संस्कृत पाठशाला में हुई । बाद में वाराणसी और कोलकाता में आगे की पढ़ाई की । 1930 में जब वह बौद्ध धर्म की दीक्षा लेकर वापिस स्वदेश लौटे तो उनके जाति भाई ब्राह्मणों ने उनका सामाजिक बहिष्कार कर दिया । बौद्ध धर्म ग्रहण कर सन्यासी बनने पर ससुराल वालों ने इनके पिता को कसूरवार ठहराया और हिदायत दी कि दामाद को वापस बुलायें नहीं तो जेल भिजवा देंगें । बाबा नागार्जुन ने ऐसी बातों की कभी परवाह नहीं की । राहुल सांस्कृतायन के बाद हिन्दी के सबसे बडे घुमक्कड़ साहित्यकार होने का गौरव भी बाबा नागार्जुन को ही प्राप्त है । पर अपनी माटी से लगाव के कारण वे बारबार घर वापिस लौट आते थे ।

1939 में वे स्वामी सहजानन्द सरस्वती और सुभाषचन्द्र बोस के सम्पर्क में आने के बाद उन्होंने छपरा में उमवारी के किसानों के साथ मिल संघर्ष का नेतृत्व किया । छपरा और हजारीबाग जेल में कारावास भोगने के तुरन्त बाद वे हिमालय तथा तिब्बत के जंगली इलाकों में भ्रमण के लिये निकल गये । 1941 में दूसरे किसान सभाई नेताओं के साथ भागलपुर केन्द्रीय कारागार में बन्द रहे । इसी दौरान वे गृहस्थाश्रम में वापिस लौट आये । 1948 में गांधीजी की हत्या पर लिखी गयी उनकी कविताओं के कारण उन्हें कारावास का दण्ड मिला।

परंपरागत प्राचीन पद्धति से संस्कृत की शिक्षा प्राप्त करने वाले बाबा नागार्जुन हिन्दी, मैथिली, संस्कृत तथा बांग्ला में कविताएँ लिखते थे । मैथिली भाषा में लिखे गए उनके काव्य संग्रह 'पत्रहीन नग्न गाछ' के लिए उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया ।

स्वभाव से फक्कड और अक्ड़ बाबा नागार्जुन सच्चे अर्थों में जन कवि थे । वह बौद्ध भिक्षु भी रहे और कम्युनिस्ट प्रचारक भी, किसानों के आन्दोलन के साथ भी रहे और जयप्रकाश नारायण के छात्र आन्दोलन के साथ भी । वह प्रत्येक आन्दोलन और नेता के तभी तक समर्थक और अनुयायी रहे जब तक वह जनहित में रहा । जहां उन्हें लगा कि जनता को बरगलाया जा रहा है, देश को धोखा दिया जा रहा है वह तुरन्त पलटकर नेतृत्व पर टूट पड़े । इसका सबसे बडा उदाहरण है सन 1962 में चीनी आक्रमण के समय प्रतिबद्ध वामपंथी होते हुये भी उन्होंने कम्युनिस्ट नेताओं को उनकी चीनी भक्ति के लिये जमकर कोसा और स्वयं को धिक्कारने से भी नहीं हिचकिचाये।

जन संघर्ष में अडिग आस्था, जनता से गहरा लगाव और एक न्यायपूर्ण समाज का सपना, ये तीन गुण नागार्जुन के व्यक्तित्व में ही नहीं, उनके साहित्य में भी दिखते हैं । निराला के बाद नागार्जुन अकेले ऐसे कवि हैं, जिन्होंने इतने छंद, इतने ढंग, इतनी शैलियाँ और इतने काव्य रूपों का इस्तेमाल किया है । बाबा की कविताओं में कबीर से लेकर धूमिल तक की पूरी हिन्दी काव्य परंपरा एक साथ जीती है । अपनी कलम से आधुनिक हिन्दी काव्य को समृद्ध करने वाले नागार्जुन का 5 नवम्बर सन् 1998 को बिहार में निधन हो गया ।

साहित्यकारों की राय 'यात्री' के बारे में

हिन्दी के आधुनिक कबीर नागार्जुन की कविता के बारे में डॉ. रामविलास शर्मा ने लिखा है, 'जहां मौत नहीं है, बुढ़ापा नहीं है, जनता के असंतोष और राज्यसभाई जीवन का संतुलन नहीं है, वह कविता है नागार्जुन की । ढाई पसली के घुमंतू जीव, दमे के मरीज, गृहस्थी का भार फिर भी क्या ताकत है नागार्जुन की कविताओं में और कवियों में जहां छायावादी कल्पनाशीलता प्रबल हुई है, नागार्जुन की छायावादी काव्य शैली कभी की खत्म हो चुकी है। अन्य कवियों का रहस्यवाद और यथार्थवाद को लेकर द्वन्द्व हुआ है, नागार्जुन का व्यंग्य और पैना हुआ है । क्रांतिकारी आस्था और दृढ़ हुई है, उनके यथार्थ चित्रण में अधिक विविधता और प्रौढ़ता आई है ।'

नागार्जुन के बारे में प्रसिद्ध आलोचक डॉ. नामवर सिंह ने लिखा है, 'नागार्जुन की गिनती न तो प्रयोगशील कवियों के संदर्भ में होती है, न नई कविता के प्रसंग में, फिर भी कविता के रूप से संबंधी जितने प्रयोग अकेले नागार्जुन ने किए हैं, उतने शायद ही किसी ने किए हों । कविता की उठान तो कोई नागार्जुन से सीखें और नाटकीयता में तो वे वैसे ही लाजवाब हैं । जैसी सिद्धि छंदों में, वैसा ही अधिकार बेछंद या मुक्तछंद की कविता पर. उनके बात करने के हजार ढंग हैं । और भाषा में भी बोली के ठेठ शब्दों से लेकर संस्कृत की संस्कारी पदावली तक इतने स्तर हैं कि कोई भी अभिभूत हो सकता है । तुलसीदास और निराला के बाद कविता में हिन्दी भाषा की विविधता और समृद्धि का ऐसा सर्जनात्मक संयोग नागार्जुन में ही दिखाई पड़ता है।'

नागार्जुन को करीब से समझने वाले और उनकी रचनाशीलता को शब्दों में ढालने वाले प्रसिद्ध साहित्यकार और आलोचक डॉ. विजय बहादुर सिंह ने 'नागार्जुन का रचनासागर' में उन पर विस्तार से लिखा है । डॉ. विजय बहादुर सिंह लिखते हैं, 'पारंपरिक अर्थों में नागार्जुन महाकवि नहीं हैं । किंतु वे महान कवि यदि नहीं भी कहे जाएं तो भी उनकी गिनती इसी श्रेणी में होगी क्योंकि राष्ट्रीय वेदनाओं की उनकी संवेदनीयता और राष्ट्रीय आंदोलन के गहरे सपनों के प्रति उनकी सजगता और आग्रहशीलता उन्हें यह स्थान मुहैया करा देती है ।' उन्होंने लिखा है, 'आलोचक ठीक ही कहते हैं कि नागार्जुन आजादी के बाद के राष्ट्रीय जीवनयथार्थ के सबसे बड़े कवि प्रवक्ता हैं । यद्यपि उनकी मुख्य मुद्रा तीखी आलोचनात्मक है किंतु उनके पाठक जानते हैं कि कोमल और सुंदर का सन्निवेश और सृजन भी उनके यहां बेजोड़ है । प्रकृति हो या प्रेम, राजनीति हो या धर्म, सभ्यता आदि, उद्योग व्यापार हो या विज्ञान और ज्ञान, यहां तक कि इतिहासपुराण और देवीदेवता हों, सबके सब कविता के लोकतंत्र में अपने उस चेहरे के साथ मौजूद हैं, जिसे ये सत्ताएं प्राय: छिपाने और बचाने का काम करती हैं ।'

मैथिली साहित्य में नागार्जुन का स्थान

मैथिली साहित्य में नागार्जुन के स्थान को उनके पूर्ववर्ती कवियों से तुलनात्मक दृष्टि में देना कदाचित अनुचित होगा । विद्यापति मिश्र अगर मैथिली के ऐतिहासिक साहित्यकारों में कालिदास और शेक्सपीयर जैसे लेखकों की श्रेणी से तुल्य हैं तो यात्री का स्थान भी कुछ अधिक पीछे न होगा । 40 से 60 के दशक में कई भारतीय भाषाओँ की रचनात्मकता में कई बदलाव आये । कई नयी विधाएं जुड़ी, कुछ पुराने तौर तरीके हासिये पे चले गए, पर परिवर्तनशीलता की दृष्टि से यात्री मैथिली साहित्य के नए युग के जनक माने जा सकते हैं । उन्होंने न केवल मैथिली में पद्य लेन और मूलत: मुक्तछंद में पद्य लेन को मुख्यधारा का विषय बनाया । कविताओं में श्रृंगार और भक्ति की सीमाओं को पार करते हुए वो भाषा को सर्वहारा समुदाय के सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक पिछड़ेपन को उजागर करने का माध्यम बनाने में बहुत हद तक सफल रहे । नए युग के कवियों के लिए प्रगतिशील साहित्य में लेन के प्रेरणाश्रोत के रूप में उन्हें आने वाले वर्षों में याद किया जायेगा । यात्री की विशेषताएं बस उनकी कविताओं के रूप गुण के कारण ही नहीं लेकिन उनके शब्दचयन में महारथ से भी जुडी हैं । एक लगभग मृतप्राय भाषा से गुम हो चुकी शब्दों को नए ढंग की कविताओं में पुनर्प्रयोग कर के उन्होंने संजीवनी की तरह काम किया है । जैसा उनकी कविताओं में मैथिली और मिथिला के लिए प्रेम दिखता है उतना ही प्रेम उन्होंने उन शब्दों के साथ भी दिखाया है ।

बाबा के लिए कविकर्म कोई आभिजात्य शौक नहीं, बल्कि 'खेत में हल चलाने' जैसा है । वह कविता को रोटी की तरह जीवन के लिए अनिवार्य मानते हैं । उनके लिए सर्जन और अर्जन में भेद नहीं है । इसलिए उनकी कविता राजनीति, प्रकृति और संस्कृति, तीनों को समान भाव से अपना उपजीव्य बनाती है । उनकी प्रेम और प्रकृति संबंधी कविताएँ उसी तरह भारतीय जनचेतना से जुड़ती हैं जिस तरह से उनकी राजनीतिक कविताएँ । बाबा नागार्जुन, कई अर्थों में, एक साथ सरल और बीहड़, दोनों तरह के कवि हैं । यह विलक्षणता भी कुछ हद तक निराला के अलावा बीसवीं सदी के शायद ही किसी अन्य हिन्दी कवि में मिलेगी । उनकी बीहड़ कवि दृष्टि रोजमर्रा के ही उन दृश्यों प्रसंगों के जरिए वहाँ तक स्वाभाविक रूप से पहुँच जाती है, जहाँ दूसरे कवियों की कल्पनादृष्टि पहुँचने से पहले ही उलझ कर रह जाए ।

''मनुष्य सदा अपनी
मातृभाषा में ही विचार करता है ।''
- मुकुन्दस्वरूप वर्मा

मैथिली साहित्य और संस्कृति

श्रीमती पूनम झा

भारत के पूर्वी भाग में मैथिली भाषा बोली जाती है । भारत के बिहार राज्य और नेपाल के तराई क्षेत्र में मुख्यरुपसे मैथिली बोली जाती है । मैथिली को हिन्दी और बंगाली की उप-भाषा कहा गया है लेकिन 2003 में मैथिली को स्वतंत्र भाषा का दर्जा मिला । मैथिली साहित्य का अपना ही समृद्ध इतिहास रहा है और चौदहवीं तथा पन्द्रहवीं शताब्दी के कवि विद्यापति को मैथिली साहित्य में सबसे उच्च दर्जा हासिल है । वर्तमान में डा. हरिमोहन झा तथा नागार्जुन को मैथिली भाषा का प्रमुख लेखक माना जाता है ।मिथिलाक्षर अथवा तिरहुत का अपना ही अत्यन्त समृद्ध और सुविख्यात इतिहास है । इस भाषा का प्रारंभिक शिलालेख आदित्य सेन (सातवीं शताब्दी ई. पूर्व) मंदार पर्वत की शिलाओं पर मिला था जो वर्तमान में देवघरके वैद्यनाथ मन्दिर में स्थापित किया गया है । हिन्दी में श्री इन्द्रनारायण झाजी द्वारा लिखित शोध ग्रन्थ "मिथिला अन्वेषण एवं दिग्दर्शन" का परिवर्तित एवं परिमार्जित संस्करण में मिथिलाक्षर की उत्पत्ति एवं विकास के संबध मे वृहत विश्लेषण क्रिया गया है । मिथिला और मैथिली के प्रति असीम अनुराग होने के कारण एवं अन्वेषी प्रकृति होने के कारण चन्द्रनारायण झा जी ने इस बहुउपयोगी ग्रन्थ की रचना की । मैथिली लिपि मैथिली भाषा की अपनी ही एक अलग लिपि है जो मिथिलाक्षर के नाम से जानी जाती है । ब्राह्मी लिपि से इसका कुछ मेल जोल है । इसके सृजन के संबध में एक मान्यता है कि विभिन्न अंगों के आकार एवं वैदिक कर्मकांडों में प्रयुक्त याज्ञिक मंडप, त्रिकोण एवा चतुष्कोण के आधार पर मैथिली लिपि की उत्पति हुई । मिथिलाक्षर लिखने के तरीके में समय के अनुसार क्षेत्रीय आधार पर थोड़ा बहुत अन्तर जरूर आया है पर इसका स्वरूप नहीं बदला है ।

जब मुगल शासन की स्थापना हुई तो मगही और भोजपुरी भाषाओं ने नागरी लिपि को अपना लिया परंतु मैथिली भाषा की अपनी मिथिलाक्षर लिपि ही प्रयोग में चलती रही, परंतु सत्ता बदली संस्कार भी बदला और मिथिलाक्षर लिपि पर देव नागरी लिपि का इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि सरकारी कामकाज तो क्या पढाई-लिखाई तक में भी मैथिली भाषी क्षेत्रों में भी इन्हें स्थान नहीं दिया गया । इसका अत्यंत दु:खद परिणाम यह हुआकि बोल-चाल में तो मैथिली जीवित रही और मैथिली साहित्य भी फुलता रहा परंतु इसकी अपनी लिपि ही विलुप्त होती चली गई । आज आलम ऐसा है कि मैथिली साहित्य की जितनी भी पुस्तकें प्रकाशित हो रही है सब देवनागरी लिपि में ही प्रकाशित हो रही है । मिथिलाक्षर लिपि का इस तरह लुप्त होना समस्त साहित्य जगत के लिए एक बहुत बड़ी क्षति है ।

विकास : मैथिली भाषा का अत्यन्त उत्कृष्ट नमूना रामायण में मिलता है । मिथिला नरेश राजा जनक की राज-काज अर्थात राज्य भाषा मैथिली थी। इस प्रकार मैथिली इतिहास की प्राचीनतम भाषाओं में से एक भाषा है । भारत तथा नेपाल लगायत विश्व के अनेक देशों में मैथिली के प्रयोगकर्ता फैले हुए हैं । मैथिली पूरी दुनियां की अत्यंत समृद्ध, सौम्य तथा माधुर्य पूर्ण भाषाओं में से एक मानी जाती है । परंतु दु:ख की बात है कि नेपाल या भारत कहीं भी मैथिली भाषा के विकास हेतु कोइ खास कदम नहीं उठाया गया हैं जो मैथिली साहित्य के लिए चिंता का विषय है । आज कल इस भाषा के संरक्षण संवर्द्धन की ओर लोगों का ध्यान गया है जो समय के अनुसार सराहनीय है और जिसकी मांग भी है अनेक ऐसे रेडियो स्टेशन हैं जिन पर मैथिली भाषा में कार्यक्रम प्रसारित किया जाता है । नेपाल में सगरमाथा चैनल, नेपाल-१, तराई टी.वी और मकालू टी.वी है जिन पर मैथिली में खबरों का प्रसारण होता है जो मैथिल और मैथिली के लिए हर्ष का विषय है ।साहित्य में लोकगीत को अपना विशिष्ट महत्व रहा है। मैथिली साहित्य में भी लोकगीत का प्रचलन प्राचीनकाल से ही संभवत: विदेशवंशी राजाओं के समय से ही चली आ रही विश्वास है ।

मैथिली लोक संस्कृति:

किसी भी सामाजिक जीवन के संरचना में कुछ मौलिक तत्वों का महत्वपूर्ण हाथ होता है जो सम्पूर्ण जीवन शैली को एक निश्चित लक्ष्य की ओर अग्रसारित करता है यही है लोक संस्कृति । संस्कृति मनुष्य की पहचान को स्थायित्व प्रदान करता है तथा एक सूत्र में आबद्ध करने का वातावरण निर्माण करता है । यही कारण है कि आज सर्वत्र वसुधैव कुटुम्बकम का नारा व्याप्त है- सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामय ।

लोक और संस्कृति :

लोक संस्कृति की जब भी चर्चा की जाती है, दो शब्द आते हैं- लोक एवं संस्कृति । संस्कृत का तत्सम शब्द है लोक । लोक शब्द का सामान्य अर्थ होता है आम लोग । शब्दकोश तथा अमरकोश में लोक का अर्थ जन अथवा जनता दिया गया है । लोक शब्द का अर्थ प्राचीन काल से ही जन समुदाय के लिए प्रयोग में होता आया है । मानव द्वारा निर्मित मानवीय स्वभाव के दिग्दर्शन का बोध संस्कृति के माध्यम से होता है । संस्कृत के चार अध्याय पुस्तक में प्रसिद्ध कवि, समालोचक डा. रामघारी सिंह दिनकर ने लिखा है-

"संस्कृति अन्तर्गत वंशगत शिल्प तथ्यों, वस्तुओं, प्राविधिक क्रियाओं, धारणाएं अभ्यास तथा मूल्यों का समावेश होता है । "पौराणिक इतिहास में बहुचर्चित राजर्षि उपनाम से परिचित राजा जनक निमि वंशज है ।

विद्धतजनों की गोष्ठी परंपरा

जनक वंश की सबसे महत्वपूर्ण और उपलब्धि मूलक परंपरा अथवा संस्कृति है विद्वानों की सभा । गार्गी, मैत्रेयी, मण्डन मिश्र की भार्या (पत्नी) खण्डकपाली(भारती) तथा समस्त गुणों से सम्पन्न सीता जैसी विदुषियों का चमत्कारिक क्षेत्र भी मिथिला ही है ।

हल का आविष्कार :- खेती कार्य के लिए हल का प्रयोग एवं पशु बल का सदुपयोग राजा जनक के समय से ही माना जाता है ।कृषि उत्पादन में पशु बल के प्रयोग का श्रेय राजा जनक को ही जाता है । राजा जनक ने खेत जोतने के लिएपशु शक्ति का प्रयोग करकेहल के प्रयोग से अपने राज्य को अन्न-धन से समृद्ध किया । अतः राजा जनक ही हल के आविस्कारक हैं ।

भारतीय आर्य भाषा के विकास क्रम मे मैथिली: मैथिली मिथिलांचल की भाषा है । इस भाषा के लिए मैथिली शब्द का प्रथम प्रयोग कोलधुक ने (1801 ई.) मेकिया था । जार्ज ग्रियर्सन ने इस शब्दकोश को अधिक लोक प्रिय बनाया था । इससे पूर्व इस भाषा को तिरहुतिथा, मिथिला अपभ्रंश (लोचन) अवहट्ट (ज्योतिरीश्वर), देसिल वयना (विद्यापति) मिथिला भाषा (चन्दा झा)आदि कहा जाता था । निष्कर्षत : मैथिली भाषा की उत्पत्ति भागधी, प्राकृत से अपभ्रंश विकास के क्रम में हुआ पाया जाता है ।मैथिली शब्द सम्पदा अत्यन्त समृद्ध है । हर्न तथा ग्रियर्सन ने सर्वप्रथम " ए कम्पेरेटिव डिक्सनरी आफ बिहारी लैंग्वेज (1885-1889 ई.)" के माध्यम से इसका सूत्रपात क्रिया तत्पश्चात दीनबन्धु झा ।

3) मेडाइबल नेपाल भाग 4 पृष्ठ 65

4) मैथिली भाषाकोश , 1995 ई. डा. जयकान्त मिश्र (वृहद मैथिली शब्दकोश 1973 ई.) के अतिरिक मैथिली-नेपाली एवम अंग्रेजी आदि का शब्दकोश निर्माण प्रक्रिया गतिशील है ।

छ) डा. योगेन्द्र प्रसाद यादव रिडिंगस इन मैथिली लैंगवेज लिट्रेचर एण्ड कल्चर काठमाण्डौं 1999 ई. ।

मैथिली में अभिव्यक्ति का सशक्त सामार्थ्य हैं । इसमें सृजनात्मक आरंभ का बीज आदिकालीन मैथिली साहित्य में उपलब्ध है जिसका विकास और विस्तार आधुनिक काल तक देखा जा सकता है । साहित्येतिहास का विधिवत श्रीगणेश डा. जयकान्त मिश्र ने किया हैं ।

मैथिली साहित्य का काल विभाजनः

" मैथिली भाषा और साहित्य की सुदीर्ध परंपरा के पुनरावलोकन से पंडित गोविन्द झा" ने नवीन भारतीय आर्य

भाषा को कालक्रमानुसार तीन भागों में विभाजित किया है-

1. आदिकाल- 1300-1700 ई.
2. मध्यकाल- 1700-1800 ई.
3. आधुनिक काल- 1800-आद्यपर्यन्त

परंतु पंडित राजेश्वर झा ने मैथिली साहित्य के आदिकाल को तीन भागों मे विभाजित करके अनुशीलन किया है ।

1. उद्भव और अविकसित साहित्य ख्र 1500 ई. पू . से 800 ई.
2. प्रारंभीक प. एवं विकास 800-1200 ई.
3. समृद्ध साहित्य 1200-1400 ई.

(झिझिया) सांस्कृतिक पर्व झिझिया

छटवीं-सातवीं शताब्दी के आस-पास मिथिलाञ्चल में "मालिनी" सम्प्रदाय का प्रभाव बहुत प्रचलन में था । यह समय टोने-टोटके से ग्रसित होता एवं वे मालिनी लोग इसमें पारंगत होते थे । इसी हेतु विद्वानों ने मिथिलांचलकी प्रसिद्ध लोक गाथा "सलहेस" को छठवीं-सातवीं शताब्दी के समय की कथा मानते हैं क्योंकि सलहेस की प्रेमिका "मालिनी" बहुत ही कुशल जादूगरनी होती थी । जादु-टोना करने वाली उन मालिनों की परंपरा के पश्चात् डायनों की परंपरा की शुरुआत हुई जो अपने गुण को सिद्ध करने के लिए बच्चे-बच्चियों को मारकर श्माशान पूजा करने का विश्वास है । इन्हीं डायनों से बचने के लिए महिलाओं ने एक एक लोक अनुष्ठान का प्रारंभ किया जिसे झिझिया कहते हैं ।

झिझिया में लोक नृत्य द्वारा माता दुर्गा की स्तुति की जाती है वहीं डायनों की भर्त्सना की जाती है और अपशृकन न करने की चेतावनी दी जाती है । इसमें महिलाओं की 10-20 टोली होती है । एक कलश में असंख्यछिद्र करके उसमें दिया रखा जाता है । कलश पर ढक्कन रखकर उस पर उपले रखकर अग्नि प्रज्जवलित कीजाती है । 5-6 महिलाएं उसे अपने सिर पर रखकर सामूहिक रुप में गीत के बोल पर नृत्य करती है ।ऐसा माना जाता है कि यदि उस छिद्र को किसी डायन ने गिन लिया तो उस नाचनेवाली महिला की वहीं मृत्यु हो जाएगी ।

झिझिया पूर्ण रुप से तांन्त्रिक पद्धति पर आधारित नृत्य है । डायन योगिन से अपने सन्तानों की रक्षा के लिए तान्त्रिक विधि अनुसार अनुष्ठान किया जाता है, नृत्य गान का आयोजन किया जाता है ।

अत: झिझिया लोक नृत्य मिथिलांचल की अपनी मौलिक चिन्तन लिए हुए लोक-मान्यता में आधारित अनुष्ठान प्रक्रिया है, जो सम्पूर्ण सामाजिक संरचना को विगत् 12-13 सौ वर्षो की ऐतिहासिक परंपरा को जीवित एवं चलायमान रखा है । दुनियां परिवर्तनशील है । परंतु मिथिलांचल में अभी भी सांस्कृतिक पारंपरा जीवित है जिसका नृत्य है ।

लोक गीत:

मिथिला वास्तव में सर्व प्रथम नगर विशेष के लिए प्रयोग किया था । "मिथिलानाम नगरी तत्रास्ते लोक विश्रुता (मिथिला महात्म 1472714, रामेश्वर छापाखाना दरभंगा पृष्ठ-756)" कुछ समय पश्चात सम्पूर्ण प्रदेश का बोध होने लगा ।

परम प्रिय पावन तिरहुत देश ।

जन्म जहां विदेश तनया श्री सीता मंजुल इसी पवित्र भूमि की वेश भाषा मैथिली अपनी कोमलता और मधुरता के लिए प्रसिद्ध है । डा. सुनिति कुमार चटर्जी ने मैथिली को मागधी और अपभ्रंश से निकला माना है ।

लोक गीत का प्रारंभ : लोक गीत मानव जीवन में स्वत: स्फूर्त परंपरा है जिसे किसी ने निर्माण नहीं किया हैं, बल्कि लोक कण्ठ में एक से दूसरे में निरंतर चलायमान परंपरा है । मिथिलां**चल** क्षेत्र में कर्णाट वंशीय राजा नान्यदेव (1096-1133) के योगदान को गीत-संगीत स्थापित करने का महत्वपूर्ण श्रेय माना जाता है । वे पहले ऐसे राजा थे जिन्होंने संगीत के विभिन्न राग रागिनीयों का निर्माण और विकास किया । उनके द्वारा लिखित "सरस्वती हृदय अलंकारहार" इसका उत्कृष्ठ प्रमाण माना जाता है । लोक गीत का स्वरुप : यदि प्राचीनता की ओर विचार करें तो रामचरित्र मानस में गोस्वामी तुलसीदास ने जनकपुर की महिलाओं द्वारा राम-जानकी विवाह के अवसर पर मैथिली लोकगीत को मैथिली साहित्य के प्रथम इतिहासकार डा. जयकान्त मिश्र ने सात भागों में बांटा है ।

(1) भजन गीत (2) देव-देवता गीत (3) पर्व गीत (पावनीक गीत) (4) जन्म गीत (5) संस्कार गीत (6) त्रहतु गीत, ऋतु गीत एवं (7) लगनी । इसके अतिरिक्त और अनेक विद्वानों ने भी अपनी-अपनी धारणाएं व्यक्त की हैं । वास्तव में मैथिली लोकगीत को मोटे तौर पर विभाजित करने पर धार्मिक गीत, संस्कार गीत, व्यवहार गीत, ऋतुगीत तथा अन्य विविध रुपों में प्रयोग हुआ पाया जाता है ।

धार्मिक गीत- मैथिली लोग परापर्व काल से ही धार्मिक प्रवृत्ति के रहे हैं । लोक संस्कृति के विकास और संरक्षण में इन्हीं धार्मिक मान्यताओं का महत्वपूर्ण स्थान रहा है । यह भी एक कारण है कि विभिन्न धार्मिक आस्थाओं का प्रतीक गीतों का समाज में प्रचलन है। यह गीत सगुण और निर्गुण दोनों रुप में उपलब्ध है ।

गोसाउनिक गीत : मिथिलांचल में प्राचीन काल सें लेकर आज तक किसी शुभ कार्य का प्रारंभ करने से पहलें "गोसाउनिक गीत" अर्थात देवी वन्दना करने का चलन है । महाकवि आदि प्रसिद्ध रचना जय-जय भैर**वी** के द्वारा कालीजी की वन्दना किया था । कार्य का आयोजन सफलता पूर्वक सम्पन्न हो यह मानसिकता भी निहित है ।

नचारी : सामान्य तथा शिव की लीला समेटे हुए गीतों को नचारी कहते हैं ।

संस्कार गीत : विविध संस्कारों के अवसर पर गाए जाने वाले गीतों को संस्कार गीत के नाम से जाना जाता हैं ।

मिथिलांचल में प्रचलित लोक गीतों में अत्यन्त प्रचलित, समृद्ध और विस्तृत, संस्कार गीत का प्रारंभ सोहर से होता है । शिशु जन्मोत्सव के अवसर पर गाया जाने वाला यह गीत अत्यन्त रोचक होता है। इसके पश्चात खेलौना, छठिहार बधैया, मुण्डन और उपनयन, मातृका पूजन आदि का गीत होता है ।

ऋतु गीत : ऋतु के अनुसार गाई जाने वाली गीतों को ऋतु गीत कहते हैं । यह अत्यन्त सरस और भाव प्रवण होता है । इसमें जीवन के रमणीय..... का सजीव चित्रण होता है । जैसे फागु, चौतावर, बसन्त, पावस झूला, बरहमासा, चौमासा, छठ गीत आदि । गोदना भी यहीं की संस्कृति का एक अभिन्न अंग था जो आज विलुप्त प्राय है ।

अत: ऐसी पावन और लोकप्रिय संस्कृति का संरक्षण आज की आवश्यकता है । रामभरोसे कापडि भ्रमर नेपाल प्रज्ञा प्रतिष्ठान प्रथम संस्करण : 2075 रामदयाल राकेश नेपाल प्रज्ञा प्रतिष्ठान प्रथम संस्करण 2056।

निष्कर्षत: मैथिली जहां भी बोली जाती है वहां के लोग हिन्दी का भी उतना ही प्रयोग करते हैं । यदि हिन्दी पूर्ण रुपसे नहीं भी बोल पाते हैं पर टूटी-फूटी हिन्दी जरुर बोलते और समझते हैं । अत: हम कह सकते हैं कि यदि मैथिली के विकास पर ध्यान दिया जाये तो हिन्दी भी और अधिक विकसित और समृद्ध होगी क्योकिं दोनों ही भाषाओं का अपना अन्तर संबंध है जो अटूट हैं ।

शेष पृष्ठ संख्या 63 पर

मैथिली भाषा साहित्य, लोक कला तथा हिन्दी की स्थिति

मिथिला संस्कृति के दो महत्वपूर्ण पर्व वट सावित्री और मधुश्रावणी

श्रीमती अंशु झा

आर्यावर्त में नारियों के कर्तव्य का स्थान अग्रगण्य है । प्राचीन काल से ही नारियां पुरुष की शक्ति बनकर उनकी रक्षा करती आ रही है । जिसमें सावित्री का नाम भी उल्लेनीय है । सावित्री की पतिव्रता को लेकर ही यह वटसावित्री व्रत का नामकरण किया गया है ।

यह व्रत प्राय: मिथिलांचल में मनाया जाता है । सुहागिन महिलाएं अपनी पति की दीर्घायु तथा स्वयं अटल सौभाग्य प्राप्ति हेतु यह व्रत करती हैं । यह व्रत कुमारी कन्या भी सुन्दर, स्वस्थ तथा दीर्घायु वर प्राप्ति के लिए करती है ।

वैसे तो यह व्रत मिथिलांचल की प्रत्येक सुहागिन अर्थात् सधवा महिलाएं करती है, परन्तु नवविवाहिता स्त्रियां बड़ी धूमधाम से करती हैं । बट सावित्री व्रत करने के पीछे ऐसी मान्यता है कि ज्येष्ठ आमावस्या के दिन वृटवृक्ष की परिक्रमा करने पर ब्रह्मा, विष्णु और महेश सुहागिनों को सदा सौभाग्यवती रहने का वरदान देते हैं । सौभाग्य, समृद्धि प्राप्ति के लिए वट वृक्ष की पूजा की जाती है । वटवृक्ष के मूल में ब्रम्हा, विष्णु तथा अग्रभाग में शिव का वास है और सावित्री भी उसी वृक्ष में प्रतिष्ठापित हैं, ऐसी मान्यता है और इसी विश्वास से इस व्रत की शुरुआत हुई है ।

वट सावित्री को (बरसाईत) नाम से भी अभिहित किया गया है । जिस प्रकार वट वृक्ष चिर काल तक दीर्घायु रहता है, उसी प्रकार स्त्रियां अपने पति की दीर्घायु की कामना करते हुए वट वृक्ष की पूजा करती है । यह व्रत नवविवाहिता विवाह के प्रथम वर्ष विशेष विधि विधान के साथ करती है ।

पूजन विधि: सुहाग और लम्बी उम्र की कामना के लिए वटसावित्री अमावस्या पर सुहागिनें परम्परागत तरीके से वटवृक्ष की पूजा कर व्रत रखती है । एक दिन पहले व्रतालु स्नानादि कर पवित्र हो नमक रहित सात्विक भोजन करती हैं । रात में इष्टदेव सहित भगवती की आराधना की जाती है । व्रतालु कम से कम पाँच सुहागिनों को तेल ओर सिन्दूर बांटती है । व्रत के दिन वटवृक्ष के नीचे बैठकर गौरी भगवती, विषघरा तथा सावित्री सत्यवान की पूजा की जाती है । मूंग, चना के अंकुर, दूध लावा तथा समयानुकूल फलफूल पकवान चढाये जाते हैं । उसके बाद वटवृक्ष में धागा लपटेकर बाँस के पां से हवा करते हुए पूजा करके पति की लंबी उम्र की कामना की जाती है । पूजा के उपरान्त सुहागनों में तेल सिन्दुर व अंकुर बाँटकर मिष्ठान तथा खीर का भोजन कराया जाता है ।

वट अमावस्या के पूजन की प्रचलित कहानी दो प्रकार की है । एक किंवदन्ति के अनुसार और दूसरी पुराण तथा ऐतिहासिकता के अनुसार । पुराण व ऐतिहासिकता के अनुसार इस प्रकार है:-

सावित्री अश्वपति की कन्या थी। उसने सत्यवान को पति के रूप में स्वीकार किया था । सावित्री को इस बात की भनक लग गई थी कि सत्यवान अल्पायु हैं। इसलिए सावित्री सत्यवान का साथ कभी नहीं छोड़ती थी । सत्यवान लकड़ियां काटने जंगल में जाया करता था। सावित्री अपने नेत्रहीन सास-ससुर की सेवा करके सत्यवान के पीछे जंगल में चली जाती थी । एक दिन सत्यवान को लकड़ियां काटते हुए चक्कर आ गया और वह पेड़ से उतर कर नीचे बैठ गया । उसी समय भैंसे पर सवार होकर यमराज सत्यवान के प्राण लेने आये। सावित्री ने उन्हें पहचाना और उनसे कहा कि मेरे पति सत्यवान का प्राण न लें । लेकिन यमराज नहीं माने और वह सत्यवान के प्राण हरकर जाने लगे । सावित्री भी उनके पीछे-पीछे चलने लगी व यमराज से सत्यवान का प्राण लौटाने की प्रार्थना करने लगी । यमराज ने मना किया और उसे वापस लौटने को कहा, पर वह नहीं मानी । यमराज ने वर रूप में अंधे सास-ससुर की सेवा में आँखें दी और सवित्री को सौ पुत्र होने का आशीर्वाद दिया और सत्यवान को छोड़ दिया । वट पूजा से जुड़ी हुई धार्मिक मान्यता के अनुसार ही तभी से महिलाएं इस दिन को वट अमावस्या के रूप में पूजती है । वह कथा समीचीन है ।

पुराणों में वृक्ष पूजा और परिक्रमा का बड़ा महत्व बताया गया है । हिन्दू धर्मानुसार वृक्ष में भी आत्मा होती है । वृक्ष संवेदनशील होते हैं और उनके शक्तिशाली भावों के माध्यम से आपका जीवन बदल सकता है । प्रत्येक वृक्ष का गहराई से विश्लेषण करके ऋषियों ने यह जाना की पीपल और वटवृक्ष अन्य सभी वृक्षों में विशिष्ट है । इनके धरती पर होने से ही धरती के पर्यावरण की रक्षा होती है ।

स्कन्द पुराणों में वर्णित पीपल और वटवृक्ष की परिक्रमा का विधान है । इनके पूजा के भी कई कारण हैं । वट और पीपल के वृक्ष में सभी देवताओं का वास माना जाता है । पीपल की छाया में ऑक्सीजन से भरपूर आरोग्यवर्द्धक वातावरण निर्मित होता है । इस वातावरण से बात, पित्त और कफ का शमननियमन होता है तथा तीनों स्थितियों का संतुलन भी बना रहता है । इससे मानसिक शान्ति भी प्राप्त होती हे । पीपल और वटवृक्ष की पूजा का प्रचलन प्राचीन काल से ही रहा है ।

अत: उपरोक्त बातों से स्पष्ट है कि वृक्षों की पूजा लाभदायक है, जो परम्परा हमारे पूर्वजों ने हमारे लिए एक धरोहर के रूप में छोड़ा है । इस परम्परा को बरकरार रखना तथा हमारी आने वाली पीढ़ी के लिए सुरक्षित रखना हमारा दायित्व है । हमारी जितनी भी संस्कृति है, वो हमारे लिए एक अमूल्य संपत्ति के रूप में है । उसकी रक्षा करना हमारा परम कर्तव्य है ।

मधुश्रावणी व्रत या अग्नि परीक्षा

हिन्दू धर्म के अनुसार परमात्मा सर्वव्यापी हैं । सृष्टि के प्रत्येक कण में भगवान का वास है । कोई भी जीवन उसकी चैतन्य चेतना से वंचित नहीं है । इसलिए हिन्दू धर्म में सभी जीवों को देवता के रूप में पूजा जाता है, अर्थात् प्रत्येक जीव में देवता निहित हैं ।

'मधुश्रावनी व्रत' मिथिलांचल में मनाने जाने वाला एक विशिष्ट त्योहार है । यह व्रत श्रावण माह के कृष्ण पक्ष के पंचमी तिथि से आरम्भ होता है और उसी माह के शुक्ल पक्ष के तृतीया तिथि को समाप्त होता है, अर्थात् इस पूजा की समयावधि तेरह दिनों की होती है । यह व्रत विशेषकर नवविवाहित स्त्रियां करती हैं । इस व्रत में शिव, पार्वती, नाग-नागिन, विषहरी व अन्य देवताओं की पूजा-अर्चना की जाती है । इस तेरह दिवसीय मधुश्रावनी व्रत के प्रारम्भ के दिन गौरी, विषहरी व अन्य देवताओं की आकृति बनाकर तेरह दिनों तक पूजा की जाती है । प्रत्येक दिन सायं काल व्रतालू अपनी सखी-सहेलियों के साथ शिवपार्वती का गीत गाते हुये विभिन्न बाग-बगीचे व धर्मस्थली में जाकर बांस की डालियों में फूल (पुष्प) एकत्रित करती हैं और वही पुष्प प्रात:काल देवी-देवताओं को विधिवत अर्पण करती हैं । तेरह दिनों की पूजा की तेरह प्रकार की कथाएं श्रवण की जाती है और पूजा भी अलग-अलग विधियों से की जाती है । विषहरी की पूजा के लिये दूध, लावा, श्वेतपुष्प, चंदन, मेहन्दी इत्यादि की अनिवार्यता होती है । व्रतालू तेरह दिनों तक सेंधा नमकयुक्त पवित्र भोजन ग्रहण करती हैं । समापन के दिन व्रतालू पूजा सम्पन्न कर सुहागिनों (अहिबाती) में बांस के डाला व सौभाग्य की वस्तुएं (चूड़ी, सिन्दूर, टीका, वस्त्र इत्यादि) वितरण करती है तथा विभिन्न प्रकार के मिष्ठान एवं खीर भोजन कराती है ।

वास्तव में मिथिलांचल की संस्कृति बहुत ही रमणीय है, जिसमें मधुश्रावनी का एक विशिष्ट ही महत्व है । यह व्रत वर्षा ऋतु के श्रावण महीना में होने के कारण और ही सुहावन लगता है ।

'फणीश्वर नाथ रेणु' द्वारा रचित कहानी 'पुरानी कहानी नयां पाठ' जो उनकी प्रतिनिधि कहानियां पुस्तक में संग्रहित है । उसमें रेणु जी ने मधुश्रावनी व्रत का कुछ अंश वर्णित किया है । उन्होंने व्रतालु नव विवाहिता के नव वस्त्रों की खुशबू व श्रृंगार सज्जा के संबंध में वर्णन किया है । 'रेणु जी' आंचलिकता (आर्चलिक, उपन्यासकार) के लिये सर्वश्रेष्ठ माने गये हैं । उन्होंने मिथिलांचल की इस संस्कृति को अपनी लेखनी में भी शामिल किया है ।

पति की लंबी आयु व अखण्ड सौभाग्य की कामना हेतु स्त्रियां यह तेरह दिवसीय व्रत करती है, परन्तु उसे अंतिम दिन अग्नि परीक्षा देनी पड़ती है । यह परंपरा सदियों पूर्व से आज तक चलती आ रही है । व्रत के समापन के दिन व्रतालु को पान के पत्ते से वर द्वारा नेत्र बंद कर दिया जाता है और पैरों व घुटनों पर जलते दीये की बत्ती से दागा जाता है । कहा जाता है कि टेमी से दगे गये स्थान पर जितने ही बड़े फफोले होंगे, पति की आयु उतनी ही लम्बी होगी । आज के इस बदलते युग में भी यह परंपरा पूरी निष्ठा से मनायी जा रही है ।

यह कैसी विडम्बना है कि तेरह दिनों तक जो नवविवाहिता पवित्र हो और पूरी निष्ठा के साथ व्रत रती है, विभिन्न देवी देवताओं की पूजा करती है, अन्ततोगत्वा उसे अग्नि परीक्षा देनी पड़ती है । इस 'दागने' की परंपरा को अगर गौर से देखा जाये तो स्त्री के ऊपर एक अत्याचार ही है । जो सदियों से मिथिलांचल की स्त्रियां भोगती आ रही है । सर्वप्रथम 'रामायण' की 'सीता' जिसे हम सभी लक्ष्मीस्वरुपा मानते हैं उनकी भी अग्नि परीक्षा ली गई थी, तो साधारण स्त्रियां तो असहाय हैं, असक्षम हैं । स्त्रियां तो सदैव शोषित हुई हैं । कभी पुरुष वर्ग से तो कभी स्त्रियां स्वयं से शोषण का शिकार बनी है । स्त्रियों की व्यथा जितनी भी लिखूं बहुत ही कम होगी, क्योंकि वह पीडिण्ता हैं, शोषिता हैं । यहां तक की परंपरा के नाम पर भी स्त्रियों का शोषण किया गया है, जो इस व्रत में स्पष्ट है ।

मैं ये नहीं कहती की हमारी परंपरा व संस्कृति अच्छी नहीं है । हमारी संस्कृति तो इतनी सुन्दर है कि प्रत्येक जीव जन्तुओं व विभिन्न अचल वस्तुओं को विभिन्न पूजा का आयोजन कर उनका स्थान दिया जाता है अर्थात् पूजा जाता है । इस मधुश्रावनी व्रत में विषहरी (सर्प) की पूजा प्रभु रूप से की जाती है । इसी प्रकार हमारे संस्कृति में अन्य पूजा के साथ अन्य-अन्य जीव-जन्तुओं तथा वस्तुओं को पूज्यनीय बनाया गया है । इतनी सुन्दर मिथिलांचल की संस्कृति होते हुये भी कुछ रुढ़िवादी तत्व उभरकर सामने आते हैं, जो कि आज के बदलते युग में असह्य है । इस रुढ़िवादी तत्वों का हमें खण्डन करना चाहिये और जो पीड़ा दायक हो, उसे हटाना चाहिये ।

यह सोचनीय है कि जो नव विवाहिता स्त्रियां इतने हर्षोल्लास के साथ सज संवर कर इस व्रत में भाग लेती है और उसे अग्नित्रास का सामना करना पड़ता है । यह कितना उचित है ? पूजा के प्रथम दिन से ही वो अंतिम दिन के लिये भयभीत रहती है ।

अत: हम यह कह सकते हैं कि हमारी कोई भी संस्कृति बुरी नहीं होती परन्तु उसमें समयानुकूल परिवर्तन लाने की आवश्यकता है और साथ ही कष्टदायक रुढ़िवादी परम्परा में सुधार लाना भी अनिवार्य है ।

वैश्विक धरातल पर हिन्दी का प्रसार तथा उपादेयता

भाषा हमारे माथे की बिंदिया है जो जन-जन में समरसता और संवाद में सहजता का आविर्भाव कराती है तथा सभी को एक सूत्र में बांधती है। भाषा उस नदी के समान है तो शीतल, मधुर जल से मानव मात्र को आप्लावित करती है। सुखों, दुखों में साथ निभाने का हौसला बढ़ाती है। विश्व के एकीकरण तथा विश्व को एक सूत्र में आबद्ध करने में भाषा से अधिक कोई भी तत्व बलवती नहीं हो सकता। - लोकमान्य तिलक

हिन्दी यद्यपि हमारी राष्ट्रभाषा हैं फिर भी समूचे विश्व में इसका अत्यधिक प्रभाव है। विश्व स्तर पर शिक्षा, प्रशासन, समाचार पत्र, संचार प्रक्रिया, दूरदर्शन, आकाशवाणी कार्यक्रम आदि में हिन्दी भाषा का उपयोग निरन्तर बढ़ता जा रहा है। यद्यपि यह सही है कि सर्वत्र साहित्यिक हिन्दी भाषा का प्रचलन संभव नहीं है किन्तु विज्ञापन, पत्रकारिता, तकनीकी शिक्षा, व्यावसायियक क्षेत्र, प्रिंट मीडिया तथा संचार साधनों के उपयोग में सरल हिन्दी भाषा प्रयुक्त होती रही है। प्रयोजन मूलक हिन्दी का उपयोग अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बढ़ता जा रहा है तभी तो आठवें हिन्दी सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव बान की मून ने कहा था ''हिन्दी दुनियाँ भर के लोगों को पास लाने का काम कर रही है। यह एक ऐसी भाषा है जो दुनियाँ भर की संस्कृतियों के बीच एक पूल का काम कर ही है।'' आज विश्व स्तर पर हिन्दी के प्रचार प्रसार में प्रिंट व इलेक्ट्रोनिक मीडिया का महत्वपूर्ण योगदान है। इन्टरनेट, व्हाट्सएप, फेसबुक, ट्विटर, ई-मेल और ई-पत्रिकाओं के साथ ही कई वेबसाइट्स से हिन्दी भाषा के प्रसारण को बल मिला है। इसीलिए हिन्दी भाषा अन्तर्राष्ट्रीय जगत में बहुआयामी बनती जा रही है। विज्ञान के क्षेत्र में हिन्दी को प्रवेश दिलाने में होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र मुम्बई द्वारा सन् 2008 में हिन्दी में शिक्षण सामग्री को विकसित तथा प्रसारित किया था साथ ही एक स्वतन्त्र ई-लर्निंग पोर्टल का शुभारम्भ भी किया था। इस पोर्टल में ई-बुक्स, ई-लेख, ई-प्रश्न मंच तथा ई-प्रश्न माला आदि का समावेश है। साथ ही प्रशिक्षण हेतु हिन्दी में कई सॉफ्टवेयर तैयार किए गये हैं।

जैसे-जैसे विश्व स्तर पर वैज्ञानिक एवं तकनीकी ज्ञान बढ़ता जा रहा है उसी के साथ भाषा के महत्व में भी बढ़ोतरी हो रही है। विचार क्रांति के इस युग में निरन्तर वैश्विक स्तर पर होने वाले परिवर्तन में भाषा की उपयोगिता भी दिनों दिन बढ़ रही है। विश्व स्तर पर हो रही संचार क्रांति में भाषा ही का महत्वपूर्ण योगदान है। भाषा ही वह माध्यम है जिसके कारण आर्थिक सम्पन्नता में अभिवृद्धि संभव हो रही है। रोजगार की अपार संभावनाओं का होना भी भाषा पर ही निर्भर है। आज हमारे देश की सांस्कृतिक परम्पराओं भारतीय दर्शन, योग, अध्यात्म तथा संवाद व संचार साधनों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जो मान्यता मिली है उसमें भाषा का सर्वोपरि योगदान है।

भूमण्डलीयकरण के साथ ही विश्व स्तर पर आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक सह-संबंधों के कारण वैचारिक स्तर पर वैश्विक चिन्तन का प्रादुर्भाव अवश्य हुआ है। औद्योगिकीकरण, विश्व व्यापार, संचार सुविधाओं तथा बाजारवाद के क्षेत्र में वैश्विक संकल्पना का समावेश हुआ है। उसी तरह वैश्वीकरण के कदम बढ़ते जा रहे है। हमारी अवधारणाओं तथा मान्यताओं में भी तेजी से परिवर्तन होता जा रहा है।

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा भी स्पीक करेक्ट हिन्दी, यूज हिन्दी ऑडियो, वीडियो, सीडी आदि का प्रचलन प्रारम्भ किया गया था जो हिन्दी भाषा को प्रसारित करने में संबंल प्रदान करता है। गूगल द्वारा भी इंटरनेट के माध्यम से हिन्दी भाषा को विशेष रुप से उपयोगी बनाया गया है। गूगल के तत्कालीन मुख्य कार्यकारी अधिकारी एरिक स्मिड ने कहा है ''जिन भाषाओं का इंटरनेट पर दबदबा रहने वाला है उनमें हिन्दी की संभावनाएं ज्यादा अच्छी है।''

शोध के क्षेत्र में भी हिन्दी भाषा का प्रचुरता से उपयोग हो रहा है। नेपाल, भूटान, श्रीलंका, मालदीव, चीन, जापान, सिंगापुर, इंडोनेशिया, मॉरीशस, मलेशिया, कोरिया खाड़ी देश आदि देशों में लेखन कार्य शिक्षण व प्रशिक्षण आदि कार्यो में हिन्दी भाषा का प्रयोग बहुलता से होता है। कई देशों में हिन्दी के प्रचार-प्रसार हेतु इण्डिया स्टडी सेंटर भी प्रारम्भ हुए है। सार्वजनिक एवं सेवाभावी संस्थाओं तथा हिन्दी भाषा के संस्थानों द्वारा हिन्दी के व्यापक प्रचार-प्रचार हेतु योजनाबद्ध कार्य होता है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दी परिषदें, हिन्दी प्रचार सभाएं तथा अखिल विश्व हिन्दी समिति आदि संस्थाओं द्वारा राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी भाषा का प्रचार-प्रसार व्यापक रुप से हो रहा है। हिन्दी भाषा की विभिन्न परीक्षाओं का संचालन भी विश्व स्तर पर होता है जो हिन्दी के प्रचार-प्रसार में उपयोगी है।

विश्व स्तर की बहुराष्ट्रीय कंपनियां भी हिन्दी प्रचार में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। इनके द्वारा व्यापार को बढ़ाने तथा व्यवसाय को प्रत्येक देश में स्थापित करने में हिन्दी का व्यापक उपयोग किया जाता है जो इनके विज्ञापन तथा व्यवसाय को संबल प्रदान करता है। कंपनियों में कार्यरत हजारों की संख्या में कर्मचारियों को हिन्दी का ज्ञान कराया जाता है ताकि अपने व्यवसाय में विशेष वृद्धि हो सके। इस दिशा में वॉइस आफॅ अमेरिका, बीबीसी लंदन, डेनमार्क तथा अन्य देश भी हिन्दी प्रसारण में अग्रगण्य है। हिन्दी के प्रचार-प्रसार में अप्रवासी भारतीयों का विशेष योगदान रहता है। विदेशी लेखकों द्वारा लिखित साहित्य का अनुवाद हिन्दी भाषा में प्रचुर मात्रा में हो रहा है। राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में अनुदित कहानियां, कविताएं व अन्य रचनाएं प्रकाशित होती है वे भी हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार का सशक्त माध्यम है जो विश्व स्तर पर वैचारिक आदान-प्रदान के लिए भी उचित माध्यम बनती है। भारत सरकार द्वारा भी अनुवाद मिशन की स्थापना भी इस दिशा में सहयोगी सिद्ध हो रही है। विश्व स्तर पर हजारों की संख्या में पत्र- पत्रिकाएं प्रकाशित

होती है जिनमें साप्ताहिक, मासिक, द्विमासिक एवं त्रैमासिक पत्रिकाएं सम्मिलित हैं। इनकी विषय सामग्री भी हिन्दी भाषा को धन्य कर रही है।

तत्कालीन बुश प्रशासन द्वारा अमेरिका के सात राज्यों में 14 सितम्बर को हिन्दी दिवस मनाने की घोषणा से भी विश्व धरातल पर हिन्दी भाषा का प्रसार हुआ है वे राज्य है ओडायो, कनेक्टीकट, पं. बरजानिया, नीरिजन, न्यूजर्सी इंडियाना, पेंसिलवेनिया एवं नेब्रास्का। श्री लंका में एक विश्व विद्यालय ने हिन्दी को वहाँ के शिक्षण तथा शोध कार्य के लिए प्रयुक्त किया है। यूरोप, एशिया और अमेरिका के अनेक प्रदेशों में हिन्दी भाषा एवं हिन्दी साहित्य को विशेष बढ़ावा दिया गया है। विदेशों में हिन्दी के व्याकरणिक स्वरुप को उनकी सामाजिक संरचना तथा सांस्कृतिक चेतना के अनुरुप प्रयुक्त किया गया है। उनके विभिन्न नामांकन हैं फिजियन हिन्दी, नेटाली हिन्दी, कीओली हिन्दी आदि। विश्व स्तर पर जैसे जैसे सूचना प्रौद्योगिकी का विस्तार हुआ है भारतियों से हिन्दी में संवाद स्थापित करने के लिए विदेशी लोग हिन्दी भाषा का विशेष अध्ययन कर रहे हैं जो उनके व्यापार व व्यवसाय में गुणात्मक अभिवृद्धि करेगी। विदेशों से कई विद्यार्थी हिन्दी पढ़ने के लिए भारत में आ रहे हैं ताकि हिन्दी सीखकर वे रोजगारोन्मुखी बन सकें। केरेबीयन देशों में तो हिन्दी ही से वहाँ की समग्र अर्थव्यस्था संचालित व नियंत्रित हो रही है। हिन्दी भाषा के प्रचुर मात्रा में प्रयोग के कारण ही अंग्रेजी शब्दकोश में हिन्दी समाविष्ट हुई है। जैसे योग, सत्य, अहिंसा, अवतार, स्वस्तिक, सत्याग्रह, देव, सत्य, स्वस्तिक आदि। अभिव्यक्ति के अवसरों पर भाषा में हिन्दी मुहावरों और कहावतों का प्रयोग भी बढ़ता जा रहा है।

विश्व स्तर पर वर्तमान में बदलते संदर्भो के अनुसार शब्दों का चलन भी परिवर्तित स्वरुप लेता जा रहा है। ब्रदर्स डे 'रक्षा बंधन' हसबैण्ड डे 'करवा चौथ' सेल्फी, आईडिया, बिल, पोटेल, टपोरी, झकास जैसे अनेक संकर शब्दों का समावेश बढ़ता जा रहा है। हिन्दी भाषा में अंग्रेजीकरण से प्रभावित शब्द भी प्रचुर मात्रा में प्रयुक्त हो रहे है। जैसे- स्पीकना, सीखिंग, जाईंग, बनाईंग आदि प्रयोग भी युवा पीढ़ी से मुखरित होती सुनाई पड़ती है। भाषा में मिश्रण या कोड मिक्सिंग की प्रवृत्ति दिनों-दिन बढ़ती जा रही है इससे हिन्दी का व्यवहार क्षेत्र विस्तार लेता जा रहा है।

लिंग भेद की समानता की दृष्टि से नई विचारणा के अनुसार कुछ उभयलिंगी शब्दों का प्रयोग भी होने लगा है। जैसे- मीडिया कर्मी, कृषिकर्मी, सैन्यकर्मी आदि। हिन्दी भाषा की सरलता बोलने में सहजता हिन्दी का समृद्ध साहित्य तथा बोलने वालों की प्रचुर संख्या होने के कारण ही हिन्दी विश्व की दूसरी सबसे बड़ी भाषा बन गई है। प्रसिद्ध भाषा विद डेविड ग्रेडन का कथन है कि ''आगामी पचास वर्षो में हिन्दी विश्व की सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा बन जायेगी।'' इसी प्रकार डॉ. जयन्ती प्रसाद नोटियाल की भाषा शोध 2015 के अनुसार राष्ट्रसंघ की अधिकृत भाषाओं में हिन्दी बोलने वालों की संख्या सर्वाधिक है।

वैश्विक धरातल पर व्यापक रुप से हिन्दी भाषा को व्यवहारगत बनाने के लिए .....

- जन मानस में सकारात्मक सोच की आवश्यकता है।
- हिन्दी भाषा की शब्दावली में सरलता व सहजता का समावेश हो।
- अंग्रेजी की तकनीकी शब्दावली को हिन्दी में स्वीकार्य किया जाए।
- भाषा में संक्षेपाक्षरों का समावेश हो।
- वैश्विक भाषा के शब्दों के मिश्रण को मान्यता दी जाए।
- तकनीकी तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में प्रयुक्त होने वाली पुस्तकें हिन्दी भाषा में हो तथा तकनीकी शब्दावली को हिन्दी में स्वीकार्य किया जाए।
- भाषा में संक्षेपाक्षरों का समावेश हो।
- वैश्विक भाषा के शब्दों के मिश्रण को मान्यता दी जाए।
- मौलिक लेखन द्वारा पत्र-पत्रिकाओं को समृद्ध बनाया जाए।
- पाठ्य पुस्तकों व पत्रिकाओं के प्रकाशन को प्रोत्साहित किया जाए।
- ई-बुक्स व ई-पत्रिकाओं को अधिकाधिक प्रकाशित किया जाए।
- विभिन्न विषयों की पारिभाषिक शब्दावली को इंटरनेट पर प्रस्तुत किया जाए।
- वैश्विक हिन्दी सभा सम्मेलनों में विज्ञान तथा तकनीकी आदि आधुनिक वैज्ञानिक सामग्री से संबंद्ध शब्दावली के लिए हिन्दी को सशक्त बनाने हेतु प्रयास किया जाए।
- वैश्विक परिपेक्ष में भाषा के स्वरुप में आधुनिकीकरण को बढ़ावा दिया जाए।
- प्रवासी हिन्दी साहित्य को महत्व दिया जाना चाहिए।
- विश्व स्तर पर हिन्दी विषयक पुरस्कारों को विशेष महत्व दिया जाए।
- अंग्रेजी के प्रभाव से मुक्त होने के लिए हिन्दी को सर्वग्राह्य बनाने की आवश्यकता है।

हिन्दी भाषा जिसकी लोकमान्यता विश्व स्तर पर है वह संसार में भावात्मक एकता का स्रोत हैं जो विभिन्न जातियों, धर्मों, समुदायों और वर्गों तथा देशों के भिन्न-भिन्न मान्यताओं के होते हुए भी वसुधैव कुटुम्बकम की भावना की अनुभूति कराती है।

सन्दर्भ - प्रो. उषा सिन्हा का लेख ''वैश्वीकरण के बदलते सन्दर्भ और हिन्दी''।

-शंकर लाल माहेश्वरी
पूर्व जिला शिक्षा अधिकारी
पोस्ट-आगूँचा-311022
जिला-भीलवाड़ा (राजस्थान)
मो : 9413781610

हिन्दी भाषा राष्ट्र की आशा

'हे भव्य भारत हमारी मातृभूमि हरी भरी।
हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा और लिपि है नागरी ।।'
-मैथिलीशरण गुप्त

देश की जनता के लिए सबसे सरलतम मार्ग सीखने सिखाने के लिए अपनी मातृभाषा से बढ़कर और कोई हो ही नहीं सकता। मां की भाषा ही संस्कारों के साथ जीवन जीने के कौशल का निर्माण कर महानता के शिखर की ओर ले जाने का कार्य करती है मातृभाषा के संस्कार से ही मनुष्य अपने को ज्यादा स्वतंत्र एवं खुशहाल तथा आनंदानुभूति के साथ महसूस करता है। मातृभाषा मां के दूध के अमृत के समान हैं, दूध के पाउडर की तरह नहीं हो सकती। मातृभाषा ही बालक के सर्वांगीण विकास में सबसे ज्यादा कारगर सिद्ध होती है। तभी तो दुनिया के प्रगतिशील राष्ट्र अपनी राष्ट्रीय भाषा के बूते विश्व में अपना उच्च स्थान बनाए हुए हैं जैसे रूस, जापान, अमेरिका, इंग्लैंड, जर्मनी ,कोरिया आदि। निज भाषा की उन्नति से ही राष्ट्र की उन्नति संभव है। इसी कारण देश के बुद्धिजीवी महापुरुषों, साहित्यकारों, पत्रकारों, राजनीतिज्ञों, समाजसेवियों तथा शिक्षाविदों ने चिंता के साथ चिंतन कर राष्ट्रभाषा को अपनाने के लिए प्रेरित, आह्वान आजादी से पहले और बाद में किया।भाषा को मन और पेट दोनों रूपों में बनाना अति आवश्यक होता है। जब तक भाषा पेट की (रोजगार की) नहीं बनाई जाती है तब तक सम्मान में गिरावट ही देखी जाती है। इसके लिए हमारी राष्ट्रीय भाषा हिन्दी को उच्च शिक्षा में पूर्णरुप से लागू करना।विदेशी शब्दावली को हिन्दी भाषा में सहज,सरल बनाकर पाठ्यक्रम में जोड़ना और उसे मन से लागू करने से है।भारतीय भाषाओं के शब्दों को हिन्दी भाषा में जोड़कर शब्द-भंडार में वृद्धि करना। देश के हर नागरिक को हिन्दी भाषा को अपनी अस्मिता से स्थान देने की जरूरत है। तभी हिन्दी राष्ट्रभाषा का सम्मान बढ़ेगा।हिन्दी को साहित्य के साथ-साथ आर्थिक रुप से मजबूत बनाने की आवश्यकता है ।विश्व व्यापार के बाजार में हिन्दी का प्रयोग ज्यादा से ज्यादा करें तथा व्यवहारिक भाषा बनाने हेतु संकल्प लें तो भाषा में संस्कारों के साथ-साथ संस्कृति में प्राण आ जाएगा और हिन्दी को भी वही दर्जा श्रेष्ठ विश्व भाषा के रूप में मिलने से कोई नहीं रोक सकता है।

हिन्दी हमारे स्वाभिमान की भाषा है।यह ज्ञान विज्ञान व चिंतन की भाषा है। अंग्रेजी विदेशी अर्थात पराई भाषा है। ष्अपने तो अपने होते हैंष पराए को अपना बनाकर कब तक रख सकते हैं? आजादी के 70 वर्षों के बाद भी भाषा की स्वाधीनता का प्रश्न बरकरार है;बावजूद हिन्दी अब विरोध की भाषा नहीं बल्कि विश्व पटल पर सम्मान की भाषा बन चुकी है। यह दुनिया की वैज्ञानिक भाषा है, जो लिखी जाती है वही पढ़ी जाती है और जो पढ़ी जाती है वही लिखी जाती है। हिन्दी का इतिहास 1000 वर्ष पुराना है। हिन्दी की पहली रचना आमिर खुसरो ने लिखी थी। हिन्दी में प्रकाशित पहली पुस्तक प्रेम सागर को माना जाता है। हिन्दी का पहला महाकाव्य चंद्रबरदाई द्वारा रचित पृथ्वीराज रासो है। हिन्दी साहित्य का पहला इतिहास लिखने वाला विद्वान भी विदेशी(अंग्रेज) गार्सा द तासी था। जिन्होंने 'इस्तवार द लालितरेत्यूर ऐंदुई ए ऐंन्दुस्तानी' जो फारसी भाषा में था। हिन्दी का पहला साप्ताहिक समाचार-पत्र उदंत मार्तंड 30 मई 1826 ई. को कोलकाता में प्रकाशित हुआ था। हिन्दी का इतिहास बहुत ही गौरवशाली रहा है। नामदेव, अमीर खुसरो, कबीर, सूर, तुलसी, रसखान, जायसी, रसखान, मीराँ ने इसे सींचा है। आधुनिक कवियों ने इसे सुंदर आकार दिया है।

संविधान सभा ने एकमत होकर 14 सितंबर 1949 को संघ की राजभाषा का महत्वपूर्ण पद नाम हिन्दी को दिया।संविधान के भाग 17 के अनुच्छेद 343(1) में कहा गया है कि संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी।हिन्दी की लिपि में दुनिया सबसे ज्यादा वर्णन वाली लिपि हैं।जिसमें 11 स्वर एवं 33 व्यंजन मिलकर मूल 44 वर्ण हैं। 4वर्ण ओर4सँयुक्त वर्ण मिलकर कुल 52 वर्णों की है।सन् 1955 में बाल गंगाधर खेर की अध्यक्षता में राजभाषा आयोग एवं 1957 में संसदीय समिति का गठन किया गया।1956 में 'केंद्रीय सलाहकार मंडल' ने 'त्रिभाषा सूत्र' की रचना की क्षेत्रीय भाषा, अंग्रेजी भाषा और हिन्दी भाषा। हिन्दी भाषी राज्यों में ये 10 राज्य हैं- हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान ,उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़,झारखंड,बिहार इन राज्यों में देश की आधी से ज्यादा जनसंख्या निवास करती है। मूल संविधान की आठवीं अनुसूची में 14 भाषाएं थी बाद में 4 भाषाएं-(सिंधी,कोंकणी मणिपुरी नेपाली) और फिर 4 भाषाएं- (बोडो, डोगरी, मैथिली, संथाली) जोड़ दी गई है।

वर्तमान में संविधान में 22 भाषाओं को मान्यता दी गई है। हमारे देश में 1576 बोलियां,122 भाषाएं, 25 प्रकार की लिपियां प्रचलित है। हिन्दी भाषा का प्रसार-प्रचार भारत देश में ही नहीं बल्कि विश्व में करने के मकसद से 'राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा' के अनुरोध से सन् 1953 से पूरे भारत में 14 सितंबर को प्रतिवर्ष 'हिन्दी दिवस' के रूप में मनाया जाता है।आज भारत में ही नही बल्कि इन देशों में अंग्रेजी के अलावा हिन्दी को पढ़ा समझा जाता है- मॉरीशस, सूरीनाम, नेपाल, पाकिस्तान, दक्षिण अफ्रीका, गुआना, सिंगापुर, ट्रिनिडा, अमीरात,यमन, युगांडा, न्यूजीलैंड,

कनाडा, जापान, फिजी, ब्रिटेन, अमेरिका, जर्मनी, टॉबैगो, हंगरी,रूस आदि। वर्तमान में हिन्दी भाषा विश्व में अपनी मजबूत स्थिति में है। हिन्दीविद् डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल की शोध रिपोर्ट के अनुसार हिन्दी भाषा को विश्व के 53 देशों में 1270 मिलियन लोग हिन्दी जानते हैं। विश्व की 18% जनसंख्या हिन्दी जानती है। रिपोर्ट के मुताबिक चीन की भाषा मंदारिन (900 मिलियन) को पीछे कर हिन्दी प्रथम स्थान पर बोली जाने वाली भाषा बन चुकी है। यह हमारे लिए गौरव की बात है। विश्व के 150 से अधिक देशों में हिन्दी शिक्षण एवं प्रशिक्षण करवाया जाता है। जर्मनी के 25 विश्वविद्यालयों में तथा अमेरिका के 45 विश्वविद्यालयों में हिन्दी अध्ययन की व्यवस्था है। विश्व के 176 विश्वविद्यालयों में हिन्दी में पठन- पाठन होता है। इस प्रकार हिन्दी विश्व की सबसे लोकप्रिय भाषा है। एक सर्वे के अनुसार फरवरी 2018 को बताया गया है कि इंटरनेट की दुनिया में हिन्दी ने अंग्रेजी को पीछे छोड़ दिया है। हिन्दी फिल्मों में बाहुबली के बाद दंगल ने रिकॉर्ड तोड़ कमाई की है। आज के युवा हिन्दी के साथ अंग्रेजी शब्दों का धड़ल्ले के साथ प्रयोग कर रहे हैं। यह भाषा के साथ मिलावट का काम कर रहे है। हिन्दी भाषा की शुद्धता पर सवाल खड़ा हो रहा है जो मूल भाषा को पतन की ओर धकेलने जैसा है। मिलावट से तैयार की गई अशुद्धता कभी सही नहीं होती है। पदों पर आसीन उच्चाधिकारी, खिलाड़ी, नेता, अभिनेता, नेत्री, अभिनेत्री और आज की युवा पीढ़ी अंग्रेजी बोलने में अपने आप को बुद्धिमान समझती है, जो एक बड़ी भूल है क्योंकि हिन्दी हमारी राजभाषा, राष्ट्रभाषा, मातृभाषा है; सिर्फ मात्र भाषा नहीं है । हिन्दी के पास दुनिया का सबसे बड़ा शब्द भंडार है। हिन्दी में अनेक संभावनाओं का विशाल सागर है। बस इसे दिल से अपनाने की आवश्यकता है। विश्वविद्यालय में उच्च शिक्षण संस्थानों में अंग्रेजी के बजाय हिन्दी को मौका तो दो, हिन्दी भी ज्ञान-विज्ञान की भाषा बनकर नई कीर्ति की उड़ान भरेगी तथा अद्‌भुत एक नया इतिहास रचेगी। हिन्दी साम्राज्य तो बढ़ रहा है पर हमें विश्व पटल पर सम्मान की भाषा के रूप में खड़ा करने की आवश्यकता है। पूर्व बोलचाल या काम चलाओ की भाषा के रूप में नहीं । आज हिन्दी में मौलिक चिंतन की ज्यादा जरूरत है अनुवाद पर आधारित ज्ञान के बजाय यह तभी संभव है जब हमें हमारी प्यारी हिन्दी पर मन और दिल से प्यार हो और 'अग्रेजी' या 'हिंग्लिश' से दूरी हो।

कन्हैयालाल सेठिया ने कहा है-

'मायड़ भासा बोलतां जिणनै आवै लाज। अश्या कपूतां सूँ दु:खी, सगलो देस समाज।'

जिन्हें अपनी मातृभाषा बोलने में शर्म आती है, ऐसे बेटों से देश, समाज दु:खी ही रहता है।

हिन्दी को आज मान-सम्मान देने की जरूरत है। हमें राष्ट्र संघ में हिन्दी को स्थान दिलवाने की जरूरत है। हम 11वां विश्व हिन्दी सम्मेलन मना करके भी तथा विश्व में हिन्दी का साम्राज्य फैला कर भी तथा प्रतिवर्ष हिन्दी दिवस मनाकर भी दु:ख और पीड़ा इस बात की है कि हम हिन्दी को अपने ही देश में वह स्थान नहीं दिला पाए जो होना चाहिए था; सही रूप से मान- सम्मान के साथ। 'हिन्दी दिवस' पर देश का प्रत्येक जन संकल्प लें और समझे कि हिन्दी हमारी माता के समान है, उसे आदर-सम्मान के साथ विश्व पटल पर स्थापित कर ही स्वयं का सम्मान सम्भव है।

-डॉ. कान्ति लाल यादव
(शिक्षक, सामाजसेवी, राष्ट्रभाषा साहित्य परिषद के जिला लेखन प्रभारी, उदयपुर)
पता: मकान नंबर 12, गली नंबर 2
माली कॉलोनी, उदयपुर(राज.)- 313001
मोबाइल : 8955560773
ई मेल : drkklalyadav@gmail-com

अकादमी के प्रतिनिधि मण्डल ने मॉरीशस दूतावास, नई दिल्ली में मॉरीशस गणराज्य के राजदूत महामहिम श्री जनार्दन गोबर्धन जी से शिष्टाचार भेंट की ।

मिथिला चित्रकला

डॉ. ध्रुव मिश्रा

देवभूमि भारत के अविभाज्य भूभाग जगजननी जानकी की जन्मभूमि स्वनामधन्य तपोभूमि मिथिला प्राचीन काल से ही अपने श्रेष्ठतम धर्म, कर्म, कला, संस्कृति, व्यवहार, बोली, भाषा, शिक्षा, दर्शन आदि विविध कारणों से आदर एवं श्रद्धा का केंद्र रहा है । समाज के बदलते परिवेश या परिवर्तन के दौर में भी मिथिला अपनी कला, संस्कृति एवं व्यवहार आदि को संजोकर देश भर में अपनी एक अलग पहचान बनाए हुए है । विशेषत : कला के क्षेत्र में मिथिला की विशेषता विश्व पटल पर ससुरभि स्वर्णक्षार में अंकित है। कला में भी यहाँ स्थापत्यकला, मूर्तिकला, चित्रकला और संगीतकला आदि भी पल्लवित-पुष्पित देखे जाते हैं । परंतु इन कलाओं में भी चित्रकला मैथिल सांस्कृतिक जीवन का अविभाज्य अंग रहा है जो कि भित्तिचित्र के रूप में प्रस्तुत है । ये चित्रकला भित्तिचित्र के अतिरिक्त समय-समय पर कागज पर भी चित्रांकन प्रचलित है जो विवाह आदि सुअवसर एवं त्योहारों पर पातिल, पुरहर, नगहर आदि नामक भाण्ड एवं वियनि तथा सरवा आदि पर चित्रित किया जाता है । यह चित्रांकन शैली मैथिल समाज में सतत विद्यमान है । इन्हीं चित्रकला को वर्तमान काल में ;मिथिला पेंटिंग' नाम से विश्व प्रसिद्धि मिली है ।

मिथिला के चित्रकला की खास विशेषता यह है कि चित्रण कार्य संपूर्णता : पारिवारिक नारी वर्ग द्वारा गृहकला के रूप में सम्पन्न किया जाता है । उपनयन विवाहादि विशिष्ट समारोह के अवसर पर चित्रण की आवश्यकता होती है जिसका निष्पादन स्त्रीगण कर्मकाण्ड के अविभाज्य अंग के रूप में करती हैं । समारोह की समाप्ति के साथ ही चित्रांकन कार्य भी समाप्त हो जाता है तथा स्त्रीगण अपने सामान्य गृहकार्य में लग जाती है । पुनः संस्कार समारोह के अवसर पर उक्त कला उत्प्राणित हो उठता है और साधारण व्यक्ति पुनः कलाकार हो जाता है एवं दीवारों पर आँगन में विविध प्रकार के चित्र चमकने लगता है ।

उक्त चित्रांकन कार्य का विषयवस्तु साधारणतः दो वर्गों में विभक्त है । प्रथम में मुख्यतः देवी-देवता के चित्र तथा वर-कन्या सहित कुछ अन्य सदस्यगण का चित्र चित्रित रहता है । द्वितीय वर्ग में कुछ मांगलिक वृक्ष, लतातथा पशु-पक्षी का चित्र अंकित किया जाता है । यह चित्रांकन समान्यतयाः उपनयन, विवाह, द्विरागमन (गौणा), देवी-देवताओं के मूर्ति स्थापना आदि के अवसर पर किया जाता है । इसे प्राकृतिक चित्रकला भी कहा जाता है । देवी-देवताओं में मुख्यतयाः दुर्गा, काली, राम, सीता, राधा और कृष्ण आदि के चित्र होते हैं । परंतु विवाह के अवसर पर सूर्य,चंद्र, बाँस, कमल, सुग्गा (तोता), कछुआ और मछली मुख्यतया चित्रित किया जाता है । चित्रांकित प्रथम वर्ग में कल्याण तथा ईश्वरीय अनुकंपा के प्रतीक रूप में और द्वितीय वर्ग में उत्पादकता या उर्वरता को सूचित किया जाता है । जैसे बाँस वृद्धि का,कमल उत्पादकता का, सुग्गा (तोता) प्रेम का, कछुआ वर और कन्या के मिलन का, मछली उर्वरता का, सूर्य-चंद्र जीवन दायक गुण का प्रतीक के रूप में उपस्थित किया जाता है । इस प्रकार प्रस्तुत चित्रकला दो प्रकार से विभक्त है । पहला है भित्ति चित्रकला जो कि दीवारों पर उकेरी जाती है और दूसरा है अहिपन (अरिपन) जिसे अन्यान्य भाषाओं में रंगोली भी कहा जाता है जो पूजा अनुष्ठान कर्मादी के समय मुख्यतः पिष्ट (चावल के आंटे) से बनाया जाता है । इसका अत्यंत धार्मिक सूक्ष्म विवेचन है परंतु विषय विस्तृत के भय से यहाँ वर्णन समुचित नहीं है ।

इस चित्रकला का विकास मिथिला एवं मिथिलेतर लोगों का इसमें रुचि, मिथिला के लोगों के लिए धार्मिक अंग, सरकार का सहयोग, आकर्षण का केंद्र, दैनिक प्रयोग, आर्थिक लाभ आदि विविध कारणों से दिन प्रतिदिन संभव हो पा रहा है । इतोद्यपि इसका विकास वांछनीय है । इस चित्रकला का समग्र संक्षिप्त रूप मधुबनी रेलवे स्टेशन के दीवारों पर कई वर्गों में चित्रांकन दृष्टिगोचर होता है । अब तो मिथिला चित्रकला का प्रयोग भारत सरकार द्वारा कई ट्रेनों के ऊपर अंकित कर प्रचार-प्रसार के तरफ एक सुनहरा कदम उठाया गया है और मिथिला चित्रकला से युक्त साड़ी, कैनवस आदि की भी देश के प्रमुख बाजारों में समुपलब्धता देखी जा सकती है । इस दिशा में कई संगठन और लोग काम कर रहे हैं ।

यहाँ के लोगों द्वारा इस पारंपरिक चित्रकला को व्यवहारिक, पूजा-संस्कार, अनुष्ठान कर्मादि का अविभाज्य अंग समझने एवं शुभ कार्य के अवसर पर इसके चित्रण को आवश्यक समझने के कारण रामायणकालीन सीता स्वयंवर से प्रारम्भ (मतानुसार) होकर अद्यावधि प्रयंत प्रचलित यह अनुपम चित्रकला सुरक्षित है और आगे भी रहेगी । इस प्रकार इस मिथिला क्षेत्र के संस्कार समारोह तथा पारिवारिक परंपरा के साथ जुड़ी मैथिल चित्रकला वैसे ही स्वाभाविक एवं आवश्यक है जैसे कि अन्यान्य गृहकार्य ।

- डॉ. ध्रुव मिश्रा
गाँव व पोस्ट-गरातोल
जिला-मधुबनी-847402 (बिहार)

हिन्दी का अन्य भाषाओं के साथ सम्बन्ध और सरोकार : कुछ लीजिये-कुछ दीजिये

डॉ. कैलाश कुमार मिश्र

भारत को जब अनेकता में एकता का सुन्दर देश कहा जाता है तो मेरे जैसे सामान्य आदमी के जेहेन में जो अनेक संस्कृतियों, भू-भाग, और भाषा भाषियों के बीच पला है, भाषाई विविधता सबसे पहले दृष्टिगोचर होता है। हम भारत के लोग भाषाओँ के महासागर में रहते आ रहे हैं। यही हमारी पहचान है।सबसे बड़ी बात यह है कि एक भाषा से दूसरी भाषा के लोगों में बहुत प्यार है, सम्मान है। मैथिली भाषा के लोग भोजपुरी, मगही, नेपाली, अवधी, बुदेलखंडी, बाघेली आदि भाषाओँ को बिना अनुवादक के ही समझ लेते हैं। समझते ही नही उनकी कथा, संवाद, गीत, काव्य आदि को उसी चाव से पढ़ते हैं जैसे अपनी भाषा की रचनाओं को। मैं मैथिली भाषी हूँ लेकिन भोजपुरी निरगुन सुनता हूँ, कबीर मेरे प्रिय कवि रहे हैं; अवधी, ब्रज के गीतों को सुनना मेरे लिए कान के इलाज के समान है। ये गीत मेरे कान को सकून देते हैं और मन को शान्ति। तुलसीदास का क्या कहना- समस्त मिथिला में अपनी रामचरितमानस, हनुमान चालीसा और विनयपत्रिका से व्याप्त हैं। मीरा का भजन गाँव-गाँव शहर-शहर में गाये जाते हैं। कहीं भी अनुवाद व्यवधान नही बनता।

एकबार एक भोजपुरी भाषी मित्र आए मिलने। उन्हें यह नही मालूम था कि मैं मिथिला से हूँ। जब पता चला तो कहने लगे: "देखिये, हमलोग अपने कार्यक्रम की शुरुआत विद्यापति की "जय जय भैरवि" से करते हैं। और तो और हमलोग तो विद्यापति के गीत को गाते समय ही मैथिली से भोजपुरी में अनुदित कर लेते हैं।" मुझे उनकी बात सुनकर अच्छा लगा। मैंने पूछ दिया: "आप विद्यापति के किसी भी गीत का अनुवाद सुना दीजिये।" महोदय तुरत शुरू हो गये: "देखिये, एक उदाहरण देता हूँ। आप समझ जायेंगे। आप लोग बोलते हैं- 'पिया मोरा बालक हम तरुणी रे/ कौन तप चुकलहुँ भेलौं जननी रे/' अब इसको हमलोग भोजपुरी में कुछ इस तरह गाते हैं: पिया मोर बालक हम तरुणी रे/ कौने तप चुकनी भैनी जननी रे/"

मैं मात्र एक दोहे से समझ गया कि वे सही बोल रहे थे। बाद में लोगों ने यह भी बताया कि कपिलदेव ठाकुर, जो कि स्नेहलता के नाम से मैथिली गीत लिखते थे, के गीतों को भी भोजपुरी गायक स्टेज पर ही गाते समय अनुवाद करते जाते हैं और गाते जाते हैं। कुछ मित्रों से पता चला कि विद्यापति के अनेक गीत मगही में जस का तस गाया जाता है और कभी-कभी जो शब्द मगही में बहुत प्रचलित नही हैं उन्हें मात्र अनुवाद करके डाल दिया जाता है। चन्दन तिवाड़ी भोजपुरी लोकगीतों की ख्यातिप्राप्त गायिका हैं। अभी हाल में दिल्ली में उनका कार्यक्रम सुनने का अवसर मिला. वो बोली: "मैथिली मेरी मौसी की भाषा है. मौसी माँ से कम नही होती। अत: मैं अपने गीतों का प्रारम्भ महाकवि बिद्यापती के जय जय भैरवि से करती हूँ।" मिथिला में वहाँ के लोक में एक प्रथा परचलित है। यहाँ के लोक सूर, तुलसीदास, मीरा, कबीर आदि के भजन के निचोड़ को मैथिली में गाते रहे हैं। इन्होंने इनके विचार को मात्र लिया है लेकिन इनकी ईमानदारी देखिये: हरेक गीत के अंत मे भनिता के रूप में सुर, तुलसी, मीरा, कबीर आदि का नाम लगाना नही भूलते। इसीको कहते हैं कला के प्रति और कलाकार के प्रति लोक का सम्मान। आज जे युग में जब लोग धड़ल्ले से एक दूसरे की रचनाओं की चोरी कर रहे हैं, हमारे यहाँ के लोक अपनी मर्यादा से किस तरह बन्धे हुए हैं। यह एक बहुत बड़ा शोध का विषय है।

एक बात जो मुझे पसन्द नहीं है वह है बोली और भाषा का विवाद। ये बोली और भाषा का विवाद तो भारत में कभी था ही नहीं। यह तो अंग्रेजो ने कर दिया। अंग्रेजों ने बोली और भाषा एवं आर्ट (कला) और क्राफ्ट (शिल्प) का विवाद के बीज भारत में बो दिया जिसका दंश हम लोग झेल रहे हैं।

भारत की आजादी से चालीस साल पहले ही पूरे उत्तर एवं पूर्व भारत में हिन्दी को विकसित किया जाने लगा। इसमें कहने की जरुरत नही कि मैथिली, भोजपुरी, मगही, अवधी, ब्रज आदि भाषा के लोगों ने अपना योगदान दिया। जहाँ बंगाल में बंगाली भाषा को क्षेत्रीय अस्मिता से देखकर बंगाल के साथ जोड़े रखा और हिन्दी से एक तरह की दूरी बनाने का काम किया। भाषा के आधार पर ओड़िसा आदि का निर्माण हुआ मैथिली एवं उपर्वर्णित भाषा के लोगों ने हिन्दी को विकसित करने में अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया। रामधारी सिंह 'दिनकर' (1908-1974), फणीश्वर नाथ 'रेणु' (1921-1977) नागार्जुन (1911-1998), रामवृक्ष 'बेनीपुरी' (1900-1968), हजारी प्रसाद द्विवेदी (1907-1979) आदि इसके उदाहरण हैं। हिन्दी का विकास इस तरह की भाषा में किया गया जो सभी भाषाओँ को एक साथ लेकर चलने में सक्षम है। ठीक एक माला की तरह जिसमें अनेक भाषाएँ अलग-अलग रंग और स्वरुप के फूलों की तरह गुंथे हुए हैं।

अब प्रश्न यह उठता है कि सभी भाषाओं को साथ लेकर

चलने का क्या अर्थ है? साथ लेकर चलने का अर्थ है कि उन भाषाओ में शोध हो, उनके प्रमाणिक ग्रन्थों का हिन्दी एवं अन्य भाषाओं में अनुवाद हो, उनकी शब्दशैली और व्याकरण पर कार्य हो, उनका प्रमाणिक शब्दकोश बने, अलग-अलग भाषा के साहित्यकार एकसाथ जगह-जगह बैठकर अपनी साहित्य और साहित्य के नए प्रयोग से अन्य भाषा के साहित्यकारों एवं पाठकों को अवगत कराएं। इस तरह के प्रयोग से हिन्दी साहित्य का विकास होगा। इसमें नूतन प्रयोग होंगे। प्रयोग में संख्यात्मक और गुणात्मक वृद्धि होगी। आज अंग्रेजी का विकास इसलिए हुआ कि अंग्रेजी अन्य भाषाओं के शब्द और संस्कार से अपने आपको संपन्न करता रहा।

हिन्दी में कुछ लोगों की सोच विपरीत है। ये लोग समझते हैं कि अगर भोजपुरी, मगही, ब्रज, अवधी आदि भाषा को अष्टम अनुसूची में डाल दिया गया तो हिन्दी का अहित हो जायेगा। यह सोच निरर्थक सोच है। उलटे हिन्दी को इन भाषाओं की मान्यता से फायदा है क्योंकि इसमें जितने भी काम, अनुवाद और इनका जितना भी प्रसार होगा उसका फल हिन्दी को मिलेगा। अन्ततः अखिल भारतीय स्वरुप में हिन्दी को रहना है और हिन्दी को अगर किसी भाषा से प्रतिस्पर्धा है तो वह है एकमात्र भाषा- अंग्रेजी। हिन्दी को बाजार से, विज्ञान से, प्रबंधन से, संगीत से, नृत्य से, नाटक से, खेलकूद से, मीडिया से, सोशल साइट्स से, कंप्यूटर से, वैश्विक सन्दर्भ से, नारीवाद से, कॉर्पोरेट क्रियाकलाप से, सिनेमा से, वायुयान से, पांच सितारा होटलों की संस्कृति से, परिधान से, नौकरी से, व्यवसाय से, न्यायायिक पद्धति और प्रणाली से जोड़ने की जरुरत है। अभी भी वेब की दुनियाँ में हिन्दी भाषा में प्रमाणिक टेक्स्ट का अनुपात दस प्रतिशत तक भी नहीं पहुँचा है जो है भी वह अवैज्ञानिक, और सन्दर्भ के साथ नही है। अनुवाद में हिन्दी को बहुत आगे बढ़ने की और वैज्ञानिक होने की जरुरत है। विज्ञान, कानून, कंप्यूटर, स्वास्थ्यविज्ञान, और प्रबन्धन के शब्दों में शोध और प्रयोग से उन्हें सरल बनाने की जरुरत है और इन सभी कार्यों को पूरा करने के लिए यह जरुरी है कि हिन्दी अपने साथ की भाषाओ का विकास करे।

प्रेमचन्द (1880-1936), नागार्जुन, रेणु की रचनाओं के नए शब्द और बिम्ब का निर्माण हिन्दी साहित्य में होता है। जब ये रचना कर रहे थे तो अपने परिवेश और मातृभाषा के शब्दों के साथ गोते लगा रहे थे। उनकी सोच में उनकी भाषा के शब्द और संस्कार प्रस्फुटित हो रहे थे। उनकी रचनाओं के साथ-साथ हिन्दी की शब्दावली के भण्डार का आकार बढ़ रहा था।

हिन्दी में विद्यापति, अमीर खुसरो, कबीर, मीरा, तुलसी, सुरदास, दादू, रसखान की रचनाओं को लिया गया। उनकी शब्दावली को भी आत्मसात किया गया। इस परम्परा को आज भी जीवित रखने की जरूरत है और इसको जीवित तब रख सकते हैं जब इन भाषाओं को न मरने दें। भारत में कितनी भाषाएँ मर चुकी हैं। हरेक भाषा के मरने के साथ भारत की आत्मा का निधन होता है। संस्कृतियों की डोर टूटने लगते हैं। दार्जीलिंग और सिक्किम में रहनेवाले लेपचा आदिवासी में बर्फ के लगभग तेईस शब्द हैं। सभी शब्द हिमालय के कंचनजंघा क्षेत्र में अलग-अलग प्रकार के बर्फ की जानकारी देते हैं। उनका स्वरुप, संरचना, आकार, स्थान, काल, मौसम के हिसाब से बदलते रहते हैं। कल्पना कीजिये कि लेपचा की भाषा आज खत्म हो जाए तो क्या होगा? भाषा के साथ-साथ वे शब्द भी और शब्द जिस संस्कृति से बने हैं वह संस्कृति भी विनष्ट हो जाएगा। अंग्रजी भाषा में लोग लगातार शब्द न मरे इसके लिए शोध करते रहते हैं। हमें भी यह करना होगा। अपने साथ की भाषाओँ के साथ कंधे से कंधे मिलकर चलना होगा, बढ़ना होगा।

अंडमान निकोबार का एक अंतिम आदमी था जो अपनी भाषा जानता था। वह मर गया। उसके मरने के बाद उसकी भाषा का भी अंत हो गया। अब लोग केवल यही कहेंगे कि था कोई एक आदिवासी अंडमान निकोबार में जो अपने साथ अपनी भाषा को भी लेकर चला गया। जिस तरह से मानव और जानवरों के अधिकार के लिए सरकार और गैर सरकारी राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय संस्थाए मानवाधिकार और जानवरों के अधिकार के लिए संस्था बनी हुई है आज उसी तरह से भाषा की रक्षा के लिए संस्थाओं का होना जरुरी है। कॉरपोरेट जिस सांस्कृतिक भूभाग में काम करते हैं, यह उनका दायित्व होता है कि वहाँ की संस्कृति के साथ-साथ भाषा का भी संरक्षण और संवर्धन करें। यही तो है कॉरपोरेट सोशल रेस्स्पोंसिबिलिटी।स्वयंसेवी संस्थाओं को इस दिशा में आगे आना चाहिए। लेकिन ऐसा नही हो रहा है। इस देश का दुर्भाग्य यह है कि यहाँ संस्कृति पर सोचनेवाले लोगों की संख्या बहुत कम हैं। जितने भी सांस्कृतिक संस्थाएं हैं वहाँ जुगाड़ वाले और आगे पीछे करनेवाले लोगों को सेट कर दिया जाता है- संस्कृति जाये भांड में! अगर भाभा एटोमिक रिसर्च सेंटर में किसी कवि को उसका निदेशक बना दिया जाय तो मीडियाकर्मी दिन रात ब्रेकिंग न्यूज चला देंगे लेकिन किसी अभियांत्रिकी, किसी आई.ए.एस, किसी पूर्व राजदूत, किसी मध्यम दर्जे के पत्रकार को प्रसिद्ध कला संस्थानों का प्रमुख बना दिया जाता है और सभी लोग मौन रहते हैं। यह तो है कला और साहित्य का दुर्भाग्य इस देश में। कला संस्थानों में उसके प्रमुख ऐसे लोग बने पड़े हैं जिन्हें कला का क, ख, ग का ज्ञान नही है। कला पर और साहित्य पर कला के विशेषज्ञ कम और राजनीति और जुगाड़ के लोग अधिक आते हैं और यह स्थिति किसी एक दल की नही हैं। इस मायने में इस देश के सभी दल जबर्जश्त एकता का परिचय देते हैं।

हिमालय एवं अन्य पहाड़ी और दुर्गम जंगल क्षेत्र में रहनेवाली जनजातियाँ अनेक तरह के स्थानीय किन्तु गुप्त जड़ी बूटियों के बारे में जानकारी रखती हैं। इन सभी जड़ी बूटियों का नाम स्थानीय अर्थात उनकी भाषा में है।अगर ये आदिवासी अपनी भाषा को छोड़ते हैं तो भाषा के साथ-साथ जड़ी बूटी के ज्ञान का भी अंत हो जाएगा। नागालैंड, मिजोरम, मणिपुर, असम में वहाँ की जनजातियों के साथ ऐसा हुआ है। अब आगे इस तरह की गलती न हो इस पर ध्यान देने की जरुरत है।

भाषाएँ बहती नदियों के सामान हैं। इनको रोकिये मत बल्कि ध्यान रखिये कि इनकी गति में कोई बाधा न उत्पन्न हो। अगर कोई रोकना चाहता है तो उसको इनके मार्ग से हटा दीजिये। देर मत कीजिये। तुरत हटाइये। इसी में भाषा की और हम सबों की भलाई है। नदियों के पानी का रुकना शुभ नही है। पानी के रुकने का अर्थ है पानी का सड़ जाना। प्राणहीन हो जाना।भाषा रूपी नदियाँ बहती रहें तो देश का कल्याण है। सभी भाषाएँ सहचरी बनकर बढ़े इसका खयाल रखना जरुरी है। सभी भाषाएँ एक सामान है ख्र न छोटी न बड़ी। भाषा का अपना प्रजातंत्र होना अनिवार्य है। प्रजातंत्र में सभी समान होते हैं। और जब भाषा रूपी अनेक नदियाँ अनेक रास्तों से होते हुए समुद्र में मिलती हैं तो उनका एक अलग स्वरुप हो जाता है। जब सभी भाषाओँ से निचोड़ लेकर उसको हिन्दी साहित्य संसार और कामकाज में प्रयोग करेंगे तो हिन्दी का स्वरुप कितना व्यापक होगा जरा इसकी कल्पना कीजिये!

मैथिली साहित्य और भाषा का इतिहास देखंगे तो आपको पता चलेगा के बिद्यापति से तीन सौ साल पूर्व से यह भाषा उन्नत भाषा के रूप में व्याप्त है। लोक कंठ में इसका व्यवहार है। इसमें साहित्य का निर्माण हो रहा था। विज्ञान जो लोकहित में है, को इस भाषा में समझाया जा रहा था, लिखा जा रहा था। समस्त उत्तर, मध्य और उत्तर पूर्व भारत में यह पहली भाषा है जिसमें संस्कृत के साथ-साथ मैथिली में भी सार्वभौमिक स्तर का नाटक लिखा जा रहा था।कवि ज्योतिरीश्वर ठाकुर का धूर्तसमागम इसका जीवित प्रमाण है। तेरहवीं शदी के इस नाटक में नाटककार ज्योतिरीश्वर ठाकुर एक नूतन प्रयोग यह करते हैं कि इसमें मैथिली गीतों का समावेश करते हैं। यह प्रहसन की श्रेणी का नाटक है। चूँकि इस नाटक के सभी पात्र एक से बढ़कर एक धूर्त हैं इसीलिये इसका नाम धूर्तसमागम है। गुरुदेव रबीन्द्रनाथ ठाकुर (1861-1941) यह स्वीकार करते हैं कि विद्यापति को पढ़कर और समझकर ही उन्होंने काव्य सृजन प्रारम्भ किया। वे यह भी स्वीकार करते हैं कि भानुसिंहेर पदावली उन्होंने विद्यापति की पदावली की शैली में किया है। जब वाराणसी में भारतेन्दु हरिशचन्द्र (1850-1885) हिन्दी साहित्य पर नित नूतन चीज लिख रहे थे, उनसे पहले से और बाद तक मैथिली में चन्दा झा (1831-1907) काम करते रहे थे। दुर्भाग्य से भारतेन्दु कम उम्र में चले गये। चन्दा झा करीब अठहत्तर वर्ष तक साहित्य के विविध आयाम पर लिखते रहे। साहित्कार पोथी लिखते हैं, चन्दा झा पोथा अर्थात अनेक पोथियों से समाहित एक महान और बहुत पन्नोवाला ग्रन्थ का निर्माण करते हैं। आज जरुरत इस बात की है कि भारतेन्दु और चन्दा झा पर तुलनात्मक अध्ययन हो। इससे हिन्दी और मैथिली दोनों के कद बड़े होंगे। नये तथ्य उजागर होंगे। कुछ जो चीजें स्पष्ट नही हैं उनमे स्पष्टता आएगी।

मैथिली भाषा का अपना बृहत् शब्दकोश, विपुल साहित्य, व्याकरण, नाटक, लिपि है। मैथिली भाषा की लिपि को मिथिलाक्षर अथवा तिरहुताक्षर कहते हैं। महान भाषा शास्त्री सुनीति कुमार मुखर्जी के अनुसार बंगला लिपि मिथिलाक्षर लिपि से लिया गया है।

मैथिली, भोजपुरी, मगही, अवधी, ब्रजबोली एवं जितनी भी भाषाये हैं सबको वेद मन्त्र के सामान संग लेकर चलने की जरुरत है। सभी का आपसी सरोकार चलता रहे। सब एक दूसरे के पूरक बने रहें।

लेखक परिचय:

डॉ. कैलाश कुमार मिश्र कला, साहित्य, मानवाधिकार, लोकविद्या, और मानवशास्त्र के विद्वान हैं, मोटिवेटर हैं, प्रबुद्ध वक्ता हैं, अंग्रेजी, मैथिली और हिन्दी तीनों भाषाओं में समान अधिकार से लिखते और बोलते हैं।

– डॉ. कैलाश कुमार मिश्र
ब्रेन कोठी : बी-2/333, तारा नगर, पुरानी पालम रोड
(नजदीक श्री राम मन्दिर) ककरोला, सेक्टर-15
द्वारका, नई दिल्ली-110078

पृष्ठ संख्या 52 का शेष

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. योगेन्द्र प्रसाद यादव (2013)

2. मेडाइबल नेपाल भाग 4 पृष्ठ 65

3. मैथिली भाषाकोश , 1914.ई. डा. जयकान्त मिश्र (वृहद मैथिली शब्दकोश 1973 ई.) के अतिरिक मैथिली-नेपाली एवम अंग्रेजी आदि का शब्दकोश निर्माण प्रक्रिया गतिशील है ।

4. डॉ. योगेन्द्र प्रसाद यादव रिडिंगस इन मैथिली लैंगवेज लिट्रेचर एण्ड कल्चर काठमाण्डौं 1999 ई.

5. Dr- S-K Chatterjee % Origin and Development of Bengali Language] Appendiñ] A-D 150&59

6. Bhandarkar Oriental Research Institute] Poona

7. Dr- J- Mishra % An Introduction to The Folk Literature of Mithila Part & 1 University Allahabad1950 P-4

विश्वव्यापी राष्ट्रभाषा हिन्दी की दशा व दिशा

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज का गठन मनुष्यों के पारस्परिक सहयोग से हुआ है। समाज में रहकर मनुष्य अपने विचारों का आदान-प्रदान भाषा के माध्यम से ही करता है। अपने भावों और विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए उसे भाषा का ही सहारा लेना पड़ता है। जब भाषा का पर्याप्त विकास नहीं हुआ तो मानव अपने विचारों का संप्रेषण ध्वनि संकेतों और सार्थक ध्वनियों के माध्यम से ही करता था। मनुष्य बोलते समय अपने चेहरे की आकृति हाथ और अगुंलियों की हरकत आदि के द्वारा अपनी अभिव्यक्ति प्रस्तुत करता था। पेड़ की डालियों पर धागे बांधना, कपड़े लटकाना, गाँठे लगाना और पताकाओं का प्रयोग अभिव्यक्ति का ही परिचायक थी। भाव भंगिमाओं, मुद्राओं से अन्तर्मन के कई रहस्यों को समझा जा सकता है। किसी भी व्यक्ति का बात करते समय चेहरे को किसी ओर झुकाना, गाल पर हाथ रखना, नाक को नीचे से छूना, सिर पर हाथ मारना आदि भाव भंगिमाएं भाषाई दृष्टि से सार्थक होती है।

भाषा राष्ट्र की एकता, अखण्डता तथा प्रगति के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण होती है। कोई भी राष्ट्र बिना एक भाषा के सशक्त व समुन्नत नही हो सकता है अत: राष्ट्र भाषा उसे ही बनाया जाता हैं जो सम्पूर्ण राष्ट्र में व्यापक रूप से फैली हुई हो। जो समूचे राष्ट्र में सम्पर्क भाषा के रुप में कारगर सिद्ध हो सके। राष्ट्र भाषा सम्पूर्ण देश में सांस्कृतिक और भावात्मक एकता स्थापित करने का प्रमुख साधन है। राष्ट्रभाषा के रुप में हिन्दी को प्रमुखता से स्वीकार किया गया है क्योंकि इसे बोलने वालों की सर्वाधिक संख्या है। यह बोलने, लिखने और पढ़ने में सरल है।

'हिन्दी' शब्द मूलत: फारसी भाषा का शब्द है। जिसका अर्थ हिन्दी का, या हिन्दी से संबंधित है । इस शब्द की निष्पति 'सिंधु' से हुई है। ईरानी भाषा में 'स' का उच्चारण 'ह' से किया जाता है अत: हिन्दी शब्द सिंधु शब्द का प्रतिरूप है। वस्तुत: हिन्दी आर्य भाषाओं में प्रमुख है। आर्य भाषा का प्राचीनतम स्वरुप वैदिक संस्कृत है और इसी वैदिक संस्कृति से ही वेदों, उपनिषदों और संहिता आदि का सजृन हुआ हैं। उस समय बोलचाल की भाषा को लौकिक संस्कृत का नाम दिया गया था। संस्कृत का विशेष प्रचलन होने से बाल्मीकि, कालीदास, अश्वमेघ, भवभूति, विशाखा, मम्मट, दंडी, हर्ष आदि संस्कृत भाषा के उद्भट विद्वान रहे हैं और उनका साहित्य तत्कालीन समाज में पूजनीय रहा है।

देश की अनेक भाषाओं का उद्गम संस्कृत भाषा ही है। हिन्दी को संस्कृत की बेटी कहा जाता है। संभवत: संस्कृत प्राचीन काल में आमजन की भाषा रही है जैसे आज हिन्दी है। हमारे धर्म गुरूओं, साधु-संतों और साहित्यकारों के प्रयास से ही संस्कृत के साथ-साथ हिन्दी भाषा को भी यथोचित सम्मान मिला और आमजन की भाषा से इसका विकास होता गया। दिनांक 14 सितम्बर 1949 को हिन्दी भाषा को भारत की राजभाषा के रुप में स्वीकार किया गया। इसी उद्देश्य से 14 सितम्बर को हिन्दी दिवस के रुप में मनाया जाता है।

संविधान के अनु. 351 में हिन्दी भाषा के विकास हेतु स्पष्ट उल्लेख है कि ''संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा का प्रसार बढ़ावे, उसका विकास करें जिससे वह भारत की सामाजिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी में आंठवी अनुसूची में विर्निष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रुप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहाँ आवश्यक और वांछनीय हो वहाँ शब्द भण्डार के लिए मुख्यत: संस्कृत और गौणत: अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए इसकी समृद्धि सुनिश्चित करे। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343 (1) के अनुसार संघ की राजभाषा हिन्दी एवं लिपि देवनागरी रहेगी। अनुच्छेद 343 (2) की धारा में संविधान के क्रियाशील होने से 15 वर्ष तक के लिए अंग्रेजी के प्रयोग को अधिकृत किया गया था। अनुच्छेद 343 (3) की धारा में संसद को उक्त अवधि के बाद भी अंग्रेजी के प्रयोग को अधिकृत करने हेतु विधि निर्माण का अधिकार दिया गया था। राजभाषा अधिनियम 1964 द्वारा यह उपबन्ध किया गया था कि सभी राजकीय कार्यों में अंग्रेजी का प्रयोग 26 जनवरी 1971 तक होता रहेगा। पुन: राजभाषा अधिनियम 1967 द्वारा अंग्रेजी को अनिश्चित समय तक जारी रखने का उपबन्ध किया गया। संविधान में यह जोड़ दिया गया कि जब तक एक भी राज्य चाहेगा तब तक अंग्रेजी केन्द्रीय सरकार की सम्पर्क भाषा बनी रहेगी। वस्तुत: 26 जनवरी 1965 में हिन्दी राजभाषा बन गई थी।

वस्तुत: हिन्दी भाषा को राष्ट्र भाषा के रुप में संवैधानिक रुप देने में विलम्ब का कारण इच्छा शक्ति का अभाव रहा है। सन् 1963 में राजभाषा अधिनियम पारित हुआ जिसका तमिलनाडू में विरोध हुआ तत्कालीन प्रधानमन्त्री पं. जवाहर लाल नैहरू ने संसद में कहा था कि ''जब तक सभी राज्य न चाहे तब तक शासकीय कार्यो में अंग्रजी का उपयोग होता रहेगा। यही निर्णय राष्ट्र भाषा हिन्दी के लिए अभिशाप बन गया।

हिन्दी को सही अर्थों में राष्ट्रभाषा का दर्जा नहीं मिलने के पीछे सबसे बड़ी अड़चन सरकार के स्तर पर उसके उपयोग को बढ़ावा देने में कभी भी दृढ़ इच्छा शक्ति नहीं दिखाई। यदि विदेशी

राजनेताओं के साथ हिन्दी में बातचीत का सिलसिला बनाये रखते तो इससे तमाम सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा मिलता। प्रसन्नता है कि वर्तमान प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी ने इस दिशा में पहल की है। सार्क देशों के नेताओं से और विदेशी प्रतिनिधियों से अब वे हिन्दी भाषा में ही बातचीत करेगें। प्रधानमन्त्री की यह भावना राष्ट्र भाषा के प्रति सम्मान और समर्पण की है।

यदि देश का प्रत्येक नागरिक राष्ट्र भाषा के प्रति स्नेह और सम्मान की भावना रखते हुए बातचीत और सीखने में हिन्दी भाषा के प्रयोग को बलवती इच्छा शक्ति के साथ करे तो वह दिन दूर नहीं जब समूचे देश में हिन्दी भाषा ही आम भाषा बनकर राष्ट्र भाषा का स्वरूप निश्चित कर पायेगी। राष्ट्र भाषा स्वाभिमान न्यास द्वारा आयोजित समारोह में न्यास के अध्यक्ष श्री उमाशंकर मिश्र ने कहा है कि ''देश को पराधीनता से मुक्त हुए 67 वर्ष व्यतीत होने के बाद भी भाषाई गुलामी से हमारा देश आज भी परतंत्र है''।

हिन्दी भाषा सदैव से उत्तर-दक्षिण के भेद से परे चहुंदिशी व्यावहारिक होती चली आई यथा दक्षिण के प्रमुख संतों वल्लभाचार्य विऋ्ल, रामानुज, रामानन्द आदि महाराष्ट्र में नामदेव तथा ज्ञानेश्वर गुजरात में नरसी मेहता, राजस्थान में दादू, रज्जव, मीरा पंजाब में गुरु नानक असम में शंकरदेव, बंगाल में चैतन्य महाप्रभु तथा सूफी संतों ने अपने धर्म और संस्कृति का प्रचार हिन्दी में ही किया है। इन्होंने एक मात्र सशक्त साधन हिन्दी को ही माना था।

राष्ट्र भाषा हिन्दी भारतीय संघ की भाषा घोषित करने के संबंध में हमारे जन प्रतिनिधियों और राजनेताओं ने अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किए हैं।

■ राष्ट्र भाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है। राष्ट्रीय व्यवहार में हिन्दी को काम में लाना देश की एकता और अखण्डता तथा उन्नति के लिए आवश्यक है। -महात्मा गांधी

■ राष्ट्र के एकीकरण के लिए सर्वमान्य भाषा से अधिक बलवती कोई तत्व नहीं -लोकमान्य तिलक

■ जब तक इस देश का राजकाज अपनी भाषा हिन्दी में नहीं चलेगा जब तक यह नहीं कह सकते कि देश में स्वराज है। -मोरारजी देसाई

■ देश भर को बाँधने के लिए भारत के भिन्न-भिन्न हिस्से एक दूसरे सें संबंधित रहे, इसके लिए हिन्दी की जरुरत है। -पं. जवाहर लाल नेहरु

■ राजनीति, वाणिज्य तथा कला के क्षेत्र में देश की अखण्डता के लिए हिन्दी को महत्ता की ओर सभी भारतीयों को ध्यान देना चाहिए, चाहे वो किसी भी क्षेत्र में रहने वाले और अपनी-अपनी प्रांतीय भाषा बोलने वाले हो। -चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य

संयुक्त राष्ट्र संघ की 6 आधिकारिक भाषाओं में से एक भी भाषा ऐसी नहीं हैं जिसको बोलने वालों की संख्या हिन्दी से अधिक है। 9 करोड़ फ्रेंच बोलने वाली आबादी सयुंक्त राष्ट्र संघ में पंहुच चुकी हैं। जबकि एक अरब से अधिक बोलने वालों की हिन्दी अभी तक वहां नहीं पहुँच पाई है। आज भी अमेरिका के कई विश्वविद्यालयों और मॉरीशस के विश्वविद्यालयों में पी.एच.डी तक का शोध कार्य हिन्दी में हो रहा हैं। सऊदी अरब, जापान आदि देशों में हिन्दी पढ़ाई जाती है। इंग्लैण्ड में अंगेजी के बाद हिन्दी का स्थान हैं। इतना व्यापक प्रभाव और प्रसार होते हुए भी हिन्दी भाषा को सर्वमान्य नहीं किया गया, यह एक विडम्बना ही हैं। शासन और प्रशासन को पूरे मन से दृढ़ संकल्प के साथ और इच्छा शक्ति से इस दिशा में सशक्त प्रयास करना होगा।

तुर्की की एक घटना हैं। जब कमाल पाशा ने तुर्की को राष्ट्र भाषा बनाने का निर्णय लिया तो उन्होने आमंत्रित विद्वानों की सभा में पूछा ''तुर्की कितने दिनों में चलने लगेगी ? विद्वानों का उत्तर था 15 वर्षों में। कमालपाशा बोले समझ लो 15 वर्ष पूरे हो गये। कल से तुर्की भाषा में काम होना चाहिए।

हमारी इस प्रकार की दृढ़ इच्छा शक्ति और मानसिकता होगी तभी हिन्दी भारतीय संघ की राजभाषा घोषित हो पायेगी।

राष्ट्र भाषा को प्रतिस्थापित करने के लिए-

■ राष्ट्र भाषा हिन्दी के प्रति अगाध आस्था और समर्पण भाव होना चाहिए।

■ साहित्यिक संस्थाओं और साहित्यकार राजभाषा को विशेष महत्व देते हुए कारगर प्रयास करते रहे।

■ शिक्षण संस्थाओं में हिन्दी भाषा को विशेष कुशलतापूर्वक अध्यापित कराते हुए हिन्दी के प्रति प्रेम व लगाव बढ़ाने का पूरा प्रयास किया जाना चाहिए।

■ पूरे देश में शिक्षण संस्थाओं में हिन्दी विषय अनिवार्य किया जाए।

■ राजकाज की भाषा में पूर्णत: हिन्दी को अनिवार्य किया जाए।

■ राजनेता अपनी विदेश यात्राओं में तथा विदेशी प्रतिनिधियों से हिन्दी को ही वार्तालाप का माध्यम बनायें।

■ कम्प्यूटर और इंटरनेट के उपयोग तथा प्रचार प्रसार हेतु हिन्दी को विशेष महत्ता दी जाए।

■ राजनीतिज्ञ, प्रशासनिक अधिकारी एवं उच्चाधिकारी हिन्दी भाषा के प्रयोग एवं प्रचार में भागीदार बनें।

■ हिन्दी की पत्र-पत्रिकाओं द्वारा हिन्दी को अर्थवान बनाने का विशेष प्रयास होना चाहिए।

■ राजभाषा के लिए बने शब्द कोश में जो शब्द सुझाये गये थे वे सरल तथा आम आदमी की भाषा में होने चाहिए।

■ हिन्दी का ऐसा विकसित स्वरूप प्रस्तुत किया जाना चाहिए जिसे तमिलनाडू और केन्द्र सरकार आपस में समझ सके।

■ त्रिभाषा सिद्धान्त को बढ़ावा दिया जाए।

मातृ भाषा- क्षेत्रीय भाषा

सम्पर्क भाषा- हिन्दी

अन्तर्राष्ट्रीय भाषा- अंग्रेजी

■ भाषा का स्वरुप ऐसा हो जो हमारी सुरक्षा शांति और भाईचारा तथा एकता को संबल प्रदान करे।

■ केन्द्र सरकार भाषा से संबंधित कोई भी निर्णय ले वह भारत के स्वभाव और स्थिति के अनुकूल हो।

■ सभी मन्त्रालय अपने अधिकारियों को निर्देशित करे कि वे फेसबुक, ट्वीटर, ब्लॉग और यू ट्यूब जैसी साइटों पर हिन्दी को प्राथमिकता दें।

हिन्दी ही एक ऐसी शालीन व समृद्ध भाषा हैं जिसका किसी भी क्षेत्रीय भाषा से विरोध नहीं हैं, बल्कि भारतीय भाषाएं एक दूसरे की बहिनें हैं। राष्ट्रीय महत्व के कामकाज यदि जनता की भाषा में होगें तो देश की व्यवस्थाएं अधिक पारदर्शी होगी। हिन्दी भाषा हमारे माथे की बिन्दी स्वरुप है इसी से ही जन जीवन में समरसता और संवाद में सहजता का प्रादुर्भाव होगा, दूरियाँ समाप्त होगी तथा नजदीकियों को विस्तार मिलेगा।

-सुरेन्द्र माहेश्वरी
प्रधानाचार्य
रा.उ.मा.वि., तसवारिया
जिला-भीलवाड़ा-311022
मो- 09829925909

'साक्षरता के बदलते परिवेश'

साक्षरता मानव जीवन के लिए कितनी उपयोगी और आवश्यक है, इसको हम सभी भली भांति जानते हैं । समाज का हर वर्ग साक्षर हो इसके लिए भारत सरकार और तमाम शिक्षण संस्थान एवं व्यक्तिगत रूप से भी लोग अनवरत प्रयास में लगे हुए हैं। पूर्व से वर्तमान में साक्षरता के अभियान में काफी तीव्रता भी आयी है, जो हमारे समाज के लिए, मानव जीवन के लिए बहुत ही गर्व की बात है।

हमारे उज्ज्वल भविष्य के लिए, मानव जीवन के उत्थान के लिए, प्रत्येक व्यक्ति का साक्षर होना अत्यंत आवश्यक है । समाज की जो विविधता है, मानव जीवन के जो मधुर संस्कार हैं, उनमें साक्षरता का समावेश ही उनको गौरवशाली बनाता है । आज के आधुनिक परिवेश में साक्षरता का बदलता स्वरूप बहुत ही स्पर्धात्मक हो गया है, जिसमें तमाम शिक्षण संस्थान आपस में ही एक-दूसरे से आगे जाने की होड़ में लगे हुए हैं, जिससे शिक्षा का स्तर काफी ऊंचा भी उठ रहा है । किन्तु एक तरफ चिंता का विषय यह भी है कि जिस तरह आज की महंगी शिक्षण व्यवस्था का प्रचलन बढ़ता जा रहा है, उससे कहीं न कहीं समाज के बहुत सारे लोग चिंतित हैं और पिछड़ रहे हैं ।

पठन-पाठन का स्तर बदलता जा रहा है, बच्चों में आधुनिकता कूट-कूट कर भरी जा रही है । जिसके चलते हमारे समाज की जीवन शैली में बदलाव निरंतर हो रहे हैं । होने भी चाहिए, किन्तु उस बदलाव में कहीं न कहीं हमारे निर्मल विचार, मधुर संस्कार, साहित्यिक शैली की परंपरा आदि धूमिल होते जा रहे हैं ।

भाषा अभिव्यक्ति की जो रसता कभी अलंकृत, रस और छंद से परिपूर्ण होती थीं, वो कहीं न कहीं आज के आधुनिक शिक्षण परंपरा में विलुप्त होती जा रही हैं । हमारी मातृ भाषा हिन्दी जो हमारी जीवन शैली को गौरवान्वित करती है, आज की आधुनिक शिक्षण व्यवस्था में अपनी पहचान बनाने की जद्दोजहद में लगी हुई है ।

बदलाव आवश्यक है किंतु इतना भी बदलाव नहीं होना चाहिए जिससे हमारे आचरण, हमारे संस्कार, हमारी परंपरागत पृष्ठभूमि प्रभावित हो....।।

-विजय कनौजिया
45, जोरबाग
नई दिल्ली-110003
मो. : 9818884701
ई-मेल : vijayprakash-vidik@gmail-com

आगामी आयोजन

'बुंदेली लोक-कला-राग महोत्सव'

विजय कुमार शर्मा
सह सम्पादक

अपने भाव, विचार और अभिव्यक्ति को परस्पर सम्प्रेषण करने के लिए मनुष्य को भाषा की आवश्यकता होती है तथा सामाजिक मूल्य-मान्यताओं, आदर्शों और अनुशासन को बनाए रखने के लिए संस्कृति की । मनुष्य के जीवन में भाषा और संस्कृति का गहरा अंतरसंबंध है । भाषा के माध्यम से मनुष्य अपने ज्ञान, कौशल, खोज, अनुसंधान, विचार और चेतना को परिष्कृत कर एक समुदाय से दूसरे समुदाय तक विस्तार करता है तथा संस्कृति के माध्यम से अपनी परंपरा, संस्कार, सभ्यता एवं इतिहास का संरक्षण और संवर्द्धन करता है । मनुष्य के सर्वांगीण विकास में भाषा और संस्कृति की अहम भूमिका होती है ।

भारत एक बहु-भाषी एवं बहु-सांस्कृतिक विविधता का धनी देश है । विभिन्न भाषा-भाषी और धर्मावलम्बी समुदायों की भाषिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और धार्मिक एकता और सहिष्णुता ही भारत की अपनी खूबसूरती है । लेकिन पिछले पाँच वर्षों से भारतीय भाषाओं का सम्मान तीव्र गति से कम होता जा रहा है; कारण है प्राथमिक स्तर से ही शिक्षा का माध्यम अँग्रेजी में प्रारम्भ करना । अँग्रेजी के चकाचौंध भरे वातावरण में इसके दुष्परिणाम आज तो हमें दिखाई नहीं दे रहे हैं लेकिन यह स्पष्ट है कि आने वाले 50/60 वर्षों के बाद हिन्दी सहित कई भारतीय भाषाएँ लुप्त हो जाएंगी । बोलचाल की भाषा अँग्रेजी हो जाएगी और भारतीय भाषाओं में रचे हुए साहित्य के लिए पाठकों का अभाव हो जाएगा । इस तरह भाषा धीरे-धीरे मरती है और साथ-साथ उसकी संस्कृति भी । अपनी भाषा और संस्कृति के अभाव में समाज कुपोषित होने लगता है । यही सांस्कृतिक पतन की निशानी है । देश की शिक्षा प्रणाली में प्राथमिक स्तर से अंग्रेजी माध्यम को लादने की प्रवृत्ति को देखते हुए यह संकेत दिख रहा है कि भारतीय भाषाएं और उनके साथ भारतीय संस्कृति भी मृतप्राय: होने वाली हैं । अत: आज हिन्दी सहित सभी भारतीय भाषाओं को बचाने के लिए एक भाषायी आंदोलन की आवश्यकता है ।

ऐसी स्थिति में हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी ने हिन्दी सहित सभी भारतीय भाषाओं के संरक्षण, संवर्द्धन और प्रचार-प्रसार करने का प्रण लिया है । विगत कुछ वर्षों से अकादमी भाषा के लिए जमीनी स्तर पर महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही है जिसमें स्तरीय साहित्यिक कृतियों एवं अनुवाद साहित्य का प्रकाशन करना, काव्य प्रतिभा खोज तथा नवांकुर प्रतिभाओं को स्तरीय मंच प्रदान करना, गीत प्रतियोगिता के लिए गीतोत्सव तथा समीक्षा जैसे विषयों पर प्रतियोगिता का आयोजन करना, मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह का आयोजन करना, विभिन्न सरकारी संस्थाओं के साथ समन्वय कर भाषा से संबन्धित विषयों पर राष्ट्रीय संगोष्ठियों का आयोजन करना सम्मिलित है । भाषा का संबंध संस्कृति और साहित्य से जुड़ा होता है अत: अकादमी भाषा के साथ-साथ लोक संस्कृति एवं लोक कला के संरक्षण और संवर्द्धन हेतु प्रयासरत है । इस योजना के तहत बुंदेली भाषा और बुंदेली लोक कला-संस्कृति के लिए बुंदेली लोक राग का आयोजन अकादमी में प्रस्तावित है । बुंदेली भाषा का अपना समृद्ध साहित्य एवं सभ्यता है ।

बुंदेली भाषा सागर, दमोह, दतिया, ग्वालियर, टीकमगढ़, मुरैना, बांदा, झाँसी, हौशंगाबाद, विदिशा, ललितपुर, कटनी, पन्ना तथा हमीरपुर आदि क्षेत्रों में बोली जाती है । नयी पीढ़ी के लोगों को अपनी भाषा और संस्कृति से अवगत कराना अत्यावश्यक है क्योंकि यही कल के कर्णधार हैं । भूमंडलीकरण और तकनीकी विकास के इस वातावरण में लोग अपनी भाषा और संस्कृति से कटते जा रहें हैं । ऐसे में यह समस्या बनी रहती है कि भाषा और संस्कृति का संरक्षण कैसे हों ? इसी को मद्देनजर रखते हुए अकादमी ने अपने बाल प्रयासों से लोक जीवन और लोक संस्कृति को बचाए रखने के लिए एक मुहिम की शुरुआत की है । अकादमी के आगामी आयोजन में दो दिवसीय बुंदेली लोक कला राग का आयोजन होना प्रस्तावित है । इस योजना की तिथि और स्थान की घोषणा अकादमी की केन्द्रीय समिति द्वारा बाद में की जाएगी ।

आगामी आयोजन

'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान'

सुरेखा शर्मा
सलाहकार

किसी भी व्यक्ति के सफल होने में उसके शिक्षक का योगदान अतुलनीय होता है । जीवन में सफलता का मूलमंत्र शिक्षक से ही प्राप्त होता है। शिक्षक के बिना विद्यार्जन करना असंभव है । शिक्षक एक ऐसा आदर्श व्यक्तित्व है जो शिक्षित और सभ्य समाज के निर्माण में अहम भूमिका निर्वाह करता है, इसीलिए शिक्षक को माता-पिता और भगवान से भी ऊँचा स्थान प्राप्त है ।

विद्यालयों में अलग-अलग विषयों की शिक्षा देने के लिए संबंधित विषयों के शिक्षक होते हैं । इनमें से भाषा शिक्षक की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि विद्यार्थियों में संस्कार और अनुशासन की नींव भाषा शिक्षक ही रखता है । भाषा शिक्षक देश की भाषा, संस्कृति, सभ्यता, साहित्य और कला की शिक्षा प्रदान करता है । भाषा शिक्षक ही विद्यार्थियों की प्रतिभा को पहचान कर उनके कार्य कौशल, क्षमता और ज्ञान को निखारने में उचित मार्गदर्शन देता है । लेकिन विडम्बना यह है कि भाषा शिक्षक को जो सम्मान मिलना चाहिए वो उन्हें नहीं मिल पा रहा है क्योंकि समाज आज अँग्रेजी के मोहजाल में बुरी तरह फंस चुका है । आज समाज की आम धारणा यह बन गयी है कि अँग्रेजी में बोलने से सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ती है । बच्चों की शिक्षा-दीक्षा अँग्रेजी में हो तो उनका भविष्य उज्ज्वल और सुरक्षित होगा । ऐसी नकारात्मक सोच ने समाज में एक तरह की सामाजिक असमानता और विकृत मानसिकता को बढ़ावा दिया है । क्या भाषा का सरोकार केवल रोजगार तक ही सीमित है ? यदि संबंधित भाषा रोजगार मुहैया नहीं करा सकती तो क्या उसकी हत्या कर देनी चाहिए? जिस भाषा में हम सोचते हैं, सुख-दु:ख व्यक्त करते हैं और सपने देखते हैं उस भाषा के प्रति हमारा लगाव नहीं होना चाहिए ? क्या अँग्रेजी के माध्यम से राष्ट्र निर्माण करना संभव है ? यदि हम फ्रेंच, जर्मन, स्पेनिश में गाँधी, टैगोर, मदर टेरेसा, भगत सिंह, स्वामी विवेकानंद जैसी राष्ट्रीय विभूतियों को पढ़ेंगे तो क्या हमारे भीतर राष्ट्रीय भावना कूट-कूट कर भरेंगी ? इन विदेशी भाषाओं के वर्चस्व में हम किस तरह का राष्ट्रप्रेम चाहते हैं ? अपनी भाषा से विमुख होकर हम किस तरह का राष्ट्र निर्माण करना चाहते हैं ? इनके जवाब हमें ढूँढने होंगे । विदेशी भाषा के मोहजाल में कहीं हम अपनी धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक विरासत को ही खो न दें ।

जिस तरह से निजी विद्यालयों में और सरकारी विद्यालयों में हिन्दी शिक्षकों के साथ दोयम दर्जे का व्यवहार किया जाता है, उन्हें अवांछित समझा जाता है, इससे उनके आत्म सम्मान को कितनी ठेस पहुँचती है ? जो भाषा शिक्षक बच्चों में हिन्दी भाषा के बीज रोपण करता है वह क्यों बार-बार अपमानित हों ? क्या हिन्दी शिक्षक होना इतना ही आसान है ? जिन भाषा शिक्षकों के कंधों पर देश की भाषा का संरक्षण, संवर्धन और प्रचार-प्रसार करने की जिम्मेदारी है उन्हें क्यों हाशिए पर रखा जाता है ? यदि हमें अपनी भाषा और संस्कृति को बचाना है तो हमें इन भाषा शिक्षकों को सम्मान देना चाहिए क्योंकि इनकी मेहनत और लगनशीलता से ही हमारे बच्चे देश की भाषा और संस्कृति से परिचित होते हैं । यदि भाषा शिक्षक ही नहीं होंगे तो एक दिन हम अपनी भाषा को ही खो देंगे ।

इन्हीं समस्याओं को मद्देनजर रखते हुए हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी द्वारा भाषा शिक्षकों को सम्मान देने हेतु 'भाषा गौरव शिक्षक सम्मान समारोह' आयोजन प्रस्तावित है । इस सम्मान समारोह में केवल उन्हीं विद्यालयों के भाषा शिक्षकों को सम्मानित किया जाएगा जिन विद्यालयों के नाम अकादमी द्वारा 3 फरवरी 2019 में इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के विशाल प्रांगण में आयोजित 'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह' में सम्मिलित थे ।

वर्ष 2018 की दसवीं कक्षा की बोर्ड परीक्षा में जिन मेधावी छात्रों ने हिन्दी विषय में उत्कृष्ट प्रदर्शन किया था उसके पीछे उनको हिन्दी विषय पढ़ाने वाले भाषा शिक्षकों का ही योगदान था । इन भाषा शिक्षकों का उचित मार्गदर्शन और दिशा निर्देश प्राप्त कर छात्रों ने हिन्दी विषय पर प्रशंसनीय प्रदर्शन किया था । अत: हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी जो हिन्दी सहित सभी भारतीय भाषाओं के संरक्षण, संवर्द्धन और प्रचार-प्रसार के लिए कटिबद्ध है, ऐसे भाषा शिक्षकों को सम्मानित कर अकादमी स्वयं को गौरवान्वित महसूस करती है । इस योजना की तिथि और स्थान की घोषणा अकादमी की केन्द्रीय समिति द्वारा बाद में की जाएगी ।

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी
द्वारा घोषित
'भाषा शिक्षक गौरव सम्मान'
हेतु चयनित सभी सम्मानित शिक्षकों को
हार्दिक बधाई एवं अभिनन्दन !

हामिद खान
प्रभारी सोशल मीडिया

भूपिंद्र कुमार सेठी
प्रवक्ता

रिपोर्ट

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, कलानिधि विभाग, संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी से प्रकाशित पुस्तकों का लोकार्पण समारोह

सरोज शर्मा
सलाहकार

दिनांक 8 दिसंबर 2018 को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, कलानिधि विभाग पुस्तक लोकार्पण कार्यक्रम आयोजित किया गया जिसमें भारत और नेपाल का सुंदर मैत्री सम्मिलन देखने को मिला। अवसर था- नेपाली युवा कवि एवम् अनुवादक श्री राजकुमार श्रेष्ठ द्वारा सुधाकर पाठक जी की पुस्तक 'जिंदगी कुछ यूं ही' का नेपाली अनुवाद 'जिंदगी केही यस्तै' और वरिष्ठ कथाकार सुरेखा जी की गद्य में प्रकाशित 'प्रतिनिधि कहानियाँ' का लोकार्पण समारोह। इस भव्य आयोजन में हिन्दुस्तानी भाषा भारती पत्रिका के नवीनतम नेपाली विशेषांक का विमोचन भी किया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि मॉरीशस गणराज्य के राजदूत श्री जगदीश्वर गोवर्धन थे लेकिन मॉरीशस सरकार के मंत्री समूह के आगमन के कारण समारोह में उपस्थित नहीं हो सके। उनके प्रतिनिधि के रूप में दूतावास के प्रथम सचिव श्री उमेश सुखमनी जी उपस्थित हुए। विशिष्ट अतिथियों में डॉ. सच्चिदानंद जोशी, सदस्य सचिव-इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, श्री होम प्रसाद लुइटेल, सांस्कृतिक सलाहकार, नेपाल दूतावास और उमाकांत आचार्य थे। स्वागत वक्तव्य डॉ. रमेश चन्द्र गौड़, विभागाध्यक्ष, कलानिधि ने दिया । नेपाल से 'हिमालिनी' पत्रिका की संपादिका और प्रसिद्ध कवयित्री सुश्री श्वेता जी और पत्रिका के अध्यक्ष श्री सच्चिदानंद मिश्रा भी उपस्थित थे। कार्यक्रम का सफल संचालन श्री धनेश द्विवेदी ने किया। श्री राजकुमार जी ने बड़े प्रभावशाली अंदाज में अनुवादक की भूमिका पर सारगर्भित विचार रखते हुए खास मोहक अंदाज में पुस्तक की एक कविता का दोनों भाषाओं में काव्यपाठ किया।

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक जी ने अतिथिजनों का पुष्पगुच्छ और स्मृति चिह्न देकर स्वागत व अभिनंदन किया। पुस्तक लोकार्पण एवं परिचर्चा के इस शुभ अवसर पर अकादमी के सदस्यों सहित दिल्ली, गुरुग्राम, गाजियाबाद, नोयडा के शिक्षकगण, साहित्यिकारों के साथ-साथ नेपाल से भी काफी लोग पधारे। जिनमें प्रमुख डॉ. अशोक कुमार ज्योति, सचिव, सुलभ साहित्य अकादमी, कवि एवम् गीतकार श्री राम लोचन, कर्नल श्री प्रवीण त्रिपाठी, सुश्री मीनू त्रिपाठी, सुश्री यति शर्मा उपस्थित थे।

डॉ मुक्ता (पूर्व निदेशक हरियाणा हिन्दी अकादमी), सुरेखा शर्मा, लाडो कटारिया (प्रसिद्ध कवयित्री) सुश्री सरोज शर्मा जी, सरोज गुप्ता, कृष्णा जैमिनी, डॉ. विदूषी शर्मा, सुषमा भंडारी, सुश्री राज वर्मा, नीरू मोहन, डॉ. बीना राघव, विजय शर्मा, श्री भूपेन्द्र सेठी, राजकुमार श्रेष्ठ, विजय कुमार राय, डॉ. धनेश द्विवेदी, श्री हामिद खान, डॉ. रवि शर्मा, सुश्री इंदु मिश्रा, सुश्री सुखवर्षा, शिक्षक प्रकोष्ठ प्रभारी सुश्री सरिता गुप्ता सहित बड़ी संख्या में गणमान्य व्यक्तियों ने समारोह की शोभा बढ़ाई।

रिपोर्ट

पुस्तक लोकार्पण एवं काव्योत्सव सम्पन्नः

विचार गोष्ठी : शिक्षा का माध्यम और संस्कृति

सुषमा भण्डारी
सलाहकार

विश्व पुस्तक मेला, प्रगति मैदान, नई दिल्ली ।

8 जनवरी 2019 को विश्व पुस्तक मेले, प्रगति मैदान, नई दिल्ली में हॉल नं. आठ के सेमिनार भवन में हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के सौजन्य से दो पुस्तकों का लोकार्पण एवं संगोष्ठी का आयोजन संपन्न हुआ। डॉ. रवि शर्मा के निबंध संग्रह 'चिंतन के साहित्यिक रंग' और सोनिया प्रियदर्शिनी के कहानी संग्रह 'चॉकलेटी चेहरे' का विमोचन डॉ. बी. एल. गौड़ जी की अध्यक्षता में, डॉ. हरी सिंह पाल, श्री सुधाकर पाठक और श्री परमानंद पांचाल जी के कर-कमलों द्वारा हुआ। सुश्री वीणा अग्रवाल के सरस्वती वंदना गायन और अतिथिजनों के शॉल और पुष्प गुच्छ से स्वागत अभिनंदन से कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ। सोनिया जी और रवि शर्मा जी ने अपने लेखन कला-कौशल और पुस्तकों के बारे में विचार रखे। डॉ. हरि सिंह पाल ने बताया कि डॉ. रवि जी की पुस्तक हिन्दी की महान विभूतियों यथा रामचंद्र शुक्ल, हजारी प्रसाद द्विवेदी आदि पर शोधपरक निबंध हैं जो स्नातक और शोधार्थियों के लिए बहुत उपयोगी हैं। सुधाकर पाठक जी ने शिक्षण का माध्यम और संस्कृति विषय पर बोलते हुए कहा कि भाषा अपने परिवेश को व्यक्त करती है जो जिस परिवेश का होता है, वहाँ वही भाषा लागू होनी चाहिए तभी समुचित विकास संभव है। अपनी संस्कृति को अपनी भाषा से ही भली-भाँति जाना जा सकता है। अभिज्ञान शाकुंतलम अंग्रेजी में पढ़ाया जाए तो अधकचरा ज्ञान ही पल्ले पड़ेगा।

इस अवसर पर गुरुग्राम और दिल्ली से आए कवि-कवयित्रियों ने काव्यपाठ भी प्रस्तुत किए। इस अवसर पर अकादमी की ओर से श्री विजय शर्मा, श्री हामिद खान, श्री भूपेंद्र सेठी, श्री विजय कुमार राय, डॉ. विदुषी शर्मा, सुश्री मोनिका शर्मा, सुश्री चंद्रमणि सहित कई वरिष्ठ सदस्य उपस्थित थे। मंच संचालन का दायित्व डॉ. बीना राघव और सरोज शर्मा ने बखूबी निभाया।

यदि आप मुझे कुछ देना चाहते हो तो इस पाठशाला की शिक्षा का माध्यम हमारी मातृभाषा कर दें ।

''हिन्दी द्वारा सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है ।''
- स्वामी दयानन्द

रिपोर्ट

विश्व हिन्दी दिवस पर पुस्तक लोकार्पण समारोह एवं

संगोष्ठी : हिन्दी समाचार माध्यमों में भाषा की स्थिति

बीना राघव
सलाहकार

विश्व पुस्तक मेला, प्रगति मैदान, नई दिल्ली ।

दिनांक 10 जनवरी 2019 को विश्व पुस्तक मेले के सेमिनार भवन में विश्व हिन्दी दिवस के अवसर पर एक संगोष्ठी विषय: हिन्दी समाचार माध्यमों में भाषा की स्थिति का आयोजन किया गया । इस अवसर पर हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी द्वारा प्रकाशित डॉ. बीना राघव की पुस्तक 'काव्य के सप्तरंग' का लोकार्पण भी संपन्न हुआ। कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. मुक्ता, वरिष्ठ साहित्यकार एवं पूर्व निदेशिका हरियाणा साहित्य अकादमी ने की। मुख्य अतिथि डॉ. सच्चिदानंद जोशी, सदस्य सचिव-इंदिरा गाँधी कला केंद्र एवं प्रो. अवनीश कुमार, अध्यक्ष वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग, विज्ञान लेखिका शुभ्रता मिश्रा (गोआ), वरिष्ठ साहित्यकार घमंडीलाल अग्रवाल और हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के अध्यक्ष, श्री सुधाकर पाठक विशिष्ट अतिथि के रूप में मंचासीन थे। मोनिका शर्मा के सरस्वती वंदना गायन एवं अतिथियों के शॉल, स्मृति भेंट स्वागत सम्मान से कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ। पुस्तक की समीक्षा डॉ. घमंडीलाल जी ने करते हुए कहा कि यह पुस्तक काव्य की सात विधाओं को अपने में समेटे है, जैसे छंदमुक्त, दोहे, मुक्तक, हाइकु, ताँका, गीत और गजल। इनका व्याकरण विधान भी इसमें दिया गया है जो कि जिज्ञासु लोग इस कृति से बहुत कुछ पा सकते है।

वक्ताओं ने समाचार-पत्रों और इलैक्ट्रोनिक मीडिया में हिन्दी के समुचित प्रयोग पर बल देते हुए कहा कि किसी और भाषा में अन्य भाषणों के शब्द नहीं मिलाए जाते तो फिर हिन्दी में ही क्यों? भाषा की शुद्धता पर ध्यान दिया जाना चाहिए। सभी वक्ताओं ने एक स्वर से हिन्दी समाचार पत्रों में अंग्रेजी के वाक्यशों और शब्दों और रोमन लिपि के प्रयोग पर कड़ी आपत्ति दर्ज की, साथ ही भविष्य में इसके लिए उचित रणनीति बनाने की बात भी कही।

सभा में साहित्यिकारों का सम्मान किया गया और सर्वश्री अनिमेष शर्मा, सुनील कुमार, डॉ. तारा गुप्ता, तरूणा पुंढीर, लता यादव आदि साहित्यिकारों ने काव्यपाठ किया। इस अवसर पर गुड़गाँव, दिल्ली, नोएडा और गाजियाबाद से बड़ी संख्या में साहित्यकार और भाषा प्रेमी उपस्थित थे। गृह मंत्रालय में कार्यरत सुजीत कुमार, वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. सुरेश वशिष्ठ, डॉ. रवि शर्मा, श्री विजय कुमार शर्मा, सुनील कुमार, सीमा सिंह, डॉ. ममता आशुतोष, लाडो कटारिया, सविता स्याल, कृष्णलता यादव, लता यादव, सरोज गुप्ता, सरोज शर्मा, हामिद खान, भूपिंदर सेठी, इंदू मिश्रा, मंजीत कौर, राधा शर्मा, राजकुमार श्रेष्ठ आदि साहित्यकारों ने उपस्थित रहकर कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई। कार्यक्रम का सफल संचालन अकादमी की सलाहकार सुश्री सरोज शर्मा ने किया ।

संस्मरण

'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह'

सम्मानित होकर गौरवान्वित हैं हमारे छात्र

'एक दिन का पर्व नहीं मैं तो युगों का गर्व हूँ,
बचपन की किलकारी से मां की लोरी तक,
अलौकिक प्रेम के अनकहे शब्द हूँ।
मां की चिंता हूँ ,पिता का दुलार हूँ,
भाई का आश्वासन ,बहन का संसार हूँ।
मैं एक भाषा नही मैं तो एक परिवार हूँ।'

जी हाँ 'हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी' द्वारा 3 फरवरी 2019 को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र दिल्ली में मानो हिन्दी प्रेमियों के पारिवारिक उत्सव के रूप में मेधावी छात्र व शिक्षक सम्मान 2019 का भव्य आयोजन किया गया, जिसमें फिजी गणराज्य के महामहिम राजदूत ने विशिष्ट अथिति के रूप में सम्मिलित होकर कार्यक्रम को चार चांद लगा दिए । इसके अतिरिक्त हिन्दी साहित्य जगत के जाने-माने हस्ताक्षर अशोक चक्रधर जैसे दस श्रेष्ठ साहित्यकारों ने मंच की गरिमा बढ़ाई। अकादमी द्वारा दिल्ली के डेढ़ सौ विद्यालयों के लगभग एक हजार सात सौ पच्चीस छात्रों व उनके तीन सौ शिक्षकों को कक्षा दसवीं में हिन्दी विषय में 90% या उससे अधिक अंक प्राप्त करने पर सम्मानित करने का विचार निश्चित तौर पर सराहनीय व उल्लेनीय है।

मैं दिल्ली के एक निजी विद्यालय 'समर फील्ड्स विद्यालय' में पढ़ाती हूँ जहाँ हिन्दी को द्वितीय भाषा का दर्जा दिया जाता है। हमारे विद्यालय के लिए इस कार्यक्रम का हिस्सा बनने का यह प्रथम अवसर था। हमारे सभी छात्रों का पंजीकरण नहीं हो पाया परंतु 25 छात्रों का नाम सम्मिलित हो सका जिनमें से वार्षिक परीक्षा के चलते केवल 5 छात्र कार्यक्रम में सम्मिलित हो सके। मैंने अनुभव किया कि सम्मिलित होने वाले छात्रों में एक अलग ही उत्साह था और इस उपलब्धि पर गर्व का भाव। यहाँ तक कि वे हिन्दी भाषा के कारण मिलने वाले इस सम्मान के लिए मानो हिन्दी विषय व अपनी अध्यापिकाओं के प्रति आभार व्यक्त करते दिखे और भविष्य में हिन्दी विषय के रूप में न पढ़ पाने का मलाल भी उनकी बातों में दिखा। अन्य विद्यार्थी जो वार्षिक परीक्षा के कारण समारोह में सम्मिलित नहीं हो पाए थे वे भी विद्यालय प्रांगण में सम्मान पाकर स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर रहे थे। अत: मैं तो पूर्ण विश्वास के साथ यह कह सकती हूँ कि 'हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी' का यह कदम न केवल विद्यार्थियों में हिन्दी के प्रति सम्मान का भाव जागृत कर रहा है वरन अध्यापकों को भी विद्यालय समिति व छात्रों की दृष्टि में आधिकारिक स्थान दिलाने में सफल हुआ है और यही नहीं हिन्दी विषय को एक अलग स्तर पर ले जाने में सहायक भी सिद्ध हुआ है। अन्य विषयों के अध्यापकों में भी ऐसा सम्मान प्राप्त करने की इच्छा ने हम हिन्दी अध्यापकों के मन को गर्व से भर दिया।

'हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी' के अध्यक्ष श्री सुधाकर पाठक जी, सदस्य राजकुमार श्रेष्ठ जी और अन्य सदस्यों के सहज और सरल स्वभाव ने मुझे आरम्भ से ही आकृष्ट किया है। इतने महान उद्देश्य को लेकर चलने वाली संस्था यदि सफलता के शिखर चूम रही है तो उसका श्रेय नेतृत्व की विनम्रता को ही जाता है। जिस कारण देश ही नहीं विदेश के हिन्दी प्रेमी भी इस संस्था से जुड़ रहे हैं । मुझे विश्वास है संस्था अपने उद्देश्य, हिन्दी को राष्ट्रभाषा का दर्जा दिलाने में अवश्य सफल होगी। मंच से श्री वेद प्रताप वैदिक जी द्वारा हिन्दी में हस्ताक्षर अभियान, सच्चिदानंद जोशी जी द्वारा हिन्दी को रोजगार की भाषा बनाने पर बल, फिजी गणराज्य के महामहिम द्वारा फिजी में हिन्दी का स्थान और अशोक चक्रधर जी द्वारा हिन्दी को मन की अभिव्यक्ति का माध्यम और बच्चों, अध्यापकों और अभिभावकों को हास्य कविता द्वारा गुदगुदा कर जो प्रेरणादायक वातावरण तैयार किया गया वह अपने आप में अद्‌भुत था।

तरुणा पुण्डीर

कार्यक्रम की व्यवस्था की बात करें तो 'अद्‌भुत' शब्द शायद ऊँट के मुँह में जीरा मात्र होगा। विद्यार्थियों, अध्यापकों और अभिभावकों के जन सैलाब को जिस कुशलता व धैर्य के साथ बाँधा गया, उनके बैठने, भोजन आदि की व्यवस्था, पुरस्कार वितरण की सुचारू व्यवस्था, मुख्य अथितियों का चुनाव व सम्मान, उनके प्रेरणादायक वक्तव्य और नेपथ्य में अध्यक्ष महोदय का संयम ही शायद सदस्यों के लिए प्रेरणास्रोत बन कर कार्यक्रम को सफलता की ऊंचाइयों तक ले गया। अध्यक्ष महोदय के व्यक्तित्व का चुम्बकीय प्रभाव ही है या उनकी पैनी नजर कि कार्यक्रम के संचालन से लेकर विद्यार्थियों के मंच पर आकर पुरुस्कार ग्रहण करने तक की सभी गतिविधियों के लिए जिन लोगों का चुनाव उन्होंने किया वे भी कसौटी पर शत प्रतिशत उतरे। मैं तो मंत्रमुग्ध होकर कार्यक्रम की व्यवस्था को देखती रह गई, हमारे विद्यालय का क्रमांक बहुत पीछे होने पर भी मुझे प्रतीक्षा करना दुरूह नहीं लगा और एक बात जिसने बहुत अधिक प्रभावित किया वो यह कि अक्सर ऐसे कार्यक्रमों में लोग अपनी पहचान के बल पर कह कर अपना क्रमांक आगे बढ़वा लेते हैं परंतु पाठक जी जो मुख्य अतिथियों के प्रति अपना कर्तव्य निभाते हुए भी चौकन्ने थे कि इस प्रकार की अव्यवस्था न हो और किसी के साथ अन्याय न हो, उनकी इस ईमानदारी से मेरा मन उनके प्रति नतमस्तक हो गया।

यह योजना निश्चित रूप से छात्रों और अध्यापकों के लिए लाभकारी ही नहीं अपितु प्रेरणा सिंधु है। विद्यालय में भी इन विद्यार्थियों और शिक्षकों को पूरे विद्यालय के समक्ष सम्मानित किए जाने से अन्य विद्यार्थियों में भी अधिक अंक लाने की लगन व विषय के प्रति रुझान इसी से प्रमाणित होता है कि पिछले वर्ष सम्मान प्राप्त करने वाले छात्रों की जो संख्या 25 थी वह इस वर्ष बढ़ कर 100 से अधिक हो गई है।

हमारी प्रधानाचार्या महोदय श्रीमती डॉ. नीरू सुमन जी द्वारा भी छात्रों और अध्यापकों को बधाई दी गई और भविष्य के लिए शुभकामनाएं दी गई।

'इस मशाल की लौ से रोशन होगा हिन्दुस्तान
आज नहीं तो कल मिलेगी हिन्दी को उसकी पहचान।'

-तरुणा पुण्डीर 'तरुनिल'
समर फील्ड्स विद्यालय
कैलाश कॉलोनी, नई दिल्ली

संस्मरण

'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह'

संकल्प से ही कार्यसिद्धि सम्भव है...

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी की ओर से 03 फरवरी 2019 को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के प्रांगण में एक भव्य समारोह का आयोजन किया गया, जिसमें दिल्ली के लगभग 150 स्कूलों के लगभग 1700 छात्रों तथा 300 शिक्षकों को सम्मानित किया गया। यह एक अद्‌भुत समारोह था । लग रहा था जैसे कोई उत्सव मनाया जा रहा है। प्रात: नौ बजे से बच्चे अपने माता-पिता और शिक्षकों के साथ आयोजन स्थल पर उपस्थित हो गये थे। सभी उत्साहित थे। सभी के मुख पर उत्सुकता उगते सूरज की सी लालिमा चमक रही थी। यह एक ऐतिहासिक आयोजन था, इससे पहले इतनी बड़ी संख्या में एक साथ कहीं भी, किसी का भी सम्मान करते हुए नहीं देखा था। मैं विद्या विहार विद्यालय में पिछले पंद्रह सालों से दसवीं कक्षा के छात्रों की हिन्दी की अध्यापिका हूं। लेकिन कभी भी किसी संस्था ने इस तरह हिन्दी के छात्रों को न सम्मानित किया और न ही कोई प्रोत्साहन दिया। दो हजार पांच तक हिन्दी और संस्कृत अकादमी के द्वारा बच्चों को नब्बे अंक प्राप्त करने पर सौ रुपए की प्रोत्साहन राशि दी जाती थी, लेकिन अब वह भी बंद हो गई। जब शिक्षक प्रकोष्ठ से जुड़ी तब ज्ञात हुआ कि हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी ने हिन्दी में बच्चों को आगे बढ़ाने का सराहनीय कदम उठाए हैं। मेरे विद्यालय से चार छात्रों को पुरस्कृत किया गया। यहां हिन्दी का सम्मान होना था, मंद-मंद ध्वनि में हिन्दी गौरव से भरा एक गीत वातावरण को संगीतमय कर रहा था। मुख्य अतिथि के रूप में फिजी गणराज्य के राजदूत महामहिम योगेश पुंजा जी तथा साथ में डॉ. सच्चिदानंद जोशी जी तथा अन्य कई गणमान्य लोग उपस्थित रहे। जिनका सान्निध्य पाना ही गौरव की बात है, उनके करकमलों से दसवीं बोर्ड परीक्षा में हिन्दी विषय में सौ में से सौ अंक प्राप्त करने वाले छात्रों को भाषा प्रहरी सम्मान 2018 से नवाजा गया। मैडल, प्रमाण पत्र और नगद राशि के साथ प्रतीक चिह्न देकर छात्रों का उत्साहवर्धन किया गया। बहुत ही गौरव की बात है कि इस सम्मान को पाने वाले छात्रों की संख्या लगभग आधा शतक थी। सच में बहुत बधाई के पात्र हैं वे बच्चे जिन्हें यह सम्मान दिया गया। जिन छात्रों ने नब्बे प्रतिशत अंक या उससे अधिक अंक प्राप्त किए उन्हें भाषा दूत सम्मान 2018 से सम्मानित किया गया।

इस उत्सव में शामिल हुए अन्य बच्चों ने भी संकल्प लिया कि अगले वर्ष वे भी इस मंच पर आकर पुरस्कार ग्रहण करेंगे। मेरे साथ सभी अभिभावक भी बहुत खुश थे। सचिन प्रजापति जो पिचानवे अंक लेने पर कार्यक्रम में शामिल हुआ था, उसके पिता ने कहा- 'मैं आज यहां यह देखकर बहुत खुश हूं कि अपने देश में हिन्दी के लिए इतना बड़ा काम किया जा रहा है। मैं तो यह कहूंगा कि ऐसे कार्यक्रम देश के कोने-कोने में होने चाहिए।' जब बच्चों ने विद्यालय में जाकर अपने प्रमाण-पत्र और मैडल दिखाए, तब प्रधानाध्यापक जी ने भी छात्रों को हिन्दी पढ़ने और अधिक से अधिक अंक लाने के लिए प्रेरित किया। हमारा सौभाग्य रहा कि हमें भी इस महायज्ञ में अंजुली भर आहुति देने का अवसर मिला। हम चाहते हैं कि संस्था के द्वारा हिन्दी भाषा में बच्चों की रुचि को बढ़ावा देने के लिए कुछ अन्य कार्यक्रमों की योजना भी बनाई जाए। जैसे- लेखन प्रतियोगिता, कविता पाठन, लेखन, वाचन, कहानी लेखन, निबंध लेखन, आशु भाषण, संस्मरण लेखन आदि। हर बच्चे के अंदर कुछ प्रतिभाएं जन्मजात होती हैं। समय रहते उन्हें पहचानने का और मार्गदर्शन करने का काम एक अध्यापक जितनी बखूबी से कर सकता है अन्य कोई नहीं।

सरिता गुप्ता

आज के व्यस्त दौर में माता-पिता ही अपने बच्चों को नहीं समझ पाते। एक अध्यापिका होने के साथ-साथ मैं एक लेखिका भी हूं, समय-समय पर बच्चों को पाठ्यक्रम से हटकर कुछ क्रिया-कलाप कराती रहती हूं। उन गतिविधियों के दौरान मैं महसूस करती हूं कोई छात्र बहुत अच्छा भाषण देने में कुशल है तो कोई जन्मजात कवि नजर आता है। कोई लेखन अच्छा करता है तो कोई प्रस्तुति देने में सक्षम है। आज जो बच्चे अंग्रेजी भाषा को लेकर एक मकड़ जाल में फंसे हुए हैं उनका पथ प्रशस्त करना बहुत जरूरी है। हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी की तरफ से शुरुआत हो चुकी है। हम सबको एकजुट होकर इस अलख को जगाए रखना है । अपने आप से हम एक वादा करें कि अधिक से अधिक हिन्दी भाषा में बात करेंगे और दूसरों को भी प्रेरित करेंगे। अगर हम दृढ़ संकल्प के साथ रहेंगे तो निश्चित रूप से यह गंगधार एक दिन सागर बन जाएगी, जिसे अंग्रेजी भाषा का तपता सूरज कभी नहीं सुखा पाएगा।

हम सब मिलकर संकल्प करें, क्योंकि मंजिल पर चलने से पहले चलने का संकल्प जरुरी है ।

सरिता गुप्ता
शिक्षक प्रकोष्ठ संयोजिका
शिक्षिका, विद्या विहार विद्यालय
लेखिका, कवयित्री
दिल्ली

संस्मरण

'मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह'

आत्मविश्वास बढ़ाने के लिए प्रोत्साहन आवश्यक है...

3 फरवरी 2019 सुबह का समय दिल्ली की सड़कों पर गाड़ी गूगल के सहारे सरपट दौड़ी चली जा रही थी । यह गूगल भी क्या चीज है ना पूछने की जरूरत, ना इधर-उधर देखने की जरूरत। अपनी मंजिल तक सीधे ही पहुंच जाओ पर कभी इस गूगल के भरोसे ने ऐसी गलियों में फँसाया भी है जहाँ से निकलने में दाँतों तले पसीना भी आ गया । इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के द्वार पर खड़े सुरक्षाकर्मियों को बस इतना ही बताया कि हिन्दी के कार्यक्रम में जाना है । वे भी पहले से अतिथियों के आगमन के लिए तैयार थे । भव्य आयोजन की शुरुआत, वो भी हिन्दी के विद्यार्थियों व शिक्षकों के लिए । अब तक जिस भाषा को वरीयता क्रम में सबसे निचले स्तर पर रखा जाता था । हिन्दुस्तान की अपनी भाषा होते हुए भी जो पराई थी वो आज सम्मान की अधिकारिणी भी बनेगी, ऐसा सोच से परे था । जिन हिन्दी के पहरेदारों ने अंग्रेजियत के आगे घुटने टेक दिए थे वो आज इन लम्हों के चश्मदीद गवाह थे । सुधाकर पाठक जी के अथक प्रयासों ने देश दुनिया में हिन्दी के प्रति जो अलख जगाई है यह कार्यक्रम उसकी परिणति है ।

कार्यक्रम सुबह जल्दी शुरू होना था, पूरी कोशिश थी कि समय पर ही पहुंचा जाए । ठीक सात बजे गाड़ी लगा दी । सोच रही थी आज समय से पूर्व पहुंच गई हूँ पर जैसे ही गाड़ी से बाहर निकली तो सामने बच्चों और उनके माता-पिताओं की भीड़ देखी। भीड़ को देखने से ही एहसास हो रहा था कि लोगों में इस कार्यक्रम के प्रति कितना उत्साह है। वहां जाते ही सब से मिलने की कोशिश की और फिर सुधाकर जी की अनुमति से नामांकन की जिम्मेदारी संभाल ली । लोगों की भीड़ ने मुझे इस कदर घेर लिया कि मुझे सहयोगियों का साथ लेना पड़ा । चाहे वह बच्चा हो, माता-पिता हो या विद्यालय के शिक्षक सभी का उत्साह देखते बनता था । नामांकन की प्रक्रिया पूरी होते ही कार्यक्रम के प्रारंभ होने की घोषणा कर दी गई । मंच संचालन का कार्य श्री सतेंद्र दहिया जी ने संभाला । सत्येंद्र जी के मंच संचालन को देख के लगता था मानो वे मंच के लिए ही बने हैं । पंडाल खचाखच भरा था किंतु मंच के कुशल संचालक के कारण प्रारंभ से अंत तक अनुशासन बना रहा । हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के कार्यकर्ताओं के सहयोग से कार्यक्रम प्रगति की ओर बढ़ रहा था । मंच के एक ओर से राजकुमार जी सभी विद्यालयों की अध्यापिकाओं को मेडल और प्रमाण पकड़ा रहे थे जिससे मंच पर आने से पूर्व ही बच्चे गले में मेडल पहन ले । जैसे ही वह मेडल बच्चों के हाथ में जाते ,पहले तो वे उसे उलट-पुलट कर देखते और फिर उन मेडल को गले में पहन कर नन्हे-नन्हे हाथों से हर थोड़ी देर में उसे देखते और फिर नीचे को लटकाकर ऐसे अकड़ते जैसे कोई जंग कर आए हो । कार्यक्रम की शोभा का वह मंच था जहां सौ प्रतिशत अंक प्राप्त करने वाले सभी बच्चों को बैठाया गया था। वह मंच विशेष रूप से उन्हीं बच्चों के लिए ही बनाया गया था और वह बच्चे मंच पर ऐसे बैठे थे जैसे सभासदों के बीच में कोई राजा बैठा हो ।

सोनिया अरोड़ा

वास्तव में वो उस सम्मान के अधिकारी भी थे । मुख्य अतिथि व अन्य गणमान्य अतिथियों के आते ही कार्यक्रम को शुरू किया गया । मुख्य अतिथि फिजी गणराज्य के राजदूत महामहिम योगेश पुंजा जी थे । सामान्य औपचारिकताओं के बाद सर्वप्रथम दिल्ली प्रदेश में 10वीं के बोर्ड परीक्षा में 90 प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त करने वाले सर्वाधिक प्रविष्टि (109 विद्यार्थियों) के लिए बाल भारती पब्लिक स्कूल, पीतमपुरा को 'भाषा रत्न सम्मान' से नवाजा गया । एक हल्की सी आशा की किरण मन में फूट रही थी कि अगले साल यही सम्मान मेरे विद्यालय को मिले । उसके बाद शत प्रतिशत अंक प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को उनके विद्यालय की हिन्दी अध्यापिकाओं व माता पिता के साथ 'भाषा प्रहरी सम्मान-2018' पुरस्कार के लिए मंच पर बुलाया गया । कार्यक्रम बहुत चुस्ती से आगे बढ़ता गया और फिर एक-एक करके मंच पर 90 प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को 'भाषा दूत सम्मान-2018' से सम्मानित करने के लिए उनके हिन्दी शिक्षकों के साथ बुलाया गया ।

कार्यक्रम के बीच में भोजन व्यवस्था की घोषणा की गई । आने वाले सभी मेहमानों को मिलने वाली सुविधाओं व सम्मान में किसी प्रकार की कोई कमी ना रह जाए इसके लिए सभी कार्यकर्ता पूरी मुस्तैदी के साथ खड़े थे । हर इंसान जानना चाह रहा था कि यह कार्यक्रम जो कभी हिन्दी अकादमी के द्वारा किया जाता था आज किस संस्था के द्वारा किया जा रहा है ? यह संस्था कब बनी ? कौन इसके संस्थापक है ? ऐसे बहुत से प्रश्नों के उत्तर लोग जानना चाह रहे थे क्योंकि अभी तक इतनी बड़ी संख्या में किसी भी संस्था में हिन्दी के लिए इतने सुंदर कार्यक्रम की योजना नहीं बनाई थी । कार्यक्रम पूर्णता की ओर बढ़ रहा था पर किसी में भी कार्यक्रम के पूर्ण होने से पहले ही भागने की हड़बड़ी न थी । कुछ बच्चे समूह बनाकर पंडाल के बाहर बैठे थे । कोई भोजन कर रहा था तो कोई सर्दी की धूप का आनंद ले रहा था और इस आशा से कि आगामी वर्षों में हिन्दी के प्रति बच्चों का रुझान बढ़ाने के लिए इसी प्रकार के कार्यक्रम हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी द्वारा आयोजित किए जाते रहेंगे ।सुधारक जी के धन्यवाद ज्ञापन के साथ ही कार्यक्रम समाप्ति की घोषणा की गई । अंत में सभी कार्यकर्ताओं को बुलाकर अलग से धन्यवाद देते हुए एक सम्मिलित चित्र उतरवाया गया जो इन यादगार पलों को सालों साल अपने में समेटे रहेगा ।

-सोनिया अरोड़ा
शिक्षिका, आदर्श पब्लिक स्कूल
विकासपुरी, नई दिल्ली

मेधावी छात्र एवं शिक्षक सम्मान समारोह

RNI No. : DELHIN/2017/73904

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी

(भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार और संवर्धन को समर्पित संस्था)

पंजीकृत कार्यालय : 3675, राजा पार्क, रानी बाग, दिल्ली-110034

दूरभाष : 09873556781, 09968097816

E-mail : info@hindustanibhashaakadami.com
hindustanibhashabharati@gmail.com
Website : www.hindustanibhashaakadami.com